डॉ0 शर्मीला डाली कुद्दूसी

डॉ० शर्मीला डॉली कुद्दूसी

सहारनपुर में जन्मी शर्मीला डॉली कुद्दूसी की आरम्भिक शिक्षा मॉडर्न स्कूल नैनीताल में और माध्यमिक शिक्षा राजकीय कन्या इन्टर कालेज पेजवद में। १९७८ में हाईस्कूल परीक्षा प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण कर आपने १९७९ में इण्टर १९८२ में बी० ए० आनर्स १९८३ में बी० डी० ए० (वाणिज्य) १९८४ में बी० एड० १९८८ में एम० एड० करने के बाद अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय से १९९० में हिन्दी में प्रथम श्रेणी में एम०ए० की उपाधि प्राप्त की, १९९५ में वहीं से एम० फिल० की भी उपाधि हिन्दी में प्राप्त करने के बाद सन १९९८ में अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय से पी० एच डी० की उपाधि ससम्मान प्राप्त की। प्रतिष्ठित कुद्दूसी सूफी परंपरा में जन्मी श्रीमती डा० शर्मीला डॉली कुद्दूसी आधुनिक हिन्दी साहित्य की स्वच्छन्दतावादी काव्यधारा की प्रातिभ अध्येता हैं।

उनके सद्य प्रकाशित ग्रंथों– स्वच्छन्दतावादी समीक्षा नये आयाम और ददराज उपाध्याय की स्वच्छन्दतावादी समीक्षा–दृष्टि से उनके विशद अध्ययन की सरणियाँ उद्‌घाटित होती हैं।

देवराज उपाध्याय की स्वच्छन्दतावादी समीक्षा-दृष्टि

देवराज उपाध्याय की स्वच्छन्दतावादी समीक्षा-दृष्टि

देवराज उपाध्याय की स्वच्छन्दतावादी समीक्षा-दृष्टि

डॉ० शर्मीला डॉली कुद्दूसी

हिन्दुस्तानी एकेडेमी, इलाहाबाद

प्रकाशक	हिन्दुस्तानी एकेडेमी
	१२ डी कमला नेहरू मार्ग
	इलाहाबाद—२११००१
	दूरभाष ६००६२५
सस्करण	प्रथम (२००० ई०) प्रतियॉ—५००
मूल्य	१८० ०० रुपये
मुद्रक	शाकुन्तल आफसेट
	३४ बलरामपुर हाउस इलाहाबाद

समपर्ण

हिन्दी साहित्य एव भाषा चयन के
प्रेरणास्त्रोत
स्व० पिता मसरूर उलहक कुददूसी
एव
माता श्रीमती जकिया कुद्दूसी को
सादर समर्पित

प्रकाशकीय

स्वर्गीय डॉ० देवराज उपाध्याय ने रोमाटिक साहित्य शास्त्र का प्रणयन करके हिन्दी समीक्षा को समृद्ध किया था। एक तात्त्विक चिन्तक विचारक और सुलेखक के रूप मे उपाध्यायजी को साहित्य जगत मे विशेष सम्मान प्राप्त था। हिन्दुस्तानी एकेडेमी श्रीमती शर्मीला डॉली कुद्दूसी लिखित ग्रन्थ डॉ० देवराज उपाध्याय की स्वच्छन्दतावादी समीक्षा दृष्टि का प्रकाशन उन्ही के उदार सहयोग से कर रही है। एकेडेमी अलीगढ विश्वविद्यालय के प्रोफेसर डॉ० अजब सिह के प्रति आभार व्यक्त करती है जिन्होने अपनी सस्तुति प्रदान करके इस ग्रथ को हिन्दुस्तानी एकेडेमी द्वारा प्रकाशित किये जाने मे सहयोग प्रदान किया है।

विश्वास है कि स्वच्छन्दतावादी काव्य दृष्टि और स्वर्गीय डॉ० उपाध्याय के समीक्षा सिद्धान्त के प्रति जिज्ञासा रखनेवाले अध्येताओ को इस ग्रथ के माध्यम से उस मनीषी के साहित्य चिन्तन का बोध होगा जिसने हिन्दी स्वच्छन्दतावादी साहित्य के भावक के रूप मे ऐसी उद्भावनाएँ एव स्थापनाएँ की जिनसे इस काव्य धारा का मर्म समझने मे पाठको और विशिष्ट अध्येताओ दोनो को प्रचुर सहायता मिली और आगे भी मिलती रहेगी।

महेन्द्र प्रताप
सचिव तथा कोषाध्यक्ष
हिन्दुस्तानी एकेडेमी इलाहाबाद

दो शब्द

मुझे अत्यन्त प्रसन्नता है कि अलीगढ मुस्लिम विश्वविद्यालय अलीगढ हिन्दी विभाग की प्राध्यापिका डॉ० शर्मीला डॉली कुद्दूसी की पुस्तक डॉ० देवराज उपाध्याय की स्वच्छन्दतावादी समीक्षा दृष्टि देश की महत्त्वपूर्ण साहित्यिक सस्था हिन्दुस्तानी एकेडमी इलाहाबाद से प्रकाशित हो रही है। इस ग्रन्थ के निर्माण मे विदुषी लेखिका ने परिश्रम से देश विदेश की साहित्यिक कलात्मक चेतना को समेटकर एक नये चिन्तन बोध को विश्लेषित एव अन्वेषित किया है। यह अन्वेषण एव विश्लेषण साहित्यिक कलात्मक चेतना के विकास मे एक महत्त्वपूर्ण दस्तावेज है। इस प्रयास के लिऐ विदुषी लेखिका निश्चित ही साधुवाद की अधिकारिणी है। मुझे आशा ही नही पूर्ण विश्वास है कि इनका यह परिश्रम सर्वथा सफल होगा तथा हिन्दी साहित्यालोचन के क्षेत्र मे इस पुस्तक का हार्दिक अभिनन्दन होगा। इस पुस्तक के प्रकाशन से अग्रेजी साहित्य के उन सभी विद्यार्थियो एव शोधार्थियो को भी लाभ मिलेगा जो अग्रेजी के विशिष्ट स्वच्छन्दतावादी कवियो की चितन दृष्टि को अपनी मातृभाषा मे पढने एव समझने के साधन और सुयोग से वचित रहते है।

डॉ० शर्मीला डॉली कुद्दूसी ने पाश्चात्य रोमाटिक काव्यशास्त्रीय सिद्धान्तो को अद्यतन वैचारिकता का विषय बनाकर भारतीय एव हिन्दी साहित्य के ज्ञान भण्डार को और अधिक समृद्धिशाली बनाने का गौरवपूर्ण कार्य किया है।

मै डॉ० शर्मीला डॉली कुद्दूसी के उज्ज्वल भविष्य की कामना करते हुए यह अपेक्षा करता हूँ कि भविष्य मे भी इसी प्रकार से आलोचनात्मक चितन बिन्दुओ एव नव्य वैचारिकता से हिन्दी साहित्य ज्ञान भण्डार को और अधिक समृद्ध करने का प्रयास करेगी।

शुभकामनाओ सहित—

(प्रोफेसर एच० ए० एस० जाफरी)
उपकुलपति
अलीगढ मुस्लिम विश्वविद्यालय
अलीगढ (उ० प्र०) भारत

पुरोवाक्

डॉ० शर्मीला डॉली कुद्दूसी की पाण्डुलिपि डॉ० देवराज उपाध्याय की स्वच्छन्दतावादी समीक्षा दृष्टि देखने पढने एव परीक्षण करने का अवसर मुझे मिला है। जहॉ तक मेरी जानकारी है कि इस प्रकार का यह अपने ढग का मौलिक एव नूतन प्रयास है। लेखिका ने इसके निर्माण मे श्रम किया है और इस सम्बन्ध मे देश विदेश की उपलब्ध सामग्री का उपयोग करके इसे प्रामाणिक बनाने का प्रयत्न किया है। यह ग्रन्थ मौलिक है। इसका प्रकाशन वैश्विक समीक्षा जगत के लिए उपादेय है। ऐसे ग्रन्थ के प्रकाशन से न केवल विषय प्रतिपादन के अध्ययन का मार्ग प्रशस्त होगा वरन अनुशीलन के नये गवाक्ष भी खुलेगे। लेखिका एव विश्वविद्यालय दोनो का गौरव बढेगा। भारतीय एव पाश्चात्य स्वच्छन्दतावादी कला आन्दोलन एव पाश्चात्य स्वच्छन्दतावादी कवियो का काव्य वैभव आत्मसात करने मे यह ग्रन्थ एक उपयोगी एव उपादेय दस्तावेज है।

कुल मिलाकर मेरी सस्तुति है कि इस ग्रन्थ के प्रकाशन से वैश्विक कला जगत मे एक नवीन और मौलिक कला चिन्तन का विकास हो सकेगा। यह पहली पुस्तक होगी जिसमे पाश्चात्य स्वच्छन्दतावादी कवियो के वैशिष्टय को रेखाकित करती हुई विदुषी लेखिका ने शास्त्रीयतावादी एव स्वच्छन्दतावादी अवधारणा को स्पष्ट किया है। इसी ग्रन्थ के परिशिष्ट मे आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी का एक आलेख रोमैटिसिज्म क्या है? भी प्रस्तुत है। इससे स्वच्छन्दतावादी-अवधारणा को सम्पूर्णता मे समझने एव आत्मसात करने मे सबल मिलता है। हिन्दी मे यह ग्रन्थ अपने ढग का अनूठा एव विशिष्ट है। कुल मिलाकर मेरी सम्मति है कि इस ग्रन्थ का प्रकाशन शोध एव समीक्षा के वैश्विक शैक्षणिक जगत के लिए एक आवश्यक उपयोगी कलात्मक साधना का प्रतिफलन है।

मै ऐसी अनुपम समीक्षा कृति के लिए विदुषी लेखिका को बधाई देता हूॅ और आशा एव कामना करता हूॅ कि वे भविष्य मे इसी तरह निरन्तर अपनी समीक्षात्मक प्रतिभा के द्वारा समालोचना जगत को नयी दिशा देती रहेगी।

(प्रोफेसर अजब सिह)
अध्यक्ष हिन्दी विभाग
अलीगढ मुस्लिम विश्वविद्यालय अलीगढ

प्राक्कथन

हिन्दी साहित्य के प्रति मेरी बचपन से ही अभिरुचि रही है। यही कारण है कि हिन्दी साहित्य के प्रति मै बाल्यकाल से ही समर्पित हूँ। हिन्दी साहित्य का सर्वागीण विकास तथा ज्ञान भण्डार की समृद्धि ही मेरी महत्त्वाकाक्षा रही है।

मैं वैयक्तिक स्वतन्त्रता की पक्षपाती हूँ। इस प्रवृत्ति ने ही मुझे हिन्दी मे स्वच्छन्दतावाद की ओर आकृष्ट किया।

डॉ० देवराज उपाध्याय ने स्वच्छन्दतावादी समीक्षा को मनोवैज्ञानिक परिप्रेक्ष्य मे विश्लेषित किया और स्वच्छन्दतावादी समीक्षा को एक विशेष आयाम दिया। स्वच्छन्दतावादी अवधारणा पर आपने प्रथम पुस्तक लिखकर हिन्दी समीक्षा ससार को नया सदर्भ दिया। यही नही पाश्चात्य स्वच्छन्दतावादी कवियो की चेतना को विश्लेषित कर हिन्दी साहित्य के ज्ञान भण्डार को समृद्धिशाली बनाया। यही कारण था कि स्वच्छन्दतावादी समीक्षको मे मै डॉ० देवराज उपाध्याय की भावनाओ एव विचारो से अत्यधिक प्रभावित हुई। डॉ० देवराज उपाध्याय की पुस्तक की भूमिका के लिए डॉ० हजारीप्रसाद द्विवेदी द्वारा लिखित लेख स्वच्छन्दतावाद क्या है ? ने मुझे विशेष प्रभावित किया अतएव मैने इस ग्रन्थ के परिशिष्ट मे इस लेख को उद्धृत किया है क्योकि यह लेख हिन्दी स्वच्छन्दतावादी चेतना की आत्मा है और भविष्य मे इससे आनेवाली पीढी को उस चेतना को आत्मसात करने मे बल मिलेगा।

आज स्वच्छन्दतावादी अवधारणा को पूर्णता मे परिभाषित करना अत्यन्त कठिन सा जान पडता है। किन्तु फिर भी केवल चार शब्दो मे इसे 'सादा जीवन उच्च्च विचार कहकर आस्था प्रकट की जा सकती है। आज स्वच्छन्दतावादी अवधारणा का स्वरूप इतना व्यापक हो चुका है कि इसे परिभाषित या अभिव्यक्त करना कठिन है।

पूर्व स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियॉ स्वच्छन्दतावाद तथा नवस्वच्छन्दतावाद सब स्वच्छन्दतावादी समीक्षा के विकास के आयाम हैं। डॉ० नामवर सिह क्रातिकारी स्वच्छन्दतावाद का उल्लेख करते हैं किन्तु डॉ० अजब सिह इसे नवस्वच्छन्दतावाद की एक प्रवृत्ति मानते है। यथार्थ के साथ जब स्वच्छन्दतावादी अवधारणा का मिलन होता है तो वह नवस्वच्छन्दतावाद के रूप मे विकसित होती है किन्तु जब आध्यात्मिक चिन्तन के साथ स्वच्छन्दतावाद और यथार्थवाद का मिलन होता है तो उसका क्रान्तिकारी रूप सहजता को प्राप्त होता है और मेरे विचार से इसे 'सहज क्रान्तिकारी नवस्वच्छन्दतावाद का नाम दिया जाना चाहिए। मै डॉ० नामवर सिह के विचार से पूर्णतया सहमत हूँ कि स्वच्छन्दतावाद अन्तर्राष्ट्रीय विचारधारा है तथा इसे रोमैण्टिसिज्म नही रोमैण्टिसिज्म्स अर्थात बहुवचन कहना चाहिए किन्तु डॉ० हजारीप्रसाद इसे 'सम्पूर्ण युग की चेतना और विचार सघर्ष की सुन्दर कलात्मक अभिव्यक्ति बताकर इसे वैश्विक स्तर पर विश्लेषित करते हुए इसका क्षेत्र अत्यन्त व्यापक कर देते हैं। जहॉ तक मेरा अपना विचार है मैं इसे सम्पूर्ण एव व्यापक विचारधारा मानती

हूँ। जब हम स्वच्छन्दतावाद को आध्यात्मिकता से जोडते है तो फिर उसे केवल अन्तर्राष्ट्रीय अथवा वैश्विक विचारधारा मान लेना इसके असीमित क्षेत्र को सीमित कर देना है और यह स्वच्छन्दतावाद के प्रति एक अन्याय है।

इस ग्रन्थ के प्रारम्भ मे मुझे कुछ निराशा सी हो गयी थी जब मुझे डॉ० देवराज उपाध्याय द्वारा स्वच्छन्दतावादी अवधारणा पर लिखित एक मात्र ग्रन्थ रोमाण्टिक साहित्य शास्त्र की प्राप्ति मे विलम्ब हो रहा था। प्रारम्भ मे तो ऐसा लगा कि शायद मुझे विषय परिवर्तन न करना पडे किन्तु अन्तत मुझे यह पुस्तक प्राप्त हो गयी और आज मुझे अपने इस ग्रथ का प्राक्कथन लिखने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है।

यह मेरा सौभाग्य है कि मुझे स्वच्छन्दतावाद के महान ज्ञाता और अन्तर्राष्ट्रीय समीक्षक प्रोफेसर अजब सिह के दिशा निर्देशन मे कार्य करने का सुअवसर प्राप्त हुआ है। अध्ययन व अन्वेषण के क्रम मे मुझे प्रोफेसर अजब सिह से अदम्य प्रेरणा प्रोत्साहन और स्नेह प्राप्त हुआ है। अपनी अत्यधिक व्यस्तता के मध्य भी डॉ० सिह ने मुझे समय दिया जिसके लिए मै हृदय से आभारी हूँ। अलीगढ मुस्लिम विश्वविद्यालय के सह उपकुलपति प्रो० एच० ए० एस० जाफरी के प्रति आभारी हूँ कि उन्होने एक विस्तृत आमुख लिखकर अपना मन्तव्य प्रकट किया आपकी प्रेरणा एव प्रोत्साहन शब्दातीत है।

मै उन समस्त विद्वानो का हृदय से आभार व्यक्त करती हूँ जिनके विचारो से मुझे ज्ञान रूपी प्रकाश मिला। उन विद्वानो मे प्रोफेसर दीनानाथ सिह आचार्य एव अध्यक्ष हिन्दी विभाग वीर कुँवर सिह विश्वविद्यालय आरा (बिहार) इलाहाबाद विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग के प्रो० योगेन्द्रप्रताप सिह सेण्ट्रल यूनिवर्सिटी हैदराबाद (आ० प्र०) के प्रो० विजेन्द्र नारायण सिह तथा अलीगढ मुस्लिम विश्वविद्यालय अलीगढ हिन्दी विभाग के प्रो० शाण्डिल्य डॉ० आर० सी० शर्मा आदि प्रमुख है।

प्रस्तुत ग्रथ लेखन के लिए मै मौलाना आजाद पुस्तकालय के सचालको एव हिन्दी विभागीय पुस्तकालय की सचालिका के प्रति भी आभार व्यक्त करती हूँ तथा उनके सहयोग के लिए सदैव ऋणी रहूँगी।

इस अवसर पर मै अपने जीवनसाथी श्री निसार हैदर रिजवी को कैसे विस्मृत कर सकती हूँ। सदैव आगे बढने की प्रेरणा मुझे आपसे ही मिली है। प्रस्तुत ग्रन्थ के लेखन के समय मुझे पारिवारिक दायित्वो से मुक्त करना पुस्तकालय एव इधर उधर से पुस्तके एव लेखन सामग्री लाकर देना टकण के लिए सामग्री इत्यादि उपलब्ध कराना ये सब श्री रिजवी के सहयोग एव सहायता से ही सम्भव हो सका है।

अपनी पॅच वर्षीय पुत्री आफरीन एव दो वर्षीय पुत्र अहमद का सहयोग भी मेरे लिए चिरस्मरणीय रहेगा। दोनो ने ही मुझे इस ग्रन्थ लेखन मे पूर्ण सहयोग दिया। छोटे भाई को सहयोग देने का दायित्व आफरीन ने बडी कुशलता से पूर्ण किया।

इस अवसर पर मैं अपने स्व० पिता एच० एम० कुद्दूसी को विस्मृत नही कर पा रही हूँ। हिन्दी साहित्य व भाषा के चयन के प्रेरणास्रोत मेरे स्व० पिता ही थे। अपनी माता

श्रीमती जकिया कुद्दूसी का स्मरण करना अपना दायित्व समझती हूँ, जिन्होने मुझसे बहुत दूर रहकर मेरे लिए प्रार्थना की और जिनका आशीवाद मेरे ग्रन्थ लेखन मे सहयोगी रहा।

पितातुल्य भ्राता न्यायमूर्ति श्री आई० एम० कुददूसी का आभार व्यक्त करना मै अपना दायित्व समझती हूँ। आपके सहयोग प्रेम एव प्रेरणा की छात्र छाया मे इस ग्रन्थ का प्रकाशन सम्भव हो सका है।

हिन्दुस्तानी एकेडेमी के सचिव श्री मेहन्द्र प्रतापजी एव अध्यक्ष श्री हरिमोहन मालवीयजी की मै आजन्म आभारी रहूँगी कि उनके ही सौजन्य एव सहयोग से आज मेरे सपनो को साकार रूप मिला। समस्त एकेडेमी परिवार का मैं हृदय से आभार व्यक्त करती हूँ। प्रूफ सशोधन के लिए मै श्री रमेश कुमार उपाध्यायजी की आभारी हूँ जिनके सहयोग ने आज इस ग्रन्थ को स्तरीय रूप प्रदान किया है।

श्री नीलेन्द्र श्रीवास्तवजी का सहयोग मेरे लिए अविस्मरणीय है मै उनका हृदय से आभार व्यक्त करती हूँ।

पुस्तक की सुन्दर टकण व्यवस्था का श्रेय श्री एच० एम० त्रिपाठीजी को है। इसके लिए मै श्री एच० एम० त्रिपाठी को हृदय से धन्यवाद करती हूँ। इन सबके अतिरिक्त मै अपने उन सभी सहयोगियो मित्रो एव शुभचितको का आभार व्यक्त करती हूँ कि जिनकी प्रेरणा प्रोत्साहन सहयोग एव स्नेह मेरे आगे बढने मे सहायक बना है। अन्तत लेखिका सभी माध्यमो के प्रति कृतज्ञता प्रकट करती है।

शर्मीला डॉली कुद्दूसी
प्राध्यापिका हिन्दी विभाग
अलीगढ मुस्लिम विश्वविद्यालय
अलीगढ

अनुक्रम

व्यक्तित्व की रेखाएँ

हिन्दी समीक्षा की आचार्य परम्परा मे डॉ० देवराज उपाध्याय का महत्वपूर्ण स्थान सर्वश्रुत है तथा हिन्दी के स्वच्छन्दतावादी समीक्षक के रूप के उनका विशेष स्थान है।

डॉ० देवराज उपाध्याय का जन्म सन् 1902 मे जनपद शाहाबाद के वमन गॉव मे हुआ था।[1] सम्प्रति यह स्थान बिहार प्रान्त के भोजपुर जनपद मे है। आपने एम० ए० तथा पी एच० डी० की उपाधि राजपूताना और पटना विश्वविद्यालयो से प्राप्त की।[2] तत्पश्चात् जसवत कालेज जोधपुर मे हिन्दी विभाग के शिक्षण-कार्य मे तल्लीन हो गये। साहित्य के प्रति आपकी अभिरुचि बाल्यकाल से ही थी। शिक्षा काल से ही आपका झुकाव विविध पुस्तको के अध्ययन की ओर था। **डॉ० देवराज उपाध्याय** ने आलोचना के क्षेत्र का चयन किया था। कथा साहित्य क्षेत्र पर आपका पूर्ण अधिकार था जबकि मनोविज्ञान तो उनका अपना ही क्षेत्र था। आपने आलोचना को मनोवैज्ञानिक परिप्रेक्ष्य मे मनोविश्लेषणात्मक सिद्धान्तो को केद्र मे रखकर अपने चिन्तन से सीचा था हरा भरा किया था। मनोवैज्ञानिक आलोचना के क्षेत्र मे आपका कोई सानी नही है। जोधपुर विश्वविद्यालय से अवकाश प्राप्त करने के पश्चात् आपने अपना शोध विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के परिकल्प के अन्तर्गत मगध विश्वविद्यालय बोधगया के हरप्रसाद जैन कालेज के हिन्दी विभाग से किया था।

डॉ० देवराज उपाध्याय हिन्दी समीक्षा के एकमात्र समीक्षक है जिन्होने हिन्दी स्वच्छन्दतावादी समीक्षा के अन्तर्गत पाश्चात्य स्वच्छन्दतावादी कवियो के काव्यो को अनुशीलन विश्लेषण के द्वारा मनोवैज्ञानिक चिन्तन बिन्दुओं को अपनी समीक्षा मे स्थान दिया है व उन्होने अपनी आलोचनात्मक क्षमता का उपयोग कथा साहित्य के मनोवैज्ञानिक विश्लेषण अनुशीलन मे लगाया था।

स्वच्छन्दतावादी अवधारणा को व्याख्यायित करते हुए **डॉ० उपाध्याय** ने मनोवैज्ञानिक वैचारिकता को अपने चिन्तन का विषय बनाया जिसको हम आधुनिक शब्दावली मे एकागी व्यक्तित्व का विकास भी कह सकते है। इन्होने पाश्चात्य स्वच्छन्दतावादी कवियो के साथ-साथ **श्रीमती महादेवी वर्मा** की आलोचना पद्धति व **रामकुमार वर्मा** और **महादेवी वर्मा** की गीतियो यहॉ तक कि कविवर **सुमित्रानन्दन पन्त** के **उच्छवास'** और **प्रसाद** के **'ऑसू'** की भी इस सदर्भ मे चर्चा की है।[3]

डॉ० देवराज उपाध्याय के व्यक्तित्व की स्पष्ट छाप उनके साहित्य मे सहज ही दृष्टिगोचर होती है। वह ऐसे प्रतिभाशाली व्यक्तित्व के मालिक थे कि जिसके प्रत्येक भाग से गुणो की भीनी भीनी सुगन्ध निकलती है। दूसरे शब्दो मे हम उनको सर्वगुणसम्पन्न व्यक्तित्व का स्वामी कह सकते है।

डॉ० दैवराज उपाध्याय आलोचको की सूची मे अग्रणी है। आपकी प्रतिभा केवल आलोचना तक ही सीमित न रहकर सर्जनात्मक रचनाओं की ओर प्रवृत्त हुई है। आपकी आलोचना की यह विशेषता है कि वह आलोच्य वस्तु के आधार पर उसमे गहराई तक रमकर भौतिक तत्त्वो का विवेचन करते है।

1 स० धीरेन्द्र वर्मा हिन्दी साहित्य कोश नामवाची शब्दावली पृ० 247
2 वही, पृ० 247
3 देवराज उपाध्याय ग्रथावली खण्ड 2 पृ० 140

आपके काव्य मे मौलिक तत्त्वो के विवेचन की प्रधानता रही है। यही कारण है कि **डॉ० उपाध्याय** का व्यक्तित्व एक मौलिक साहित्य स्रष्टा के रूप मे निखरकर सामने आया है। वह एक अत्यन्त सफल आलोचक है।

डॉ० देवराज उपाध्याय के व्यक्तित्व मे अध्ययन पाण्डित्य और विद्वत्ता की गुरु गम्भीरता है तथा इसके साथ ही-साथ दूसरी ओर अधिक स्फूर्ति मौलिक चिन्तन और प्रेरक तत्त्व तो उनके व्यक्तित्व मे चार चाँद लगाते है।

डॉ० उपाध्याय स्वभाव से ही गम्भीर और चिन्तनशील व्यक्तित्व के स्वामी है। यही कारण है कि साहित्य मे उनके व्यक्तित्व के विचार-गाम्भीर्य की झलक स्पष्ट दृष्टिगोचर होती है।

डॉ० देवराज उपाध्याय के व्यक्तित्व की एक विशेषता यह है कि वह अत्यन्त सूक्ष्मदर्शी है। प्रत्येक वस्तु का बारीकी से निरीक्षण तत्पश्चात् अनुशीलन विवेचन और विश्लेषण परस्पर मनन चिन्तन के बाद ही वह वक्तव्य देते थे।

ग्रहणशीलता तो **डॉ० उपाध्याय** के अन्दर कूट-कूट कर भरी हुई थी। अत्यधिक ग्रहणशील व्यक्तित्व का स्वामी ही विचारो मे गहराई तक जा सकता है।

अभिव्यक्ति कौशल किसी भी लेखक कवि या आलोचक का प्रथम गुण कहा जाता है। इसके अभाव मे लेखक मूक लेखक कवि मूक कवि और आलोचक मूक आलोचक कहलाता है किन्तु **डॉ० उपाध्याय** अभिव्यक्ति कौशल परिपूर्ण थे। इसको अगर हम यह कहे कि चमत्कारपूर्ण अभिव्यक्ति मे **डॉ० देवराज उपाध्याय** का कोई सानी नही तो अतिशयोक्ति नही होगी।

डॉ० देवराज उपाध्याय अत्यन्त परिश्रमसाध्य व्यक्ति थे। यह उनके असाध्य परिश्रम का ही परिणाम है कि आज उनकी पुस्तको से हिन्दी साहित्य ज्ञान भण्डार मे वृद्धि हुई है जिसके लिए साहित्य आपका चिरऋणी रहेगा।

डॉ० देवराज उपाध्याय राष्ट्रभाषा हिन्दी के प्रति समर्पित थे। हिन्दी साहित्य ज्ञान भण्डार की रक्षा और उसकी अभिवृद्धि तथा हिन्दी के प्रति लोगो की उदासीनता और उसमे स्तर के प्रति आप अत्यधिक सवेदनशील और चिन्तित थे। वह चाहते थे कि हिन्दी साहित्य ज्ञान भण्डार की वृद्धि हो और लोग हिन्दी के प्रति उदासीन न होकर अपनी रुझान बढ़ायें। वह हिन्दी भाषा के विकास के प्रति चिन्तित थे।

डॉ० देवराज उपाध्याय का व्यक्तित्व हिन्दी व सस्कृत के साथ साथ भारतीय दर्शन से अत्यन्त प्रभावित था। **'रोमाटिक साहित्य शास्त्र'** नामक पुस्तक मे वह कई स्थानो पर पाश्चात्य चिन्तन के समानान्तर भारतीय दर्शन का उदाहरण प्रस्तुत करते है। इस सदर्भ मे उनकी मशा कुछ और भी थी। वह विश्व को यह भी बताना चाहते थे कि जिस पाश्चात्य दर्शन और चिन्तन के पीछे आज तुम दीवानो की तरह भाग रहे हो वह तो भारतीय मूल के दर्शन मे कभी का विद्यमान है। यही कारण है कि कई स्थानो पर वह इस सदर्भ मे उद्धरण भी उद्धृत करते चलते है।

आध्यात्मिकता **डॉ० देवराज उपाध्याय** के व्यक्तित्व का एक अन्य आकर्षक आकर्षण है। आध्यात्मिकता पूर्ण व्यक्तित्व की स्पष्ट झलक उनके साहित्य मे दृष्टिगोचर होती है। ईश्वरीय सत्ता के

प्रति झुकाव उनकी सहज स्वाभाविक प्रवृत्ति है।

उच्च श्रेणी के परिहास के दर्शन भी **डॉ० देवराज उपाध्याय** के साहित्य मे प्राप्त होत है। उनकी ज़िन्दादिली और सजीव परिहास का नमूना हमे उनकी पुस्तक **विचार के प्रवाह'** मे मे री दिल्ली यात्रा सस्मरण मे देखने को मिलता है। इस लेख मे उन्होने दिल्ली क पॉकेटमार की कला की प्रशसा करने उसे कई उपमाएँ दी है। उस प्रसग मे आपने राम सीता तथा सस्कृत के कवियो को भी ला बैठाया है। कहॉ राम सीता कहॉ यह मृच्छकटिक का शार्वलिक और दिल्ली का यह पॉकेटमार किन्तु **डॉ० उपाध्याय** उनके सम्बन्ध सूत्रो को खोज लेते है। ऐसे स्थान पर सम्बन्ध सूत्रो को खोज निकालना जहॉ उनका साधारणत आभास भी न हो **डॉ० देवराज उपाध्याय** सरीख व्यक्तित्व की ही प्रतिभा का कार्य है।

डॉ० देवराज उपाध्याय हिन्दी भाषा का ही ज्ञान नही रखते अपितु अग्रेजी उर्दू, फारसी तथा सस्कृत भाषा पर भी उन्हे महारत हासिल है। आपने भावाभिव्यक्ति के मध्य चुनिन्दा शेरो शायरी का उल्लेख भी किया है। साथ ही साथ सस्कृत के श्लोक **वेद-रामायण, महाभारत** इत्यादि सभी प्रसिद्ध ग्रन्थो के श्लोक व पद भी आवश्यकतानुसार यथोचित स्थान पर प्रयुक्त किय है। बहुमुखी आलोचक प्रतिभा के धनी **डॉ० देवराज उपाध्याय** का व्यक्तित्व दर्शनीय है।

कृतित्व

डॉ० देवराज उपाध्याय की पुस्तके उनके जीवन काल मे समय समय पर प्रकाशित होती ही रही जिनमे कुछ विदेशी उपन्यासो के अनुवाद है। शेष आलोचना की पुस्तके है। आपके अनुसधान का विषय **'आधुनिक कथा-साहित्य और मनोविज्ञान'** था। इनका शोध-ग्रन्थ 1956 मे प्रकाशित हुआ था। इसमे लेखक ने आधुनिक कथा साहित्य पर मनोवैज्ञानिक रूप से विवेचना प्रस्तुत करने का प्रयास किया था। आपने इस शोध के माध्यम से कथा साहित्य पर नए ढग से विचार करने के लिए प्रेरित किया।[1] आपके इस शोधग्रन्थ मे अध्ययन पाण्डित्य और विद्वत्ता की गुरु गभीरता के दर्शन होते है।[2] जो **डॉ० उपाध्याय** के व्यक्तित्व की विशेषता है।

इसके अतिरिक्त **डॉ० देवराज उपाध्याय** की एक अन्य पुस्तक काव्यशास्त्र से सम्बन्धित है जिसका नाम **रोमाटिक साहित्य शास्त्र'** है। इस पुस्तक मे आपने काव्य सम्बन्धी रचना-प्रक्रिया और शास्त्रीय विवेचना पर विचार किया है। इस पुस्तक मे उन्होने पाश्चात्य स्वच्छन्दतावादी कवियो के काव्य को अनुशीलन व विश्लेषण के द्वारा मनोवैज्ञानिक चिन्तन बिन्दुओं के परिप्रेक्ष्य मे परखा है। यद्यपि अपनी आलोचनात्मक क्षमता का उपयोग कथा साहित्य के मनोवैज्ञानिक विश्लेषण व अनुशीलन मे लगाया था किन्तु अपनी पुस्तक **'रोमाटिक साहित्य शास्त्र'** के क्लासिकल और रोमाटिक अवधारणाओं को विश्लेषित करते हुए पाश्चात्य अग्रेजी के रोमाटिक कवियो को ही उन्होने अध्ययन विश्लेषण का आधार बनाया था। क्लासिकल और रोमाटिक अवधारणाओं का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण अनुशीलन करते हुए वे एडिसन के हास्य सम्बन्धी और **'पैराडाइज़ लॉस्ट'** सम्बन्धी विचारो को सकलित करते हुए एडिसन के काव्योचित न्याय विषयक सिद्धान्तो से काव्य-सिद्धान्त सम्बन्धी चर्चा का श्रीगणेश करते है। **लेसिग** के काव्य और मूर्तिकला के स्वभावगत मौलिक भेद का विश्लेषण करते हुए **डॉ०**

1 विश्वनाथ प्रसाद *भूमिका विचार के प्रवाह*
2 विश्वनाथ प्रसाद *भूमिका विचार के प्रवाह*

उपाध्याय, परसी विशी शेली द्वारा विश्लेषित काव्य के स्वरूप उसकी प्रेरणा आदि तत्त्वो को अपने चिन्तन का विषय बनाते हुए प्रकृति कला और कलाकार के परस्पर सम्बन्ध की व्याख्या करते हुए कल्पना के पुनर्सृजन काव्य तथा कल्पना की व्यापकता की व्याख्या व विवेचन करते है।

इसी क्रम मे **विलियम वर्ड्स्वर्थ**, उसकी कविता और काव्यशास्त्र का उल्लेख करते हुए **डॉ० देवराज उपाध्याय** Lyrical Ballads की भूमिका को रोमाटिक साहित्यशास्त्र का बाइबिल कहते है और इसी काव्य सग्रह से पाश्चात्य रोमाटिक साहित्यशास्त्र का प्रारम्भ मानते है। **कॉलरिज** द्वारा प्रतिपादित आलोचना सिद्धान्त गद्य पद्य भेद तथा साहित्य मे यथार्थ और विधायक कल्पना सम्बन्धी विचारो का आपने बड़ा ही सूक्ष्म निरीक्षण विश्लेषण और अनुशीलन किया है। अपनी पुस्तक **'रोमाटिक साहित्य शास्त्र'** के अन्तिम अनुकरण मे **रस्किन** के काव्य सिद्धान्तो की व्याख्या भी करते हैं। काव्य स्रोत के रूप मे कार्य करनेवाले तत्त्वो शक्ति, सत्यता, अनुकृति आदि का सुन्दर मनोवैज्ञानिक विश्लेषण करते हुए वे **रस्किन** द्वारा प्रतिपादित काव्य क्या है तथा कविता या कला के महत्त्व के क्रम का विकास चर्चित कर कलाकार के महत्त्व का निरूपण करते है।

'कथा साहित्य के मनोवैज्ञानिक समीक्षा सिद्धान्त' नामक अपनी पुस्तक मे जीवन की मनोवैज्ञानिक पृष्ठभूमि की व्याख्या करते हुए मनोवैज्ञानिक जीवन का प्रारम्भ जीवन व्यापार मे मनोविज्ञान की प्रधानता मनोविज्ञान मनश्चिकित्सा, मनोविश्लेषण तथा अचेतन व सम्मोहन के साथ **डॉ० उपाध्याय** अपनी पुस्तक के प्रथम अनुक्रम मे अचेतन के स्वरूप की व्याख्या बोध और अनुचिन्तन, जीवन मे चेतना का महत्व उसका वास्तविक स्वरूप इन बिन्दुओं को बड़ी बारीकी से विश्लेषित करते है। आपने अचेतन का महत्त्व तथा उसके वास्तविक रूप का विश्लेषण दो कथाओं के आधार पर किया है। इस प्रकार जीवन एव साहित्य मे आन्तरिकता की प्रवृत्ति हमे स्वच्छन्दतावादी वैचारिकता व अवधारणा के निकट लाती है। यह अवधारणा मनोवैज्ञानिकता के महत्त्वपूर्ण बिन्दुओं को लेकर अपनी यात्रा को परिपूर्णता की ओर ले जाती है। निष्कर्ष रूप मे उनके व्यक्तित्व मे मनोवैज्ञानिकता के चिन्तन की ऊर्जा का स्फुरण देखने को मिलता है। वे मनोवैज्ञानिक बिन्दुओं को कथा साहित्य परिप्रेक्ष्य मे देखते तो ही है साथ ही-साथ उपन्यास और काव्य के द्वारा कविता और उपन्यास गद्य और पद्य मे भेद **कॉलरिज** के काव्य सम्बन्धी विचार और कविता तथा उपन्यास की रचना प्रणाली को भी रेखाकित करते है। इसके साथ ही **डॉ० देवराज उपाध्याय** काव्य तथा उपन्यास के पृथक्करण के प्रश्न और भाषा के ध्रुवीकरण को अपने वैज्ञानिक और उपन्यास के अनुकरण के द्वारा एक सारगर्भित व्यापक व्याख्या भी देते है।

स्वप्न दिवास्वप्न तथा उपन्यास अनुकरण मे मनोविज्ञान के विकास का कारण प्रवृत्ति आवेग की मॉग की पूर्ति मे असतुलन और इस असन्तुलन का मनुष्य पर प्रभाव, स्वप्नो का अध्ययन स्वप्न दिवा स्वप्न तथा उपन्यासो की प्रक्रिया मे अन्तर रोमाटिक और क्लासिकल साहित्य मे अन्तर दिवास्वप्न स्वप्न साहित्य और आन्तरिक अभिव्यक्ति कला को अभिव्यक्ति से आगे के प्रभाव को भी लेना चाहिए इत्यादि को अपने चिन्तन का विषय बनाया। इस प्रकार इनका समीक्षा सिद्धान्त केवल आन्तरिक एव अन्तर्मन की अन्त प्रवृत्तियो का उच्छृखल मात्र नही वरन् आन्तरिक प्रवृत्तियो के परिप्रेक्ष्य मे कला को बाह्याभिव्यक्ति के प्रभाव को भी ग्रहण चाहिए। **डॉ० उपाध्याय** अन्त परिवेश के साथ साथ बाह्य परिवेश को भी कला के मनोवैज्ञानिक चिन्तन के लिए आवश्यक बतलाते है। कुछ कथाओं का

मनोवैज्ञानिक विश्लेषण भी इस ग्रथ के अन्तिम अनुभाग मे प्रस्तुत किया गया है। कुल मिलाकर उनकी समीक्षा दृष्टि अन्त मन की गगा मे गोता तो लगाती ही है साथ ही उस गगा को उपन्यास विधा इन सबके माध्यम से विश्लेषण का आधार मिलता है।

'मनोवृत्तानुवर्ती आख्यान रचना' मे **डॉ० देवराज उपाध्याय** ने अपने चिन्तन को दा खण्डो मे बॉट दिया है। खण्ड एक मे मानव प्रवृत्तियॉ कला एक जैविक प्रवृत्ति-आदते और मनोविज्ञान विचार स्वातन्त्र्य परिस्थितियो के साथ सामजस्य तथा दूसरे खण्ड के अन्तिम अनुभाग मे आख्यान और जीवन की मनोवृत्तियो को अपने विश्लेषण का आधार बनाया है। यह शोध-ग्रन्थ **डॉ० देवराज उपाध्याय** न अपने जीवन की अन्तिम क्षणो मे उन्होने जोधपुर विश्वविद्यालय से अवकाश ग्रहण कर मगध विश्वविद्यालय बोधगया के स्नातकोत्तर हिन्दी विभाग हर प्रसाद जैन कालेज से विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के अपना शोध परिकल्प तथा परियोजना के अन्तर्गत पूरा किया था। इस ग्रन्थ के माध्यम से **डॉ० उपाध्याय** साहित्य की अवधारणा मे मनावैज्ञानिक आन्तरिक चिन्तन की चहारदिवारी से आगे बढ़ते है और विचार स्वातत्र्य परिस्थितियो के साथ सामजस्य तथा कल्पना और सत्य को साहित्य की व्याख्या के लिए अनिवार्य मानते है। ऐसी स्थिति मे उनकी समीक्षा दृष्टि अनुभूति एव परिवेश वैयक्तिकता एव सामाजिकता तथा आदर्श और यथार्थ की समन्वित चेतना से काव्य की उत्कृष्टता को उभारती है। यही कारण है कि आधुनिक समीक्षको ने स्वच्छन्दतावादी अवधारणा को केवल आन्तरिकता एव वैयक्तिकता से जोड़कर नही रखा हैं। आज स्वच्छन्दतावादी कला अन्त एव बाह्य का मिलन है और ऐसी स्थिति मे मनोवैज्ञानिक समीक्षक के रीउ मे इन्होने समष्टिगत कला वैशिष्ट्य को कल्पना और सत्य विचार स्वातत्र्य के साथ परिस्थितियो के सामजस्य का उत्कृष्ट कला के निष्कर्ष का आधार बनाया। इस प्रकार इस अद्यतन वैचारिकता को अपनी समीक्षा-दृष्टि से आत्मसात् करने के सदर्भ मे वे साधुवाद के पात्र है।

विचार के प्रवाह' डॉ० देवराज उपाध्याय की एक अन्य कृति है। उन्होने इस पुस्तक मे **महादेवी वर्मा** की आलोचना पद्धति आधुनिक काव्य **कविताएँ 1954 सकलन, वर्षान्त के बादल, अचल, बोलो के देवता** (सुश्री **सुमित्रा कुमारी सिन्हा**) तथा **साहित्य मे कल्पना तथा इतिहास, सत्य का महत्त्व** आदि को अपने अनुशीलन विश्लेषण का विषय बनाया है। इस प्रकार इस ग्रन्थ मे भी **डॉ० उपाध्याय** ने काव्य और साहित्य के लिए कल्पना तथा इतिहास सत्य को साहित्य की व्याख्या के लिए अनिवार्य माना है। उनकी आलोचना मे मौलिक तत्वो का विवेचन विश्लेषण अधिकतर किया जाता है। **'विचार के प्रवाह'** मे कुछ निबन्ध वैयक्तिक निबन्धो की श्रेणी मे आते है जैसे मेरी दिल्ली यात्रा असुविधा का उपयोग एक पत्र आदि इनमे जिस आत्मीयता के साथ बाते की गयी है हृदय की तस्वीर जिस सच्चाई के साथ खीची गयी अन्यत्र दुर्लभ है।[1]

डॉ० देवराज उपाध्याय की कृति **'विचार के प्रवाह'** की प्रशसा मे भी **विश्वनाथ प्रसाद** के निम्न शब्द द्रष्टव्य है विचार के प्रवाह मे उपाध्याय जी के मानस प्रदेश या हृदय प्रदेश मे एक नये बीज को अकुरित होते देखा जा सकता है। उसी तरह से जैसे पत्थर को फोड़कर हरियाली पत्ति झॉकती हो।[2]

1 विश्वनाथ प्रसाद *भूमिका विचार के प्रवाह*
2. वही, भूमिका, विचार के प्रवाह

'विचार के प्रवाह' मे **डॉ० देवराज ˜ ॥ध्याय** ने अच्छा परिहास भी किया है। उच्च-कोटि के हास्य के दर्शन उनके **मेरी दिल्ली यात्रा'** शीर्षक लेख मे होते है। एक पॉकेटमार की कला की प्रशसा विभिन्न उपमाओं के द्वारा की है। यहॉ तक कि प्रसगवश आपने राम सीता और सस्कृत के कवियो को भी उद्‌धृत किया है। **श्री विश्वनाथ प्रसाद** तत्कालीन सचालक क० मु० हिन्दी विद्यापीठ आगरा विश्वविद्यालय आगरा **विचार के प्रवाह'** की भूमिका मे इस उत्कृष्ट हास्य से अत्यन्त प्रभावित दिखायी देते है। उनके निम्न शब्द द्रष्टव्य है

मैने इस **विचार के प्रवाह'** को बड़ी दिलचस्पी के साथ पढ़ा है। कही-कही तो **उपाध्याय जी** की ज़िन्दादिली और सजीव परिहास से बहुत प्रभावित हुआ हूँ। उदाहरण के लिए **मेरी दिल्ली यात्रा'** शीर्षक लेख मे उन्होने पॉकेटमार की कला की प्रशसा की है तथा कैसी कैसी उपमाएँ दी है। उस प्रसग मे आपने राम सीता तथा सस्कृत के कवियो को भी ला बिठाया है। कहॉ राम सीता कहॉ मृच्छकटिक का शार्वलिक और कहॉ यह दिल्ली का पॉकेटमार। पर **डॉ० उपाध्याय** की प्रतिभा ने इनके सम्बन्ध सूत्रो को खोज ही लिया है।[1]

अत निष्कर्ष रूप मे कहा जा सकता है कि चाहे मौलिक विवेचन अथवा मौलिक निबन्ध हो या वैयक्तिक निबन्ध **डॉ० उपाध्याय** प्रत्येक क्षेत्र मे सफल समीक्षक आलोचक है।

'कथा के तत्त्व' नामक पुस्तक **डॉ० उपाध्याय** की आधुनिक कथा साहित्य और मनोविज्ञान विषयक कई बातो मे विशिष्टता दिखाती है। इस पुस्तक मे स्फूर्ति मौलिक चिन्तन तथा प्रेरक तत्त्व है।[2] **डॉ० देवराज उपाध्याय** स्वय **'विचार के प्रवाह'** पुस्तक के प्राक्कथन मे **कथा के तत्त्व** नामकरण के औचित्य के बारे मे लिखते है कि

कथा के तत्व' को लेकर भी एक दो बन्धुओं ने उसके नामकरण के औचित्य की ओर मेरा ध्यान आकृष्ट किया था। कहा था कि उसका नाम आधुनिक हिन्दी कथा साहित्य होना चाहिए था। एक ने तो यह भी कहा था कि नाम तो इस पुस्तक का है कथा के तत्त्व पर तथ्य से अधिक विस्तार की बात कही गयी है। मैने उनसे यही कहा था कि कथा के तत्त्व से कथा के विस्तार का तत्व समझ लीजिए और ऐसा मान लीजिए कि भाषा के लाघव तथा आकुचन की प्रवृत्ति के कारण विस्तार का लोप हो गया है।[3] अतएव स्पष्ट है कि **'कथा के तत्त्व'** पुस्तक मे **डॉ० उपाध्याय** ने कथा साहित्य के तत्वो का मनोवैज्ञानिक परिप्रेक्ष्य मे विश्लेषण किया है।

व्यक्तिगत निबन्धो और साहित्यिक निबन्धो का एक सकलन **'रेखा'** भी **डॉ० उपाध्याय** की ओर से हिन्दी साहित्य की अमूल्य निधि है।[4] इसमे व्यक्तिगत निबन्धो की वह परम्परा जो भारतेन्दु युग मे **श्री प्रतापनारायण मिश्र** तथा **श्री बालकृष्ण भट्ट** आदि ने प्रारम्भ की थी और **स्व० श्री रामचन्द्र शुक्ल** के प्रयासो से जिसे गाम्भीर्य और प्रौढ़ता प्राप्त हुई थी **डॉ० उपाध्याय** के प्रयत्नो ने उसे **'रेखा'** के माध्यम से पुनर्जीवित किया है।

इन पुस्तको के अतिरिक्त **लियोनार्ड फ्रेंक** द्वारा लिखित **'कार्ल एण्ड एनना'** का भी आपने हिन्दी मे सारगर्भित अनुवाद किया तथा **महात्मा गान्धी** की पुस्तक 'India of My Dreams'' का भी अनुवाद उनके कर कमलो द्वारा ही सभव हो सका है।[5]

1 विश्वनाथ प्रसाद *भूमिका विचार के प्रवाह*
2 वही
3 डॉ० देवराज उपाध्याय *लेखक की ओर से विचार के प्रवाह*

हिन्दी की स्वच्छन्दतावादी समीक्षा का विकास

स्वच्छन्दतावाद शब्द अंग्रेजी के Romanticism का हिन्दी अनुवाद है। सबसे पहले **आचार्य रामचन्द्र शुक्ल** ने अपने **हिन्दी साहित्य के इतिहास** मे Romanticism के लिए हिन्दी अनुवाद स्वच्छन्दतावाद किया और इसी क्रम मे स्वच्छन्दतावाद और छायावाद को रेखाकित किया। **डॉ० हजारीप्रसाद द्विवेदी** ने **डॉ० देवराज उपाध्याय** की पुस्तक **'रोमाटिक साहित्य शास्त्र'** की भूमिका मे Romanticism के हिन्दी अनुवाद स्वच्छन्दतावाद पर आपत्ति की है तथा उसे अत्यन्त सीमित अर्थ का शब्द कहा है किन्तु उसके विकल्प मे कोई शब्द भी नही सुझाया है परन्तु कई स्थानो पर Romanticism को **डॉ० द्विवेदी** ने रोमाटिक साहित्य के नाम से ही सम्बोधित किया है। **प्रसाद'** जयन्ती 1962 के अवसर पर सभा भवन मे हो रहे कार्यक्रम मे इसे रमन्तवाद के नाम से अभिहित किया गया था।[1] लेकिन इसे नकार दिया गया। हिन्दी के सुप्रसिद्ध समालोचक **डॉ० रामेश्वरलाल खण्डेलवाल** ने अपने शोध प्रबन्ध **आधुनिक हिन्दी कविता मे प्रेम और सौन्दर्य** मे रोमाटिसिज्म को रोमासवाद कहा है।[2] **डॉ० रामधारी सिह दिनकर** ने भी अपनी पुस्तक **शुद्ध कविता की खोज** मे रोमाटिसिज़्म को रोमासवाद ही कहा है।[3] **डॉ० अजब सिह** का मत है कि वादो की उत्पत्ति सदैव आलोचना से ही होती है साहित्य सर्जना से सीधे नही। इस रोमाटिक युग की कविता की मुख्य प्रवृत्तियो को मापने के लिए उसे वाद (इज्म) के रूप मे परिलक्षित किया जाने लगा और उसका नामकरण सस्कार रोमाटिसिज़्म किया गया। इस प्रकार रोमास से रोमाटिक तथा रोमाटिक से रोमाटिसिज्म रूप नि सृत हुआ।[4] अत रोमाटिसिज्म के लिए स्वच्छन्दतावाद शब्द का ही सर्वाधिक प्रयोग हाने लगा है।

स्वच्छन्दतावाद क्या है? इस सदर्भ मे बहुत से पाश्चात्य एव भारतीय आलोचको ने अपने विचार प्रस्तुत किये है।

एफ० डब्ल्यू० वेटसन के विचार स्वच्छन्दतावाद के सदर्भ मे विचार कुछ इस प्रकार है

The nature symbol the synthetic link between the conscious and the unconscious mind is the basic unit of Romantic Poetry

अर्थात् प्रकृति प्रतीक जो चेतन और अवचेतन मस्तिष्क के बीच समन्वयात्मक कड़ी है वह स्वच्छन्दतावादी कविता की मूल इकाई है।[5] **Culture and society** मे **रेयमण्ड विलियम्स** ने स्वच्छन्दतावाद को इस रूप मे व्याख्यायित किया है, स्वच्छन्दतावाद की एक वृत्ति कला की नियमबद्धता का सक्षम परित्याग है और दूसरी वृत्ति जगत् के अनावृत रहस्यो का अध्ययन है।[6]

हिन्दी आलाचको मे सर्वप्रथम **आचार्य रामचद्र शुक्ल** ने स्वच्छन्दतावाद को रेखाकित किया था। वे स्वच्छन्दतावादी कविता को कृत्रिम और रूढ़िवाद काव्य प्रवाह की प्रतिक्रिया के फलस्वरूप उत्पन्न

1 डॉ० अजब सिह *आधुनिक काव्य की स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियाँ* पृ० 1
2 डॉ० रामेश्वर लाल खण्डेलवाल *आधुनिक हिन्दी कविता मे प्रेम और सौन्दर्य* पृ० 318 319
3 डॉ० रामधारी सिह दिनकल *शुद्ध कविता की खोज* पृ० 29
4 डॉ० अजब सिह *आधुनिक काव्य की स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियाँ* पृ० 1
5 वही पृ० 40
6 डॉ० अजब सिह *नवस्वच्छन्दतावाद* पृ० 14

स्वाभाविक भावधारा की कविता मानते है। उनका कथन है कि प्रकृति प्रागण के चर-अचर प्राणियो का सम्पूर्ण परिचय उनकी गतिविधि पर आत्मीयता व्यजक दृष्टिपात सुख-दु:ख मे उनके साहचर्य की भावना यह सब बाते स्वच्छन्दतावाद के पदचिन्ह है।[1]

डॉ० अजब सिह अपनी पुस्तक **'आधुनिक काव्य की स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियॉ'** मे लिखते है कि **आचार्य रामचन्द्र शुक्ल** की यह परिभाषा अग्रेजी के रोमॉटिसिज्म के केवल एक ही पक्ष को उजागर करती है। अत **आचार्य शुक्ल** ने जिन कवियो अर्थात् **श्रीधर पाठ्क, रामनरेश त्रिपाठी, गुरुभक्त सिह** तथा **उदयशकर भट्ट** आदि को स्वच्छ दतावादी प्रवृत्ति का प्रतिनिधि कवि घोषित किया है वे सभी इस नूतन काव्यान्दोलन के प्रारम्भिक कवि माने जा सकते है प्रतिनिधि कवि नही।

डॉ० नामवर सिह भी अपनी बहुचर्चित पुस्तक **आधुनिक साहित्य की प्रवृत्तियॉ** मे **आचार्य रामचद्र शुक्ल** द्वारा प्रतिपादित इस परिभाषा को अत्यन्त सीमित अर्थ की परिभाषा घोषित करते है। आपका तर्क है कि **आचार्य शुक्ल** की इस सीमित अर्थवाली परिभाषा के क्षेत्र के अन्तर्गत सम्पूर्ण छायावादी कवि भी नही आ सके केवल **श्रीधर पाठ्क, रामनरेश त्रिपाठी, गुरुभक्त सिह, सियाराम शरण गुप्त, सुभद्रा कुमारी चौहान, उदयशकर भट्ट** तथा सभवत **नवीन** और **माखनलाल चतुर्वेदी** को छोड़कर। **शुक्ल जी** की इस परिभाषा मे छायावादी रहस्य की भावना भी स्थान पाने से वचित रह गई और यही कारण था कि Romanticism का अनुवाद स्वच्छन्दतावाद छायावाद का केवल एक अग बन गया और छायावाद सम्पूर्ण स्वच्छन्दतावाद का वाचक।

डॉ० नामवर सिह स्वच्छन्दतावाद को अत्यन्त व्यापक रूप से विश्लेषित करते हुए इसे एक अन्तर्राष्ट्रीय अवधारणा कहते है। उनके कथनानुसार यह एक अन्तर्राष्ट्रीय अवधारणा है। रोमाटिसिज्म को रोमाटिसिज्मस कहना चाहिए अर्थात् एकवचन नही बहुवचन। क्योंकि कोई एक रोमाटिसिज्म था ही नही। हिन्दी मे ही देखे तो **पन्त** और **निराला** मे बड़ा फर्क है। **प्रसाद, महादेवी, पन्त, निराला** सब अलग-अलग हैं। देखा जाये तो निराला का सौन्दर्य शास्त्र वह नही जो **पन्त** का था। कुछ बाते जरूर सामान्य थी लेकिन बहुत-सी अलग भी है।[2]

डॉ० नामवर सिह 'कविता के नए प्रतिमान' मे क्रान्तिकारी स्वच्छन्दतावाद का आह्वान करते है। **मुक्तिबोध** की कविता **'अँधेरे'** के सदर्भ मे वे **'क्रान्तिकारी स्वच्छन्दतावाद'** का उल्लेख करते है। इसी क्रान्तिकारी स्वच्छन्दतावाद को **डॉ० अजब सिह** ने अपनी बहुचर्चित पुस्तक **नवस्वच्छन्दतावाद** मे नवस्वच्छन्दतावाद की प्रमुख प्रवृत्तियो के रूप मे विश्लेषित किया है।

डॉ० नामवर सिह के विचारो का पूर्वाभास वर्षों पूर्व **डॉ० हजारीप्रसाद द्विवेदी** द्वारा **डॉ० देवराज उपाध्याय** की पुस्तक **'रोमाटिक साहित्य -शास्त्र'** की भूमिका मे व्यक्त विचारो से हो गया था। **डॉ० हजारी प्रसाद द्विवेदी** के कथनानुसार यह कहना कि **कबीर** का रहस्यवाद **रवीन्द्रनाथ** का रहस्यवाद है या **मीरा** का ही रूपान्तर **महादेवी वर्मा** है पूर्ण सत्य नही है। ऐसी बाते विचारगत गभीरता का निदर्शन नही है। इतिहास अपने आपको चाहे तथ्यात्मक जगत् मे कभी-कभी दुहरा भी देता हो परन्तु विचारो की दुनिया मे वह जो गया तो गया। मनुष्य का जीवन अपना उपमान आप ही है।[3]

1 आचार्य रामचद्र शुक्ल *हिन्दी साहित्य का इतिहास* 13वाँ स० पृ० 628
2 सकलन एव सम्पादन समीक्षा ठाकुर कहना होगा पृ० 110
3 डॉ० देवराज उपाध्याय *रोमाटिक साहित्य शास्त्र, भूमिका* डॉ० हजारीप्रसाद द्विवेदी पृ० 4

अत **डॉ० हजारी प्रसाद द्विवेदी** स्वच्छन्दतावाद को इस सम्पूर्ण विश्व की अवधारणा मानते हे सम्पूर्ण युग की चेतना का सार मानते हुए कहते है कि यह साहित्य अपने युग की सम्पूण चेतना और विचार सघर्ष की सुन्दर कलात्मक अभिव्यक्ति है। यह समविरोध की ही चीज है। [1]

डॉ० देवराज उपाध्याय अपनी पुस्तक **रोमाटिक साहित्य-शास्त्र** मे कहते है कि रामाटिक काव्य तो स्वत प्रसूत काव्य है। इसके लिए कवि को परिश्रम नही करना पड़ता है न रोमाटिक कविता को तराशने की आवश्यकता ही पड़ती है। वह तो स्वय की अभिव्यक्ति के लिए कवि को विवश कर देती है। यह किसी बाहरी प्रभाव के कारण नही वरन् कवि के अन्त करण की आवाज होती है। उस युग की आत्मा की आवाज होती है जो कवि के माध्यम से प्रकट होती है। यह अपनी अभिव्यक्ति की भाषा भी अपने साथ लेकर आती है। उनके अनुसार सत्य की आन्तरिक ज्योति अपनी अभिव्यक्ति की भाषा को साथ लिये आती है। गान आह से निकलता है और ऑखो से निकल कविता चुपचाप बह जाती है। इस मनोवृत्ति से प्रसूत कविता रोमाटिक कविता होगी। [2]

डॉ० उपाध्याय रोमाटिक काव्य को क्लासिकल काव्य से इतर भिन्न अवस्था मे रख रोमाटिक काव्य को पुन विश्लेषित करते है क्लासिकल काव्य मे क्या नही है? सब कुछ हैं रूप है रग है अग सौष्ठव है और है बाहरी साज-सज्जा और नही है तो केवल आन्तरिक जीवन का प्राण स्पन्दन। [3]

आचार्य नन्ददुलारे वाजपेयी के अनुसार स्वातत्र्य की लालसा और बन्धनो का त्याग गेमाटिक धारा के रूप मे व्याप्त है। [4]

आचार्य नन्ददुलारे वाजपेयी न स्वतत्रता की अभिलाषा और प्राचीन रूढ़ि बन्धनो के प्रति विद्रोह व अमान्यता की भावना को स्वच्छन्दतावादी कविता के लिए आवश्यक बताया है किन्तु इस सदर्भ मे वह पुन तर्क देते है कि रोमाटिसिज़्म मे वस्तु का उदात्त होना आवश्यक नही साधारण से साधारण वस्तु मे भी काव्यात्मक चित्रण बनने की क्षमता है यह स्वच्छन्दतावादी मत है। रोमाटिक काव्य पद्धति मे चित्रण के योग्य कोई सीमा निर्धारित नही है [5] अत **आचार्य वाजपेयी** का साधारण वस्तु का अकन उनका स्वच्छन्दतावादी मत है ऐसा विचार **डॉ० अजब सिह** का है।

डॉ० नामवर सिह स्वच्छन्दतावाद को प्राचीन रूढ़ियो से मुक्ति की आकाक्षा[6] मानते है किन्तु स्वच्छन्दतावाद केवल विद्रोह नही है प्रकृति के प्रति गम्भीर प्रेम व्यक्तिगत जीवानुभूति स्वच्छन्द व रमणीय कल्पना आदि भी है।

कवि आलोचक **डॉ० रामेश्वरलाल खण्डेलवाल तरुण'** का कथन है कि हिन्दी स्वच्छन्दतावाद या रोमासवाद के मूलतत्व प्राय॰ वे थे जो अग्रेजी कविता के रोमासवाद मे प्राप्त होते है अर्थात् रूढ़ियो से मुक्ति व्यक्तिगत जीवानुभूति स्वच्छन्द व रमणीय कल्पना प्रकृति के प्रति गम्भीर प्रेम तथा उसमे चेतन सत्ता का आरोप, अतीत और भविष्य के प्रति लालसा, ललक, बौद्धिकता के स्थान पर कोमल

1 डॉ० देवराज उपाध्याय *रोमाटिक साहित्य शास्त्र भूमिका* डॉ० हजारीप्रसाद द्विवेदी, पृ० 4
2 डॉ० देवराज उपाध्याय *रोमाटिक साहित्य शास्त्र* पृ० 19
3 वही पृ० 126
4 आचार्य नन्ददुलारे वाजपेयी *आधुनिक साहित्य* पृ० 439
5 वही पृ० 443
6 डॉ० नामवर सिह *छायावाद* पृ० 15

भावना का प्राधान्य मुक्त छन्द विधान आदि। [1] यह विश्लेषण स्वच्छन्दतावादी प्राय सम्पूर्ण प्रवृत्तियो की झलक देता है।

डॉ० विश्वनाथ प्रताप मिश्र 'हिन्दी का समसामयिक इतिहास' मे स्वच्छन्दतावाद को सामाजिक बन्धनो को तोड़कर जीवन मे स्वच्छन्द विचरण करने की लालसा [2] कहकर विश्लेषित करते है।

मानविकी पारिभाषिक कोश का सम्पादन करते हुए **डॉ० नगेन्द्र** स्वच्छन्दतावाद को इस प्रकार विश्लेषित करते हैं राष्ट्रीय अतीत तथा मध्य युग से सम्बद्ध दृश्यो घटनाओं एव पात्रो का चित्रण, अमूर्त की अपेक्षा मूर्त की स्वीकृति, प्राकृतिक दृश्यावली तथा तज्जनित प्रबल रागात्मक अद्भुत तथा विस्मयोत्पादक व्यापार आत्मा और परमात्मा स्वप्न तथा अवचेतन ये सभी स्वच्छन्दतावाद के प्रिय विषय रहे है। गीतात्मकता, दिवास्वप्नबहुलता कल्पना तथा उत्प्रेरणा इस साहित्य के प्रमुख लक्षण है। [3]

डॉ० नगेन्द्र के इस विश्लेषण मे स्वच्छन्दतावाद का मूल तत्त्व विद्रोह का आकलन नही हो पाया है।

डॉ० रामचन्द्र मिश्र का कथन है कि स्वच्छन्दतावादी काव्य, काव्य की विशेष सर्जना है जो कल्पना और आवेग से युक्त परम्परागत विधान और बाह्यग नियत्रण से विमुक्त और मानसिक सरलता और अकृत्रिमता से सम्पन्न मानसिक तथा लोकभूमि की भावनाओं से युक्त है। [4]

इस विश्लेषण मे स्वच्छन्दतावाद के प्राय॰ सभी तत्त्वो का आकलन तो है किन्तु मनोवैज्ञानिक और दार्शनिक सदर्भ मे कोई विवरण लेखक की ओर से नही मिला अत यह परिभाषा स्वच्छन्दतावाद के सम्पूर्ण घेरे को व्यक्त करने मे असमर्थ है। फलत यह परिभाषा भी पूर्ण नही कही जा सकती है। **डॉ० अजब सिह** के अनुसार स्वच्छन्दतावाद नवीन अनुभूति की भूमि पर पुरानी परम्पराओं और रूढ़ियो से विद्रोह कर चेतन प्रकृति तथा लोक-जीवन की अनुभूति को वाणी देता है। नये काव्य रूपो, नयी शैलियो को पल्लवित एव पुष्पित करता है। चेतन और अचेतन विषय और विषयी अन्त और बाह्य मानव और प्रकृति दो विरोधी तत्वो का समन्वय भी करता है तथा इसकी दुनियाँ पूरी तरह से नयी होती है। [5] **डॉ० सिह** द्वारा दिये गये इस विश्लेषण मे स्वच्छन्दतावाद के प्राय सभी तत्त्वो को सम्मिलित करने का प्रयास किया गया है साथ ही स्वच्छन्दतावाद को एक विस्तृत फलक पर विश्लेषित भी किया है तथा इसका क्षेत्र विस्तार कर दिया है। स्वय मेरे विचार मे स्वच्छन्दतावाद कुछ इस प्रकार भी विश्लेषित किया जा सकता है

वह विस्मय एव रहस्य से पूर्ण, दार्शनिकता का पुट लिये आध्यात्मिकता से मण्डित स्वत प्रसूत काव्य जो यथार्थ की भूमि पर नवीन अनुभूतियो के वातावरण मे बोधातीत सत्य के प्रति विचारशील युग की सम्पूर्ण चेतना व विचारो से सघर्ष करता हुआ, प्रत्येक नियम व परम्परा को

1 डॉ० रामेश्वर लाल खण्डेलवाल *आधुनिक हिन्दी कविता मे प्रेम और सौन्दर्य* पृ० 325
2 डॉ० अजब सिह *नवस्वच्छन्दतावाद* पृ० 17
3 डॉ० नगेन्द्र *मानविकी परिभाषिक कोश (साहित्य खण्ड)* पृ० 226 227
4 डॉ० रामचन्द्र मिश्र, *प० श्रीधर पाठक तथा हिन्दी का पूर्व स्वच्छन्दतावादी काव्य* पृ० 46
5 डॉ० अजब सिह *नवस्वच्छन्दतावाद* पृ० 18

तोड़ता हुआ स्वातन्त्र्य का पक्षधर राष्ट्र एव प्रकृति प्रेम से पुलकित प्रवृत्ति से चचल कृत्रिमता स परे सहज स्वाभाविक अभिव्यक्ति लिये जो ऐन्द्रिय ग्राह्य हो अवचेतन मस्तिष्क पर प्रतिबिम्बित हो मानसिक व्यापार मे सलग्न हो जाये अन्त एव बाह्य जड़ तथा चेतन दो परस्पर विराधी तत्वो को इस प्रकार समन्वित कर दे कि व एक ही प्रतीत हो जो कवि के अन्त करण की आवाज हो आन्तरिक स्पन्दन जिसका प्राण हो आन्तरिक अदम्य प्रेरणा जिसकी जननी हो जिसका ससार वह स्वय हो अन्तत आनन्दोद्रेक जिसका परम लक्ष्य हो वही स्वच्छन्दतावादी काव्यधारा का उत्स बनता है।

स्वच्छन्दतावादी कविता का जो विकसित रूप हमे आज मिलता है वह इसक क्रमिक विकास का परिणाम है। यूँ तो स्वच्छन्दतावादी कविता का शनै शनै क्रमश विकास हुआ है किन्तु स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियो की रेखा **भारतेन्द-युग** से ही उभरती दिखाई देती है। **बोधा, ठाकुर** और **घनानन्द** के काव्यो मे स्वच्छन्दतावाद के अकुर स्पष्टत दृष्टिगोचर होते है। **राजा लक्ष्मणप्रसाद सिह** द्वारा किये गये हिन्दी अनुवादो **शकुन्तला'** एव **मेघदूत** म भी स्वच्छन्दतावादी प्रम तत्त्व व्यक्त हुआ है। **बदरीनारायण चौधरी प्रेमघन'** मे भी स्वच्छन्दतावादी तत्वो के अकुर फूट पड़े है। इसमे वह **भारतेन्दु** से भी कही आगे निकल गये है। **'प्रेमघन'** की **कजलियॉ** एव **लावनियॉ** अधिक लौकिक और ग्रामीण है। काव्य मे व्यक्तिवाद और प्रेमपरक शृगारी काव्य के दर्शन **ठाकुर जगमोहन सिह** के काव्य मे मिलता है। इनके काव्य मे प्रेम बड़े ही उदात्त रूप मे विद्यमान है वह स्वय अपनी श्यामा के श्यामसुन्दर दिखायी देते है। प्रेम का यह उदात्त रूप स्वच्छन्दतावाद मे अत्यन्त अपेक्षित है। **भारतेन्दु-युग** मे स्वच्छन्दतावादी कवि कहलाने का श्रेय **ठाकुर जगमोहन सिह** को ही जाता है। भाषा एव छन्द आदि क सम्बन्ध मे वे प्राचीन परम्परा को नही तोड़ सके कोई नवीनता नही ला सके तथा परम्परावादी ही सिद्ध हुए। अत उनके काव्य मे शास्त्रीयता के भी दर्शन होते है।

भारतेन्दु-युग मे स्वच्छन्दतावादी चेतना का कोई स्पष्ट रूप नही मिलता। इस युग मे भाषा छन्द एव भाव के क्षेत्र मे कुछ कुछ नवीनता आने के कारण प्रेरक शक्ति अवश्य उत्पन्न हो गयी थी कि जिसने रूढ़िवादिता को समाप्त करने की चेष्टा की थी किन्तु स्वच्छन्दतावादी काव्य की प्रवृत्तियॉ नही दिखायी देती। स्वच्छन्दतावादी भावना की अस्पष्टता के मध्य **भारतेन्दु काल** मे कविता की जो धारा उद्भूत हुई आगे चलकर उसका विकास छायावाद के रूप मे हुआ। स्वच्छन्दतावादी कविता छायावादी कविता के समानान्तर भले ही उससे निर्बल किन्तु चलती रही किन्तु आगे जाकर स्वच्छन्दतावाद और छायावाद आपस मे इतने घुल मिल गये कि उन्हे एक ही समझा जाने लगा।

यद्यपि स्वच्छन्दतावादी काव्य के अकुर **भारतेन्दु-काल** के काव्य मे ही फूट पड़े थे किन्तु रीतिकाल की रूढ़ियो को तोड़कर स्वच्छन्द काव्य की रचना का श्री गणेश **प० श्रीधर पाठक** से ही माना जाता है। अत **प० श्रीधर पाठक** ही स्वच्छन्दतावादी काव्य के अग्रदूत माने जा सकते है। सच्चे स्वच्छन्दतावादी कवि होने के कारण ही स्वच्छन्दतावादी आन्दोलन को उनसे अत्यधिक बल मिला था। इस काव्यान्दोलन मे **प० श्रीधर पाठक** का साथ देनेवालो मे **प० रामनरेश त्रिपाठी, रूपनारायण पाण्डेय,** तथा **मुकुटधर पाण्डेय** का नाम अग्रणी है। **आचार्य रामचद्र शुक्ल हिन्दी साहित्य का इतिहास** मे इस सदर्भ मे लिखते है कि स्वच्छन्दतावाद का आभास पहले पहल **प० श्रीधर पाठक** ने ही दिया और सब बातो पर विचार करने पर **प० श्रीधर पाठक** ही सच्चे स्वच्छन्दतावाद रोमाटिसिज़्म के प्रवर्तक ठहरते है।[1]

1 डॉ० अजब सिह *आधुनिक काव्य की स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियॉं* पृ० 12

आचार्य शुक्ल द्वारा प्रतिपादित स्वच्छन्दतावाद के विकास की रूपरेखा बाद मे मान्यता नही प्राप्त कर सकी। **आचार्य शुक्ल** के अनुसार न **प० श्रीधर** के बाद सच्चे और स्वाभाविक स्वच्छन्दतावाद का मार्ग हमारे काव्य क्षेत्र के बीच चल न पाया क्योंकि एक ओर उसी समय पिछले सस्कृत काव्य सस्कारो के साथ **प० महावीरप्रसाद द्विवेदी** हिन्दी साहित्य क्षेत्र मे आये जिससे इतिवृत्तात्मक पद्यो का खड़ी बोली मे ढेर लगने लगा और दूसरी ओर **रवीन्द्र बाबू** की **गीताजलि** की धूम मच जाने के कारण नवीनता प्रदर्शन के इच्छुक नये कवियो मे से कुछ लोग तो बग भाषा की रहस्यात्मक कवियो की रूपरेखा लाने मे लगे कुछ लोग पाश्चात्य काव्य पद्धति को विश्व-साहित्य का लक्षण समझ उसके अनुकरण मे तत्पर हुए इन बाधाओं के कारण इने गिने नये कवि ही स्वच्छन्दता के स्वाभाविक पथ पर चले।[1]

अत० **प० श्रीधर पाठक** के काव्य से ही सच्चे और स्वाभाविक स्वच्छन्दतावाद का सूत्रपात माना जाता है। **प० श्रीधर** तथा उनके समकालीन स्वच्छन्दतावादी कवियो के काव्यो मे सीधी सरल भाषा वनवैभव एकान्त प्रणय सौन्दर्यप्रियता अतीत प्रेम और देशभक्ति आदि स्वच्छन्दतावाद के प्रमुख तत्त्व उन्मुक्त भाव से प्रकट हुए है।[2] वैयक्तिक विद्रोहभाव जो आगे चलकर छायावाद मे विकसित हुआ इन कवियो के काव्य मे नही मिलता। इन कवियो की काव्य सरिता मे स्वच्छन्द धारा का प्रवाह गतिशील दृष्टिगत होता है। इस सम्बन्ध मे **आचार्य रामचद्र शुक्ल** ने **'हिन्दी साहित्य का इतिहास'** मे उल्लेख किया है इन कवियो मे से अधिकाश दोरगी कवि थे जो ब्रजभाषा मे शृगार वीर भक्ति आदि की पुरानी परिपाटी की रचना कवित्त सवैयो या गेय पदो आदि मे करते चले आ रहे थे और खड़ी बोली का प्रचार खूब बढ़ता दिखायी देता था और काव्य मे प्रवाह के लिए कुछ नयी-नयी भूमियॉ भी दिखाई पड़ती थी।[3] अत स्वच्छन्दतावाद के विकास की जब भी चर्चा होगी **प० श्रीधर पाठक** का नाम सर्वप्रथम स्मरण किया जायेगा। वास्तव मे **प० श्रीधर पाठक** ही हिन्दी स्वच्छन्दतावादी साहित्य के जनक है। **प० श्रीधर** के **अनुयायियो मे प० श्री रामनरेश त्रिपाठी** का नाम अग्रणी है। **प० रामनरेश त्रिपाठी** की **मिलन, पथिक,** और **स्वप्न** खण्ड काव्यो मे स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियॉ कल्पना व भावना के साथ मिश्रित है।[4] कल्पना व भावना दोनो ही स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियॉ है अत **प० रामनरेश त्रिपाठी** ही सच्चे अर्थों मे **प० श्रीधर** के अनुयायी और पथ-बटोही है। **प० रामनरेश** ने ही **प० श्रीधर** की स्वच्छन्द काव्यधारा की परम्परा को आगे बढ़ाया तथा स्वच्छन्दतावाद के विकास मे अपना परस्पर योगदान दिया।

प० श्रीधर पाठक ने काव्य की स्वच्छन्द धारा की जो सरिता प्रवाहित की वह चरम परिणति को प्राप्त हुई **प्रसाद, निराला, पत** तथा **महादेवी** की कविताओं मे। **द्विवेदी-युग** मे सरल भाषा को प्रयोग मे लाया जाता था किन्तु भाषा की क्लिष्टता छायावादी काव्य मे दिखायी दी। इस काव्य मे प्रेम सौन्दर्य की अभिव्यक्ति मे स्पष्टता खुलापन एव अनुभूति की अभिव्यजना भली प्रकार नही हो पायी है क्योंकि इस काल के कवियो के काव्यो मे आध्यात्मिकता का आवरण पड़ा है जिससे प्रेम सौन्दर्य के वर्णन मे कवि परम्परावश आगे नही बढ़ते। छायावादी कवियो के काव्य मे अतिशय कल्पनाशीलता भावुकता व्यक्तिवादिता आदि प्रवृत्तियॉ प्रचुर मात्रा मे मिलती है

1 डॉ० अजब सिह *आधुनिक काव्य की स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियाँ* पृ० 12
2 डॉ० अजब सिंह *आधुनिक कविता स्वच्छन्दतावादी उपलब्धियाँ नागरी पत्रिका जून जुलाई* 75
3 डॉ० अजब सिह *आधुनिक काव्य की स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियाँ* पृ० 38
4 वही पृ० 66

छायावाद के बाद अनुभूतिपरक कवियो मे **बालकृष्ण शर्मा नवीन,' हरिवश राय बच्चन' रामधारी सिह 'दिनकर', भगवतीचरण वर्मा, नरेन्द्र शर्मा, रामेश्वर शुक्ल अचल, गोपाल सिह नेपाली** एव **आर० सी० प्रसाद सिह** प्रमुख है। इन कवियो मे प्रेमानुभूति की अभिव्यक्ति मे सच्चाई के साथ साथ निराशा व विद्रोह का स्वर एव मानववादी स्वर मुखरित हुआ है।

छायावादी कविता के साथ-साथ प्रगतिवाद भी आगे बढ़ रहा था। छायावाद के क्रातिकारी रूप का अगला चरण ही यह प्रगतिवाद था। रोमाटिक वृत्ति का तीव्र विरोधी किन्तु कला के स्तर पर अपने आपको पुष्ट न बना सका यही उसकी अल्पावधि का कारण भी था। लोक सस्कृति और लोक-जीवन इस काल के कवियो का प्रिय विषय था। **पत** की **'ग्राम्या,' निराला** के **'बेला, नये पत्ते', केदारनाथ अग्रवाल** की **'युग की गगा' त्रिलोचन शास्त्री** की **धरती'** तथा **डॉ० रामविलास शर्मा** की कविताऍ इसका अत्यन्त सजीव उदाहरण है।

प्रयोगवादी कवियो के काव्य मे रोमानी प्रवृत्ति विद्यमान है। **अज्ञेय** के **भग्न दूत** और **चिन्ता** मे स्वच्छन्दतावादी काव्यधारा का बहाव स्पष्ट दिखायी दता है। **प्रभाकर माचवे** की कविताओं म भी स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियॉ मिलती है। छायावादी काव्य के बाद व्यक्तिवाद जो प्रगतिवादी कवियो के काव्य से लुप्त हो गया था प्रयोगवाद मे पुन॰ अस्तित्व को प्राप्त होता है किन्तु छायावादी व्यक्तिवाद से भिन्न अवस्था मे यह प्रयोगवाद मे पुन प्रवेश करता है। यह व्यक्तिवादी भावना काव्य परिसर मे नए विचार नयी प्रेरणा और नयी अनुभूति लेकर हिन्दी मे आयी थी और यही व्यक्तिवाद हमारी मानव चेतना का प्राण था।

नयी कविताओं मे जनजीवन तथा साधारण विषय भी कविताओं का प्रतिपाद्य बनने लगा है जो कि एक स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्ति है। नयी कविताओं पर अग्रेजी के रोमानटिसिज्म का सीधा प्रभाव है। इस काल के कवि अपनी कविताओं के लिए **LyricalBallads** तथा **LiterariaBiographia** को ही आधार मानते है और उसी के आधार पर अपनी कविताए सॅवारते है। नयी कविता और नवगीतकारो के काव्यो मे स्वच्छन्दतावादी और नवस्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियॉ दोनो ही प्रचुर मात्रा मे अपने सघन रूप मे दिखायी पड़ती है। इन कवियो मे प्रमुख है **अज्ञेय, मुक्तिबोध, रामेश्वरलाल खण्डेलवाल 'तरुण', धर्मवीर भारती, केदारनाथ सिह, शमशेर बहादुर सिह, जानकी बल्लभ शास्त्री, गिरिजाकुमार माथुर, शभुनाथ सिह, ठाकुरप्रसाद सिह, रामदरश मिश्र, प्रेमशकर** तथा **अशोक वाजपेयी**।

हिन्दी स्वच्छन्दतावादी समीक्षा के विकास मे **आचार्य रामचद्र शुक्ल** का प्रारम्भिक योगदान महत्त्वपूर्ण है। **आचार्य शुक्ल** ने ही स्वच्छन्दतावाद शब्द को हिन्दी रूप दिया है। **आचार्य शुक्ल** ही वह सर्वप्रथम आलोचक है जिन्होने स्वच्छन्दतावाद को छायावाद के क्रम-अनुक्रम मे विश्लेषित किया था। अपने **हिन्दी साहित्य के इतिहास** मे सर्वप्रथम अग्रेजी मे रोमाटिसिज़्म को हिन्दी मे स्वच्छन्दतावाद के नाम से पुकारा तथा इसी क्रम मे स्वच्छन्दतावाद और छायावाद को विश्लेषित किया। **आचार्य शुक्ल** छायावाद को स्वच्छन्दतावाद की एक विकसित शैली मानते है।[26] स्वच्छन्दतागद के विश्लेषण और अनुशीलन के वे ही अग्रदूत माने जाते है। उनके प्रयासो के फलस्वरूप ही हिन्दी स्वच्छन्दतावादी समीक्षा के विकास का प्रारम्भ होता है।

1 डॉ० अजब सिह *आधुनिक काव्य की स्वच्छन्दतावादी प्रवृतियॉं* पृ० 83

आचार्य शुक्ल द्वारा प्रतिपादित स्वच्छन्दतावाद के विकास की रूपरेखा बाद मे मान्यता नही प्राप्त कर सकी। **आचार्य शुक्ल** के अनुसार न **प० श्रीधर** के बाद सच्चे और स्वाभाविक स्वच्छन्दतावाद का मार्ग हमारे काव्य क्षेत्र के बीच चल न पाया क्योंकि एक ओर उसी समय पिछले सस्कृत काव्य सस्कारो के साथ **प० महावीरप्रसाद द्विवेदी** हिन्दी साहित्य क्षेत्र मे आये जिससे इतिवृत्तात्मक पद्यो का खड़ी बोली मे ढेर लगने लगा और दूसरी ओर **रवीन्द्र बाबू** की **गीताजलि** की धूम मच जाने के कारण नवीनता प्रदर्शन के इच्छुक नये कवियो मे से कुछ लोग तो बग भाषा की रहस्यात्मक कवियो की रूपरेखा लाने मे लगे कुछ लोग पाश्चात्य काव्य पद्धति को विश्व-साहित्य का लक्षण समझ उसके अनुकरण मे तत्पर हुए इन बाधाओं के कारण इने गिने नये कवि ही स्वच्छन्दता के स्वाभाविक पथ पर चले।[1]

अत० **प० श्रीधर पाठक** के काव्य से ही सच्चे और स्वाभाविक स्वच्छन्दतावाद का सूत्रपात माना जाता है। **प० श्रीधर** तथा उनके समकालीन स्वच्छन्दतावादी कवियो के काव्यो मे सीधी सरल भाषा वनवैभव एकान्त प्रणय सौन्दर्यप्रियता अतीत प्रेम और देशभक्ति आदि स्वच्छन्दतावाद के प्रमुख तत्त्व उन्मुक्त भाव से प्रकट हुए है।[2] वैयक्तिक विद्रोहभाव जो आगे चलकर छायावाद मे विकसित हुआ इन कवियो के काव्य मे नही मिलता। इन कवियो की काव्य सरिता मे स्वच्छन्द धारा का प्रवाह गतिशील दृष्टिगत होता है। इस सम्बन्ध मे **आचार्य रामचद्र शुक्ल** ने **'हिन्दी साहित्य का इतिहास'** मे उल्लेख किया है इन कवियो मे से अधिकाश दोरगी कवि थे जो ब्रजभाषा मे शृगार वीर भक्ति आदि की पुरानी परिपाटी की रचना कवित्त सवैयो या गेय पदो आदि मे करते चले आ रहे थे और खड़ी बोली का प्रचार खूब बढ़ता दिखायी देता था और काव्य मे प्रवाह के लिए कुछ नयी-नयी भूमियॉ भी दिखाई पड़ती थी।[3] अत स्वच्छन्दतावाद के विकास की जब भी चर्चा होगी **प० श्रीधर पाठक** का नाम सर्वप्रथम स्मरण किया जायेगा। वास्तव मे **प० श्रीधर पाठक** ही हिन्दी स्वच्छन्दतावादी साहित्य के जनक है। **प० श्रीधर** के **अनुयायियो मे प० श्री रामनरेश त्रिपाठी** का नाम अग्रणी है। **प० रामनरेश त्रिपाठी** की **मिलन, पथिक,** और **स्वप्न** खण्ड काव्यो मे स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियॉ कल्पना व भावना के साथ मिश्रित है।[4] कल्पना व भावना दोनो ही स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियॉ है अत **प० रामनरेश त्रिपाठी** ही सच्चे अर्थों मे **प० श्रीधर** के अनुयायी और पथ-बटोही है। **प० रामनरेश** ने ही **प० श्रीधर** की स्वच्छन्द काव्यधारा की परम्परा को आगे बढ़ाया तथा स्वच्छन्दतावाद के विकास मे अपना परस्पर योगदान दिया।

प० श्रीधर पाठक ने काव्य की स्वच्छन्द धारा की जो सरिता प्रवाहित की वह चरम परिणति को प्राप्त हुई **प्रसाद, निराला, पत** तथा **महादेवी** की कविताओं मे। **द्विवेदी-युग** मे सरल भाषा को प्रयोग मे लाया जाता था किन्तु भाषा की क्लिष्टता छायावादी काव्य मे दिखायी दी। इस काव्य मे प्रेम सौन्दर्य की अभिव्यक्ति मे स्पष्टता खुलापन एव अनुभूति की अभिव्यजना भली प्रकार नही हो पायी है क्योंकि इस काल के कवियो के काव्यो मे आध्यात्मिकता का आवरण पड़ा है जिससे प्रेम सौन्दर्य के वर्णन मे कवि परम्परावश आगे नही बढ़ते। छायावादी कवियो के काव्य मे अतिशय कल्पनाशीलता भावुकता व्यक्तिवादिता आदि प्रवृत्तियॉ प्रचुर मात्रा मे मिलती है

1 डॉ० अजब सिह *आधुनिक काव्य की स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियॉ* पृ० 12
2 डॉ० अजब सिह *आधुनिक कविता स्वच्छन्दतावादी उपलब्धियॉ नागरी पत्रिका जून जुलाई 75*
3 डॉ० अजब सिह *आधुनिक काव्य की स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियॉ* पृ० 38
4 वही पृ० 66

छायावाद के बाद अनुभूतिपरक कवियो मे **बालकृष्ण शर्मा नवीन,' हरिवश राय बच्चन' रामधारी सिह 'दिनकर', भगवतीचरण वर्मा, नरेन्द्र शर्मा, रामेश्वर शुक्ल अचल, गोपाल सिंह 'नेपाली** एव **आर० सी० प्रसाद सिह** प्रमुख है। इन कवियो मे प्रेमानुभूति की अभिव्यक्ति मे सच्चाई के साथ साथ निराशा व विद्रोह का स्वर एव मानववादी स्वर मुखरित हुआ है।

छायावादी कविता के साथ साथ प्रगतिवाद भी आगे बढ़ रहा था। छायावाद के क्रातिकारी रूप का अगला चरण ही यह प्रगतिवाद था। रोमाटिक वृत्ति का तीव्र विरोधी किन्तु कला के स्तर पर अपने आपको पुष्ट न बना सका यही उसकी अल्पावधि का कारण भी था। लोक सस्कृति और लोक-जीवन इस काल के कवियो का प्रिय विषय था। **पत** की **ग्राम्या,' निराला** के **'बेला, नये पत्ते', केदारनाथ अग्रवाल** की **युग की गगा' त्रिलोचन शास्त्री** की **धरती'** तथा **डॉ० रामविलास शर्मा** की कविताएँ इसका अत्यन्त सजीव उदाहरण है।

प्रयोगवादी कवियो के काव्य मे रोमानी प्रवृत्ति विद्यमान है। **अज्ञेय** के **भग्न दूत** और **चिन्ता** मे स्वच्छन्दतावादी काव्यधारा का बहाव स्पष्ट दिखायी देता है। **प्रभाकर माचवे** की कविताओं म भी स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियॉ मिलती है। छायावादी काव्य के बाद व्यक्तिवाद जो प्रगतिवादी कवियो के काव्य से लुप्त हो गया था प्रयोगवाद मे पुन अस्तित्व को प्राप्त होता है किन्तु छायावादी व्यक्तिवाद से भिन्न अवस्था मे यह प्रयोगवाद मे पुन प्रवेश करता है। यह व्यक्तिवादी भावना काव्य परिसर मे नए विचार नयी प्रेरणा और नयी अनुभूति लेकर हिन्दी मे आयी थी और यही व्यक्तिवाद हमारी मानव चेतना का प्राण था।

नयी कविताओं मे जनजीवन तथा साधारण विषय भी कविताओं का प्रतिपाद्य बनने लगा है जो कि एक स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्ति है। नयी कविताओं पर अग्रेजी के रोमानटिसिज्म का सीधा प्रभाव है। इस काल के कवि अपनी कविताओं के लिए **Lyrical Ballads** तथा **Literaria Biographia** को ही आधार मानते है और उसी के आधार पर अपनी कविताए सॅवारते है। नयी कविता और नवगीतकारो के काव्यो मे स्वच्छन्दतावादी और नवस्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियॉ दोनो ही प्रचुर मात्रा मे अपने सघन रूप मे दिखायी पड़ती है। इन कवियो मे प्रमुख है **अज्ञेय, मुक्तिबोध, रामेश्वरलाल खण्डेलवाल 'तरुण', धर्मवीर भारती, केदारनाथ सिह, शमशेर बहादुर सिह, जानकी बल्लभ शास्त्री, गिरिजाकुमार माथुर, शभुनाथ सिह, ठाकुरप्रसाद सिह, रामदरश मिश्र, प्रेमशकर** तथा **अशोक वाजपेयी**।

हिन्दी स्वच्छन्दतावादी समीक्षा के विकास मे **आचार्य रामचद्र शुक्ल** का प्रारम्भिक योगदान महत्त्वपूर्ण है। **आचार्य शुक्ल** ने ही स्वच्छन्दतावाद शब्द को हिन्दी रूप दिया है। **आचार्य शुक्ल** ही वह सर्वप्रथम आलोचक है, जिन्होने स्वच्छन्दतावाद को छायावाद के क्रम-अनुक्रम म विश्लेषित किया था। अपने **हिन्दी साहित्य के इतिहास** मे सर्वप्रथम अग्रेजी मे रोमाटिसिज़्म को हिन्दी मे स्वच्छन्दतावाद' के नाम से पुकारा तथा इसी क्रम मे स्वच्छन्दतावाद और छायावाद को विश्लेषित किया। **आचार्य शुक्ल** छायावाद को स्वच्छन्दतावाद की एक विकसित शैली मानते है।[26] स्वच्छन्दतावाद के विश्लेषण और अनुशीलन के वे ही अग्रदूत माने जाते है। उनके प्रयासो के फलस्वरूप ही हिन्दी स्वच्छन्दतावादी समीक्षा के विकास का प्रारम्भ होता है।

1 डॉ० अजब सिह *आधुनिक काव्य की स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियाँ* पृ० 83

आचार्य शुक्ल द्वारा प्रतिपादित स्वच्छन्दतावाद के विकास की रूपरेखा बाद मे मान्यता नही प्राप्त कर सकी। **आचार्य शुक्ल** के अनुसार न **प० श्रीधर** के बाद सच्चे और स्वाभाविक स्वच्छन्दतावाद का मार्ग हमारे काव्य क्षेत्र के बीच चल न पाया क्योंकि एक ओर उसी समय पिछले सस्कृत काव्य सस्कारो के साथ **प० महावीरप्रसाद द्विवेदी** हिन्दी साहित्य क्षेत्र मे आये जिससे इतिवृत्तात्मक पद्यो का खड़ी बोली मे ढेर लगने लगा और दूसरी ओर **रवीन्द्र बाबू** की **गीताजलि** की धूम मच जाने के कारण नवीनता प्रदर्शन के इच्छुक नये कवियो मे से कुछ लोग तो बग भाषा की रहस्यात्मक कवियो की रूपरेखा लाने मे लगे कुछ लोग पाश्चात्य काव्य पद्धति को विश्व-साहित्य का लक्षण समझ उसके अनुकरण मे तत्पर हुए इन बाधाओं के कारण इने गिने नये कवि ही स्वच्छन्दता के स्वाभाविक पथ पर चले। [1]

अत० **प० श्रीधर पाठक** के काव्य से ही सच्चे और स्वाभाविक स्वच्छन्दतावाद का सूत्रपात माना जाता है। **प० श्रीधर** तथा उनके समकालीन स्वच्छन्दतावादी कवियो के काव्यो मे सीधी सरल भाषा वनवैभव एकान्त प्रणय सौन्दर्यप्रियता अतीत प्रेम और देशभक्ति आदि स्वच्छन्दतावाद के प्रमुख तत्त्व उन्मुक्त भाव से प्रकट हुए है। [2] वैयक्तिक विद्रोहभाव जो आगे चलकर छायावाद मे विकसित हुआ इन कवियो के काव्य मे नही मिलता। इन कवियो की काव्य सरिता मे स्वच्छन्द धारा का प्रवाह गतिशील दृष्टिगत होता है। इस सम्बन्ध मे **आचार्य रामचद्र शुक्ल** ने **'हिन्दी साहित्य का इतिहास'** मे उल्लेख किया है इन कवियो मे से अधिकाश दोरगी कवि थे जो ब्रजभाषा मे शृगार वीर भक्ति आदि की पुरानी परिपाटी की रचना कवित्त सवैयो या गेय पदो आदि मे करते चले आ रहे थे और खड़ी बोली का प्रचार खूब बढ़ता दिखायी देता था और काव्य मे प्रवाह के लिए कुछ नयी-नयी भूमियॉ भी दिखाई पड़ती थी। [3] अत स्वच्छन्दतावाद के विकास की जब भी चर्चा होगी **प० श्रीधर पाठक** का नाम सर्वप्रथम स्मरण किया जायेगा। वास्तव मे **प० श्रीधर पाठक** ही हिन्दी स्वच्छन्दतावादी साहित्य के जनक है। **प० श्रीधर** के **अनुयायियो मे प० श्री रामनरेश त्रिपाठी** का नाम अग्रणी है। **प० रामनरेश त्रिपाठी** की '**मिलन, पथिक,** और **स्वप्न** खण्ड काव्यो मे स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियॉ कल्पना व भावना के साथ मिश्रित है। [4] कल्पना व भावना दोनो ही स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियॉ है अत **प० रामनरेश त्रिपाठी** ही सच्चे अर्थो मे **प० श्रीधर** के अनुयायी और पथ-बटोही है। **प० रामनरेश** ने ही **प० श्रीधर** की स्वच्छन्द काव्यधारा की परम्परा को आगे बढ़ाया तथा स्वच्छन्दतावाद के विकास मे अपना परस्पर योगदान दिया।

प० श्रीधर पाठक ने काव्य की स्वच्छन्द धारा की जो सरिता प्रवाहित की वह चरम परिणति को प्राप्त हुई **प्रसाद, निराला, पत** तथा **महादेवी** की कविताओं मे। **द्विवेदी-युग** मे सरल भाषा को प्रयोग मे लाया जाता था किन्तु भाषा की क्लिष्टता छायावादी काव्य मे दिखायी दी। इस काव्य मे प्रेम सौन्दर्य की अभिव्यक्ति मे स्पष्टता खुलापन एव अनुभूति की अभिव्यजना भली प्रकार नही हो पायी है क्योंकि इस काल के कवियो के काव्यो मे आध्यात्मिकता का आवरण पड़ा है जिससे प्रेम सौन्दर्य के वर्णन मे कवि परम्परावश आगे नही बढ़ते। छायावादी कवियो के काव्य मे अतिशय कल्पनाशीलता भावुकता व्यक्तिवादिता आदि प्रवृत्तियॉ प्रचुर मात्रा मे मिलती है

1 डॉ० अजब सिह *आधुनिक काव्य की स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियाँ* पृ० 12
2 डॉ० अजब सिह *आधुनिक कविता स्वच्छन्दतावादी उपलब्धियाँ नागरी पत्रिका जून जुलाई* 75
3 डॉ० अजब सिह *आधुनिक काव्य की स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियाँ* पृ० 38
4 वही पृ० 66

छायावाद के बाद अनुभूतिपरक कवियो मे **बालकृष्ण शर्मा 'नवीन,' हरिवश राय बच्चन' रामधारी सिह 'दिनकर', भगवतीचरण वर्मा, नरेन्द्र शर्मा, रामेश्वर शुक्ल अचल, गोपाल सिह 'नेपाली** एव **आर० सी० प्रसाद सिह** प्रमुख है। इन कवियो मे प्रेमानुभूति की अभिव्यक्ति मे सच्चाई के साथ साथ निराशा व विद्रोह का स्वर एव मानववादी स्वर मुखरित हुआ है।

छायावादी कविता के साथ-साथ प्रगतिवाद भी आगे बढ़ रहा था। छायावाद के क्रातिकारी रूप का अगला चरण ही यह प्रगतिवाद था। रोमाटिक वृत्ति का तीव्र विरोधी किन्तु कला के स्तर पर अपने आपको पुष्ट न बना सका यही उसकी अल्पावधि का कारण भी था। लोक सस्कृति और लाक-जीवन इस काल के कवियो का प्रिय विषय था। **पत की ग्राम्या,' निराला के बेला, नये पत्ते', केदारनाथ अग्रवाल** की **'युग की गगा' त्रिलोचन शास्त्री** की **धरती'** तथा **डॉ० रामविलास शर्मा** की कविताएँ इसका अत्यन्त सजीव उदाहरण है।

प्रयोगवादी कवियो के काव्य मे रोमानी प्रवृत्ति विद्यमान है। **अज्ञेय** के **भग्न दूत** और **चिन्ता** मे स्वच्छन्दतावादी काव्यधारा का बहाव स्पष्ट दिखायी देता है। **प्रभाकर माचवे** की कविताओं म भी स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियॉ मिलती है। छायावादी काव्य के बाद व्यक्तिवाद जो प्रगतिवादी कवियो के काव्य से लुप्त हो गया था प्रयोगवाद मे पुन॰ अस्तित्व को प्राप्त होता है किन्तु छायावादी व्यक्तिवाद से भिन्न अवस्था मे यह प्रयोगवाद मे पुन प्रवेश करता है। यह व्यक्तिवादी भावना काव्य परिसर मे नए विचार नयी प्रेरणा और नयी अनुभूति लेकर हिन्दी मे आयी थी और यही व्यक्तिवाद हमारी मानव चेतना का प्राण था।

नयी कविताओं मे जनजीवन तथा साधारण विषय भी कविताओं का प्रतिपाद्य बनने लगा है जो कि एक स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्ति है। नयी कविताओं पर अग्रेजी के रोमानटिसिज्म का सीधा प्रभाव है। इस काल के कवि अपनी कविताओं के लिए **Lyrical Ballads** तथा **Literaria Biographia** को ही आधार मानते है और उसी के आधार पर अपनी कविताए सॅवारते है। नयी कविता और नवगीतकारो के काव्यो मे स्वच्छन्दतावादी और नवस्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियॉ दोनो ही प्रचुर मात्रा मे अपने सघन रूप मे दिखायी पड़ती है। इन कवियो मे प्रमुख है **अज्ञेय, मुक्तिबोध, रामेश्वरलाल खण्डेलवाल 'तरुण', धर्मवीर भारती, केदारनाथ सिह, शमशेर बहादुर सिह, जानकी बल्लभ शास्त्री, गिरिजाकुमार माथुर, शभुनाथ सिह, ठाकुरप्रसाद सिह, रामदरश मिश्र, प्रेमशकर** तथा **अशोक वाजपेयी**।

हिन्दी स्वच्छन्दतावादी समीक्षा के विकास मे **आचार्य रामचद्र शुक्ल** का प्रारम्भिक योगदान महत्त्वपूर्ण है। **आचार्य शुक्ल** ने ही स्वच्छन्दतावाद शब्द को हिन्दी रूप दिया है। **आचार्य शुक्ल** ही वह सर्वप्रथम आलोचक है जिन्होने स्वच्छन्दतावाद को छायावाद के क्रम-अनुक्रम मे विश्लेषित किया था। अपने **हिन्दी साहित्य के इतिहास** मे सर्वप्रथम अग्रेजी मे रोमाटिसिज़्म को हिन्दी मे स्वच्छन्दतावाद के नाम स पुकारा तथा इसी क्रम मे स्वच्छन्दतावाद और छायावाद को विश्लेषित किया। **आचार्य शुक्ल** छायावाद को स्वच्छन्दतावाद की एक विकसित शैली मानते है।[26] स्वच्छन्दतावाद के विश्लेषण और अनुशीलन के वे ही अग्रदूत माने जाते है। उनके प्रयासो के फलस्वरूप ही हिन्दी स्वच्छन्दतावादी समीक्षा के विकास का प्रारम्भ होता है।

1 डॉ० अजब सिह *आधुनिक काव्य की स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियाँ* पृ० 83

आचार्य शुक्ल द्वारा प्रतिपादित स्वच्छन्दतावाद के विकास की रूपरेखा बाद मे मान्यता नही प्राप्त कर सकी। **आचार्य शुक्ल** के अनुसार न **प० श्रीधर** के बाद सच्चे और स्वाभाविक स्वच्छन्दतावाद का मार्ग हमारे काव्य क्षेत्र के बीच चल न पाया क्योंकि एक ओर उसी समय पिछले सस्कृत काव्य सस्कारो के साथ **प० महावीरप्रसाद द्विवेदी** हिन्दी साहित्य क्षेत्र मे आये जिससे इतिवृत्तात्मक पद्यो का खड़ी बोली मे ढेर लगने लगा और दूसरी ओर **रवीन्द्र बाबू** की **गीताजलि** की धूम मच जाने के कारण नवीनता प्रदर्शन के इच्छुक नये कवियो मे से कुछ लोग तो बग भाषा की रहस्यात्मक कवियो की रूपरेखा लाने मे लगे कुछ लोग पाश्चात्य काव्य पद्धति को विश्व-साहित्य का लक्षण समझ उसके अनुकरण मे तत्पर हुए इन बाधाओं के कारण इने गिने नये कवि ही स्वच्छन्दता के स्वाभाविक पथ पर चले।[1]

अत **प० श्रीधर पाठक** के काव्य से ही सच्चे और स्वाभाविक स्वच्छन्दतावाद का सूत्रपात माना जाता है। **प० श्रीधर** तथा उनके समकालीन स्वच्छन्दतावादी कवियो के काव्यो मे सीधी सरल भाषा वनवैभव एकान्त प्रणय सौन्दर्यप्रियता अतीत प्रेम और देशभक्ति आदि स्वच्छन्दतावाद के प्रमुख तत्त्व उन्मुक्त भाव से प्रकट हुए है।[2] वैयक्तिक विद्रोहभाव जो आगे चलकर छायावाद मे विकसित हुआ इन कवियो के काव्य मे नही मिलता। इन कवियो की काव्य सरिता मे स्वच्छन्द धारा का प्रवाह गतिशील दृष्टिगत होता है। इस सम्बन्ध मे **आचार्य रामचद्र शुक्ल** ने **'हिन्दी साहित्य का इतिहास'** मे उल्लेख किया है इन कवियो मे से अधिकाश दोरगी कवि थे जो ब्रजभाषा मे श्रृगार वीर भक्ति आदि की पुरानी परिपाटी की रचना कवित्त सवैयो या गेय पदो आदि मे करते चले आ रहे थे और खड़ी बोली का प्रचार खूब बढ़ता दिखायी देता था और काव्य मे प्रवाह के लिए कुछ नयी-नयी भूमियॉ भी दिखाई पड़ती थी।[3] अत स्वच्छन्दतावाद के विकास की जब भी चर्चा होगी **प० श्रीधर पाठक** का नाम सर्वप्रथम स्मरण किया जायेगा। वास्तव मे **प० श्रीधर पाठक** ही हिन्दी स्वच्छन्दतावादी साहित्य के जनक है। **प० श्रीधर** के **अनुयायियो मे प० श्री रामनरेश त्रिपाठी** का नाम अग्रणी है। **प० रामनरेश त्रिपाठी** की **'मिलन, पथिक,** और **स्वप्न** खण्ड काव्यो मे स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियॉ कल्पना व भावना के साथ मिश्रित है।[4] कल्पना व भावना दोनो ही स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियॉ है अत **प० रामनरेश त्रिपाठी** ही सच्चे अर्थो मे **प० श्रीधर** के अनुयायी और पथ-बटोही है। **प० रामनरेश** ने ही **प० श्रीधर** की स्वच्छन्द काव्यधारा की परम्परा को आगे बढ़ाया तथा स्वच्छन्दतावाद के विकास मे अपना परस्पर योगदान दिया।

प० श्रीधर पाठक ने काव्य की स्वच्छन्द धारा की जो सरिता प्रवाहित की वह चरम परिणति को प्राप्त हुई **प्रसाद, निराला, पत** तथा **महादेवी** की कविताओं मे। **द्विवेदी-युग** मे सरल भाषा को प्रयोग मे लाया जाता था किन्तु भाषा की क्लिष्टता छायावादी काव्य मे दिखायी दी। इस काव्य मे प्रेम सौन्दर्य की अभिव्यक्ति मे स्पष्टता खुलापन एव अनुभूति की अभिव्यजना भली प्रकार नही हो पायी है क्योंकि इस काल के कवियो के काव्यो मे आध्यात्मिकता का आवरण पड़ा है जिससे प्रेम सौन्दर्य के वर्णन मे कवि परम्परावश आगे नही बढ़ते। छायावादी कवियो के काव्य मे अतिशय कल्पनाशीलता भावुकता व्यक्तिवादिता आदि प्रवृत्तियॉ प्रचुर मात्रा मे मिलती है

1 डॉ० अजब सिह *आधुनिक काव्य की स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियॉ* पृ० 12
2 डॉ० अजब सिह *आधुनिक कविता स्वच्छन्दतावादी उपलब्धियॉ नागरी पत्रिका जून जुलाई 75*
3 डॉ० अजब सिह *आधुनिक काव्य की स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियॉ* पृ० 38
4 वही पृ० 66

छायावाद के बाद अनुभूतिपरक कवियो मे **बालकृष्ण शर्मा नवीन,' हरिवश राय बच्चन' रामधारी सिह 'दिनकर', भगवतीचरण वर्मा, नरेन्द्र शर्मा, रामेश्वर शुक्ल अचल, गोपाल सिह 'नेपाली** एव **आर० सी० प्रसाद सिह** प्रमुख है। इन कवियो मे प्रेमानुभूति की अभिव्यक्ति मे सच्चाई के साथ साथ निराशा व विद्रोह का स्वर एव मानववादी स्वर मुखरित हुआ है।

छायावादी कविता के साथ साथ प्रगतिवाद भी आगे बढ़ रहा था। छायावाद के क्रातिकारी रूप का अगला चरण ही यह प्रगतिवाद था। रोमाटिक वृत्ति का तीव्र विरोधी किन्तु कला के स्तर पर अपने आपको पुष्ट न बना सका यही उसकी अल्पावधि का कारण भी था। लोक सस्कृति और लोक-जीवन इस काल के कवियो का प्रिय विषय था। **पत** की **'ग्राम्या,' निराला** के **'बेला, नये पत्ते', केदारनाथ अग्रवाल** की **'युग की गगा' त्रिलोचन शास्त्री** की **धरती'** तथा **डॉ० रामविलास शर्मा** की कविताएँ इसका अत्यन्त सजीव उदाहरण है।

प्रयोगवादी कवियो के काव्य मे रोमानी प्रवृत्ति विद्यमान है। **अज्ञेय** के **भग्न दूत** और **चिन्ता** मे स्वच्छन्दतावादी काव्यधारा का बहाव स्पष्ट दिखायी देता है। **प्रभाकर माचवे** की कविताओं म भी स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियॉ मिलती है। छायावादी काव्य के बाद व्यक्तिवाद जो प्रगतिवादी कवियो के काव्य से लुप्त हो गया था प्रयोगवाद मे पुन॰ अस्तित्व को प्राप्त होता है किन्तु छायावादी व्यक्तिवाद से भिन्न अवस्था मे यह प्रयोगवाद मे पुन प्रवेश करता है। यह व्यक्तिवादी भावना काव्य परिसर मे नए विचार नयी प्रेरणा और नयी अनुभूति लेकर हिन्दी मे आयी थी और यही व्यक्तिवाद हमारी मानव चेतना का प्राण था।

नयी कविताओं मे जनजीवन तथा साधारण विषय भी कविताओं का प्रतिपाद्य बनने लगा है जो कि एक स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्ति है। नयी कविताओं पर अग्रेजी के रोमानटिसिज्म का सीधा प्रभाव है। इस काल के कवि अपनी कविताओं के लिए **Lyrical Ballads** तथा **Literaria Biographia** को ही आधार मानते है और उसी के आधार पर अपनी कविताए सॅवारते है। नयी कविता और नवगीतकारो के काव्यो मे स्वच्छन्दतावादी और नवस्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियॉ दोनो ही प्रचुर मात्रा मे अपने सघन रूप मे दिखायी पड़ती है। इन कवियो मे प्रमुख है **अज्ञेय, मुक्तिबोध, रामेश्वरलाल खण्डेलवाल 'तरुण', धर्मवीर भारती, केदारनाथ सिह, शमशेर बहादुर सिह, जानकी बल्लभ शास्त्री, गिरिजाकुमार माथुर, शभुनाथ सिह, ठाकुरप्रसाद सिह, रामदरश मिश्र, प्रेमशकर** तथा **अशोक वाजपेयी**।

हिन्दी स्वच्छन्दतावादी समीक्षा के विकास मे **आचार्य रामचद्र शुक्ल** का प्रारम्भिक योगदान महत्त्वपूर्ण है। **आचार्य शुक्ल** ने ही स्वच्छन्दतावाद शब्द को हिन्दी रूप दिया है। **आचार्य शुक्ल** ही वह सर्वप्रथम आलोचक है, जिन्होने स्वच्छन्दतावाद को छायावाद के क्रम-अनुक्रम मे विश्लेषित किया था। अपने **हिन्दी साहित्य के इतिहास** मे सर्वप्रथम अग्रेजी मे रोमाटिसिज़्म को हिन्दी मे स्वच्छन्दतावाद के नाम से पुकारा तथा इसी क्रम मे स्वच्छन्दतावाद और छायावाद को विश्लेषित किया। **आचार्य शुक्ल** छायावाद को स्वच्छन्दतावाद की एक विकसित शैली मानते है।[26] स्वच्छन्दतावाद के विश्लेषण और अनुशीलन के वे ही अग्रदूत माने जाते है। उनके प्रयासो के फलस्वरूप ही हिन्दी स्वच्छन्दतावादी समीक्षा के विकास का प्रारम्भ होता है।

1 डॉ० अजब सिह *आधुनिक काव्य की स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियॉं* पृ० 83

आचार्य रामचद्र शुक्ल ने अपने **'हिन्दी साहित्य के इतिहास'** का सर्वप्रथम छायावाद और स्वच्छन्दतावाद के पार्थक्य की ओर दृष्टि केन्द्रित कर ध्यानाकर्षण किया था। यही कारण था कि प० **श्रीधर पाठक** को वे स्वच्छन्दतावाद का प्रवर्तक और अग्रदूत मानते है तथा **प० रामनरेश त्रिपाठी** को उनका अनुयायी। छायावाद को स्वच्छन्दतावाद की अनुकृति न मानकर उसका विकसित रूप मानना उनकी सोच का परिणाम है। अत **आचार्य शुक्ल** ने छायावाद का स्वच्छन्दतावाद की विकसित शैली के रूप मे विश्लेषित किया है।

डॉ० हजारीप्रसाद द्विवेदी ने यद्यपि हिन्दी के स्वच्छन्दतावाद को विश्लेषित करने के लिए कोई पुस्तक नही लिखी किन्तु **डॉ० देवराज उपाध्याय** की पुस्तक **रोमाटिक साहित्य-शास्त्र'** की भूमिका मे स्वच्छन्दतावाद क्या है इस सम्बन्ध मे उनका लेख हिन्दी स्वच्छन्दतावादी समीक्षको के समक्ष आज भी महत्त्वपूर्ण स्थिति प्राप्त कर चर्चा का विषय बना हुआ है। **डॉ० द्विवेदी** स्वच्छन्दतावाद को अपने युग की सम्पूर्ण चेतना और विचार-सघर्ष की कलात्मक अभिव्यक्ति के रूप मे विश्लेषित करते है।[1] स्वच्छन्दतावाद को वह पुराने विचारो का नया नामान्तर मात्र न मानकर समविरोध की वस्तु मानते है। इस प्रकार उन्होने स्वच्छन्दतावाद को वैश्विक अवधारणा के रूप मे विश्लेषित किया है साथ ही वह उसका अन्य वादो से समविरोधी रूप भी विश्लेषित करते है। **डॉ० द्विवेदी** स्वच्छन्दतावाद तथा छायावाद को भिन्न तो मानते है किन्तु छायावाद को अग्रेजी के रोमाटिसिज्म से प्रेरित मानते है जो कि तर्कसगत नही है। **डॉ० द्विवेदी** के शब्दो मे छायावादी काव्यधारा की प्रेरणा का मूलस्रोत अग्रेजी के रोमाटिक कवियो की कविता ही हो सकती है।[2]

डॉ० हजारी प्रसाद द्विवेदी रोमाटिसिज्म मे कल्पना के अविरल प्रवाह और घन सश्लिष्ट निविड़ आवेग दोनो की प्रधानता तथा दोनो की उपस्थिति को अनिवार्य मानते है। भले ही एक की कुछ अधिक प्रधानता हो या दोनो की बराबर किन्तु इन दोनो के अभाव मे कविता रोमाटिक कविता का रूप धारण नही कर सकती है।

डॉ० देवराज उपाध्याय का हिन्दी स्वच्छन्दतावादी आलोचना के विकास मे अनन्य योगदान है। की पुस्तक **'रोमाटिक साहित्य -शास्त्र'** हिन्दी स्वच्छन्दतावादी आलोचना की प्रथम पुस्तक है जो हिन्दी स्वच्छन्दतावादी समीक्षा के क्रमिक विकास की प्रथम कड़ी है। इसी पुस्तक की भूमिका के लिए **डॉ० हजारीप्रसाद द्विवेदी** द्वारा लिखित लेख 'हिन्दी स्वच्छन्दतावादी समीक्षा के विकास मे मील का पत्थर है।

डॉ० देवराज उपाध्याय हिन्दी समीक्षा के एकमात्र समीक्षक है जिन्होने हिन्दी स्वच्छन्दतावादी समीक्षा क्षेत्र मे पाश्चात्य स्वच्छन्दतावादी कवियो के काव्यो मे मनोवैज्ञानिक चिन्तन बिन्दुओं को अनुशीलन विश्लेषण द्वारा अपनी समीक्षा मे स्थान दिया है। यद्यपि उन्होने आलोचनात्मक क्षमता का उपयोग कथा साहित्य के मनोवैज्ञानिक विश्लेषणअ-अनुशीलन मे लगाया था किन्तु अपनी स्वच्छन्दतावादी समीक्षा की एकमात्र पुस्तक **'रोमाटिक साहित्श शास्त्र'** मे क्लासिकल व रोमाटिक अवधारणाओं को विश्लेषित कर, पाश्चात्य अग्रेजी के रोमाटिक कवियो की स्वच्छन्दतावादी अवधारणाओं को मनोवैज्ञानिक

1 डॉ० हजारीप्रसाद द्विवेदी भूमिका रोमाटिक साहित्य शास्त्र पृ० 4
2 डॉ० देवराज उपाध्याय *रोमाटिक साहित्य शास्त्र भूमिका* डॉ० हजारीप्रसाद द्विवेदी, पृ० 4

वैचारिकता प्रदान करते हुए अपने चिन्तन का विषय बनाया। इस प्रकार स्वच्छन्दतावादी अवधारणा को मनोवैज्ञानिक वैचारिकता की दिशा मे प्रवाहित कर हिन्दी स्वच्छन्दतावादी समीक्षा को एक नये आयाम पर विश्लेषित कर **डॉ० उपाध्याय** ने हिन्दी स्वच्छन्दतावादी समीक्षा के लिए नवीन भूमिका तैयार की। उन्होने हिन्दी स्वच्छन्दतावादी समीक्षा को मनोवैज्ञानिक परिप्रेक्ष्य मे मनोविश्लेषणात्मक सिद्धान्तो को केद्र मे रखकर अपने चिन्तन से सीचा था हरा भरा किया था। हिन्दी स्वच्छन्दतावादी समीक्षा को एक नया आयाम देने के कारण हिन्दी समीक्षा-ससार उनका आजीवन ऋणी रहगा तथा हिन्दी स्वच्छन्दतावादी-मनोविश्लेषणात्मक समीक्षक के रूप मे आपका नाम अग्रणी व स्मरणीय रहेगा।

हिन्दी स्वच्छन्दतावादी समीक्षा के विकास मे स्वच्छन्दतावादी सौष्ठववादी समीक्षक **आचार्य नन्द दुलारे वाजपेयी** का विशेष महत्व है। **आचार्य वाजपे यी आधु निक साहित्यतथा आधु निक काव्य रचना और विचार** मे स्वच्छन्दतावाद को एक व्यापक फलक विश्लेषित किया है। स्वच्छन्दतावाद को **वाजपेयी जी** ने स्वच्छन्द काव्य धारा या स्वच्छन्दतावाद का ही नाम दिया है। स्वच्छन्दतावादी चिन्तन को छायावाद से इतर दशा की ओर उन्मुख करने मे **वाजपेयी जी** का विशेष योगदान है। **आचार्य वाजपेयी** ने सागर विश्वविद्यालय मे स्वच्छन्दतावादी अवधारणा को लेकर काव्य तथा कथ्न-साहित्य उपन्यास तथा हिन्दी नाटको द्वारा स्वच्छन्दतावादी दृष्टि से शोध की विभिन्न दिशाओं मे स्वच्छन्दतावादी समीक्षा का मार्ग प्रशस्त किया था। उन्होने ही कविता, कहानी नाटक तथा उपन्यास आदि मे स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियो का अनुशीलन विश्लेषण शोधपरक दृष्टि से हिन्दी मे सबसे अधिक किया तथा करवाया। **आचार्य वाजपेयी** ने अपने चिन्तन मे स्वच्छन्दतावाद पर छायावाद के प्रभाव को अस्वीकारा है। वह स्वच्छन्दतावाद को एक स्वतत्र काव्यधारा मानते है किसी अन्य धारा का प्रतिरूप अथवा प्रतिबिम्बित रूप नही। इस प्रकार उन्होने स्वच्छन्दतावाद को छायावाद से इतर दिशा मे विश्लेषित कर स्वच्छन्दतावादी समीक्षा के विकास मे एक और कड़ी जोड़ी। हिन्दी-समीक्षा-ससार आपके इस सराहनीय कार्य के लिए सदैव ऋणी रहेगा।

डॉ० नगेन्द्र ने भी स्वच्छन्दतावाद को परिभाषित एव विश्लेषित किया किन्तु अपने गम्भीर चिन्तन का विषय नही बनाया। उन्होने स्वच्छन्दतावाद को रोमानी या रोमाटिक से सम्बोधित किया। **डॉ० नगेन्द्र** प्राय॰ सभी काव्यो को मूलत रोमानी ही मानते हैं इसी कारणचेतना का स्वच्छन्द उन्मेष ही सर्जन प्रतिभा का लक्षण है। [1] कहते हुए उसे स्वच्छन्दतावाद का प्राणतत्त्व स्वीकार करते है। का मत है कि यह आवश्यक नही कि स्वच्छन्दतावाद का जादू किसी कवि अथवा आलोचक के सिर पर चढ़कर बोले किन्तु स्वच्छन्दतावाद उसकी अतश्चेतना मे किसी-न किसी रूप मे विद्यमान रहता है। इस प्रकार **डॉ० नगेन्द्र** उसका मनुष्य की अतश्चेतना से सम्बन्ध स्थापित करते हुए स्वच्छन्दतावाद को मनोवैज्ञानिक परिप्रेक्ष्य मे स्वाभाविक रूप प्रदान करते हैं।

डॉ० नगेन्द्र स्वच्छन्दतावाद और छायावाद को अभिन्न मानते हैं। अपनी **आधुनिक हिन्दी कविता की प्रमुख प्रवृत्तियाँ** नामक पुस्तक मे इस सदर्भ मे लिखते है इसमे सदेह नही कि छायावाद मूलत

1 डॉ० अजब सिह *नवस्वच्छन्दतावाद आमुख डॉ० नगेन्द्र* पृ० 5

पीछे ही ढकेला है।

वर्तमान आधुनिक स्वच्छन्दतावादी समीक्षको मे **डॉ० नामवर सिह** का नाम गर्व के साथ लिया जा सकता है। उन्होने स्वच्छन्दतावादी अवधारणा को विस्तृत एव व्यापक फलक पर विश्लषित कर उसके विकास को गौरवपूर्ण आयाम दिया है।

डॉ० नामवर सिह स्वच्छन्दतावाद को अन्तर्राष्ट्रीय अवधारणा बताते हुए उसके विस्तृत रूप को विश्लेषित करते है। उनके अनुसार रोमाटिसिज्म को रोमाटिसिज्म न कहकर रोमाटिसिज्स कहना अधिक समीचीन होगा क्योंकि कोई एक रोमाटिसिज्म था ही नही। चाहे **पन्त** हो अथवा **निराला** या **महादेवी** हो अथवा **प्रसाद** कोई भी समान नही सभी एक दूसरे से अलग अत्यन्त भिन्न है। **समीक्षा ठाकुर** के सकलन एव सम्पादन **''एक दशक की बातचीत नामवर सिह के साथ''** तथा **कहना न होगा'** मे **डॉ० नामवर सिह** के इन विचारो का उल्लेख मिलता है।

''यह एक अन्तर्राष्ट्रीय अवधारणा है। गेमाटिसिज्म को रोमाटिसिज्स कहना चाहिए अर्थात् एक वचन नही बहुवचन क्योंकि कोई एक रोमाटिसिज्म था ही नही। हिन्दी मे ही देखे तो **पन्त** और **निराला** मे बड़ा फर्क है। **प्रसाद, महादेवी, पन्त, निराला** सब अलग अलग है। देखा जाये तो **निराला** का सौन्दर्य शास्त्र वही नही जो **पन्त** का था। कुछ बाते जरूर सामान्य है लेकिन बहुत सी अलग भी है। [1]

डॉ० नामवर सिह स्वच्छन्दतावाद से छायावाद का कोई भी सम्बन्ध अथवा प्रभाव स्वीकारते नही है। वह तर्क भी देते है कि यदि छायावाद स्वच्छन्दतावाद से प्रभावित होता तो **भारतेन्दु-काल** क कवियो पर इसका प्रभाव क्यो नही पड़ा। **वर्डसवर्थ, शेली** आदि के काव्य तो उस समय भी थे और **भारतेन्दु-काल** के कवि अग्रेजी भाषा भी जानते थे। अपना यह मत व्यक्त कर उन्होने छायावाद और स्वच्छन्दतावाद को नितान्त भिन्न बताकर स्वच्छन्दतावाद को विस्तृत रूप प्रदान कर उसके विकास मे अपना गौरवपूर्ण योगदान दिया।

स्वच्छन्दतावादी समीक्षा के विकास को एक नवीन आयाम प्रदान करने का श्रेय अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग के **प्रो० अजब सिह** को जाता है। हिन्दी समीक्षा-ससार के **प्रो० सिह** ही वह प्रथम समीक्षक है, जिन्होने **आचार्य नन्ददुलारे वाजपेयी** की तर्ज पर स्वच्छन्दतावाद और छायावाद को व्यापक फलक पर विश्लेषित कर स्वच्छन्दतावादी समीक्षा के विकास को आगे बढ़ाया।

आधुनिक काव्य की स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियॉ, स्वच्छन्दतावाद छायावाद तथा **'नवस्वच्छन्दतावाद'** के माध्यम से **प्रो० अजब सिह** ने स्वच्छन्दतावादी अवधारणा को एक व्यापक फलक पर किया है। हिन्दी मे **आचार्य नन्ददुलारे बाजपेयी** की परम्परा छायावाद और स्वच्छन्दतावाद मे किचित् वैभिन्य का रेखाकित करके अध्ययन को जारी रखा है। इस प्रकार **डॉ० सिह** ने स्वच्छन्दतावादी चिन्तन को एक नया आयाम दिया है। उन्होने इस सदर्भ मे पाश्चात्य एव भारतीय विद्वानो को आधार लेकर स्वच्छन्दतावादी चिन्तन को अद्यतन रूप मे मूल्याकित करने का प्रयास किया है। उनका विचार है कि स्वच्छन्दतावादी चिन्तन जीवन मे परम्परा और रूढ़ियो से मुक्ति का सदेश देती है और यही काव्य की मोह चेतना भी है। अत स्वच्छन्दतावादी चिन्तन परम्पराओं और रूढ़ियो से हटकर एक नवीन चिन्तन की रचना है। स्वच्छन्दतावादी चिन्तन अग्रेजी के रोमाटिक आन्दोलन से प्रेरणा लेता है और

विशुद्ध भारतीय सामाजिक एव राजनीतिक परिवेश मे इसकी प्रस्तुति होती है। इस प्रकार स्वच्छन्दतावादी चिन्तन काव्य का एक प्रकार नही वरन् काव्य की प्रवृत्तिनी है। **डॉ० अजब सिह** ने स्वच्छन्दतावादी अवधारणा को अपने गम्भीर चिन्तन का विषय बनाया और इस स्वच्छन्दतावादी अवधारणा को एक विशेष सिहासन पर प्रतिष्ठापित किया। उनका यह प्रयास हिन्दी समीक्षन ससार मे एक प्रामाणिक एव महत्त्वपूर्ण निष्कर्ष के रूप मे स्वीकृत भी हुआ है।

डॉ० अजब सिह ने **'स्वच्छन्दतावाद छायावाद'** ग्रन्थ के माध्यम मे स्वच्छन्दतावाद छायावाद को व्यापक फलक पर विश्लेषित किया है। स्वच्छन्दतावाद छायावाद की अनेक भ्रान्तियो का निराकरण इस ग्रन्थ के माध्यम से होता है क्योंकि **डॉ० सिह** ने स्वच्छन्दतावाद और छायावाद के मध्य एक पार्थक्य रेखा खीच स्वच्छन्दतावादी समीक्षा के विकास को एक नया आयाम दिया है। पूर्व स्वच्छन्दतावादी काव्य एव स्वच्छन्दतावादी काव्य का तुलनात्मक अध्ययन स्वच्छन्दतावाद की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि आदि के माध्यम से स्वच्छन्दतावादी छायावादी समीक्षा के विस्तृत अनुशीलन व विश्लेषण तथा उसे एक दूसरे से पृथक रूप मे देखने व विश्लेषित करने की प्रवृत्ति को बल देकर रुन्होने **आचार्य नन्ददुलारे वाजपेयी** की समीक्षा पद्धति को आगे बढ़ाया है। **आधुनिक काव्य की स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियॉ** ग्रन्थ के माध्यम से **डॉ० सिह** ने स्वच्छन्दतावाद को काव्य का प्रकार नही वरन् काव्य का तत्त्व बताकर उसे शाश्वत प्रवृत्ति कहा है जो किसी भी काल या देश के साहित्य मे अभिव्यक्ति को प्राप्त होती है। स्वच्छन्दतावाद की मूल चेतना क्रान्ति की भावना मे निहित होती है। अत हिन्दी मे स्वच्छन्दतावादी चिन्तन असहयोग आन्दोलन के रूप मे अभिव्यजित होता है। राष्ट्रीय चेतना को क्राति की भावना से बल व नयी दिशा आहूत होती है और राष्ट्रीय भावनाओं का गुबार निकलता है स्वच्छन्दतावादी कविताओं के माध्यम से।

डॉ० अजब सिह के इस महत्वपूर्ण प्रयास के पूर्व स्वच्छन्दतावाद एव छायावाद सम्बन्ध तर्क वितर्क चर्चा परिचर्चा तथा सगोष्ठियॉ इत्यादि होती रही किन्तु स्वच्छन्दतावाद और छायावाद के मध्य व्यवस्थित विभाजक रेखा खीचने के प्रयास का श्रेय्ध उन्हे ही जाता है।

'नवस्वच्छन्दतावाद' के माध्यम से **प्रो० अजब सिह** ने स्वच्छन्दतावाद के साथ यथार्थवाद का समन्वय कर **मार्क्सवादी** दृष्टिकोण के परिप्रेक्ष्य मे स्वच्छन्दतावादी अवधारणा को व्यापक फलक पर विश्लेषित कर स्वच्छन्दतावादी समीक्षा को विकसित किया। स्वच्छन्दतावादी चिन्तन के विकास को एक नयी दिशा प्रदान कर उसे एक नवीन क्षितिज की ओर अग्रसर कर हिन्दी समीक्षा को उच्चता की ओर ले गये।

हिन्दी समीक्षा के स्वच्छन्दतावादी चिन्तन के नये सूत्र ने इसे अन्तर्राष्ट्रीय गौरव प्रदान किया। **प्रोफेसर अजब सिंह** ने स्वच्छन्दतावाद के नवीन विकसित रूप को नवस्वच्छन्दतावाद नाम दिया है। उनका विचार है- स्वच्छन्दतावाद अपने उत्कर्ष पर पहुँचकर जब दूसरी दिशा की ओर उन्मुख होता है और वह यथार्थवाद के साथ सहज मैत्रीभाव से नया रूप लेता है, यही नवीनता स्वच्छन्दतावाद को नवस्वच्छन्दतावाद मे परिवर्तित कर देती है। इस प्रकार स्वच्छन्दतावादी तथा यथार्थवादी बोध के समन्वय से स्वच्छन्दतावाद नये रूप मे उभरता है। [1]

1 डॉ० अजब सिह *नवस्वच्छन्दतावाद प्राक्कथन* पृ० ४

महान स्वच्छन्दतावादी समीक्षक का विचार है कि नवस्वच्छन्दतावादी काव्यान्दोलन मे कवि की चेतना फैटेसी एव सक्रिय कल्पना के पख लिये होती है जो इसकी अपनी खास पहचान होती है।[1] अपने गम्भीर चिन्तन के क्रम मे **प्रो० सिह** का मानना है कि नवस्वच्छन्दतावाद सामाजिक तथा मनोवैज्ञानिक धरातलो की सीमा रेखा मे अपने को समेटता है तथा यथार्थवादी धरातल पर मानवीय अनुभूतियो को चित्रित करता है।[2] नवस्वच्छन्दतावाद का सामाजिक धरातल मूलत स्वच्छन्दतावाद का मार्क्सवादी सदर्भ है।[3] **डॉ० नामवर सिह** ने जिस क्रातिकारी स्वच्छन्दतावाद का आह्वान किया **डॉ० अजब सिह** ने उसे नवस्वच्छन्दतावाद की प्रवृत्ति के रूप मे सम्बोधित किया है। स्वच्छन्दतावादी समीक्षक **प्रो० अजब सिह** ने नवस्वच्छन्दतावाद को स्वच्छन्दतावाद के ही आधुनिक यथार्थवादी बोध से समन्वित नये रूप मे ग्रहण किया है।[4] इस सदर्भ मे **युग, लुकाच, अर्न्स्टफिशर,** तथा **माइकेल** की नयी समाजवादी दृष्टि तथा भारतीय ऐतिहासिकता के माध्यम से हिन्दी कविता के बदलते प्रतिमानो को ध्यान मे रख **युग** के सामूहिक अचेतन के विस्तार का सहारा लेते हुए स्वच्छन्दतावाद का सामाजिक व मनोवैज्ञानिक स्वरूप निर्धारित किया है। लेखक स्वय विस्थापित करता है कि हिन्दी छायावादोत्तर काव्य की सारी प्रवृत्तियो को नवस्वच्छन्दतावाद' क नाम से सम्बोधित करना चाहिए[5] क्यो कि आधुनिक कविता मे स्वच्छन्दतावादी चेतना का स्पष्ट स्पन्दन दृष्टिगोचर होता है। इसका कारण शायद स्वच्छन्दतावादी कविता मे रूढ़ियो के प्रति विद्रोह का स्वर है।

प्रोफेसर अजब सिह केवल ग्रन्थ लिखकर ही नही वरन् पत्र पत्रिकाओं मे समय समय पर आलेख लिखकर भी स्वच्छन्दतावादी चिन्तन के निरन्तर विकास का मार्गदर्शन करते रहे है। अधोलिखित आलेख इस सदर्भ मे दर्शनीय है।

1 आधुनिक कविता स्वच्छन्दतावादी उपलब्धियॉ नागरी पत्रिका काशी जून जुलाई 1975

2 हिन्दी स्वच्छन्दतावाद का विकास, नागरी पत्रिका, काशी अगस्त दिसम्बर, 1975

3 लोक साहित्य का स्वच्छन्दतावादी आयाम साहित्य धर्मिता जौनपुर दिसम्बर 1986

4 विद्रोह और क्राति नवस्वच्छन्दतावादी सदर्भ नई धारा पटना अक्टूबर-नवम्बर 1986

5 आधुनिकता और नवस्वच्छन्दतावाद, नई धारा, पटना अप्रैल-मई, 1988

6 काव्य का मनोवैज्ञानिक सदर्भ नई धारा पटना दिसम्बर 88 एव जनवरी 1989

7 मानववाद नवमानववाद निशान्त अलीगढ़ जून 1985

8 कामायनी की स्वच्छन्दतावादी अस्मिता साहित्य धर्मिता जौनपुर दिसम्बर 1990

9 छायावाद स्वच्छन्दतावाद का सहज विकास कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय हिन्दी विभाग की शोध पत्रिका के लिए स्वीकृत आलेख।

डॉ० अजब सिह ने न केवल अपने ग्रन्थो आलेखो के द्वारा ही स्वच्छन्दतावादी चिन्तन के विकास को नया आयाम दिया वरन् अपने निर्देशन मे भी अनेक गम्भीर चिन्तन कार्य कराकर

1 डॉ० अजब सिह *नवस्वच्छन्दतावाद प्राक्कथन* पृ० 9
2 वही, पृ० 9
3 वही पृ० 9
4 कैसर आफताब *हिन्दी समीक्षा के विकास मे आचार्य नन्ददुलारे वाजपेयी का योगदान अप्रकाशित लघु शोध प्रबन्ध* पृ० 65
5 डॉ० अजब सिह *नवस्वच्छन्दतावाद* पृ० 65

स्वच्छन्दतावादी चिन्तन के विकास को आगे बढ़ाने मे महत्त्वपूर्ण योगदान भी दिया है। अलीगढ़ विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग मे **डॉ० अजब सिंह** के निर्देशन मे स्वच्छन्दतावादी दृष्टिकोण से कई महत्त्वपूर्ण शोध कार्य हुए है। स्वच्छन्दतावाद और आधुनिक कविता को लेकर अधोलिखित शोध कार्य महत्त्वपूर्ण है जो **प्रो० अजब सिह** के दिशा निर्देशन मे अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय से पी एच०डी० की उपाधि के लिए स्वीकृत हो चुके है।

1 छायावादोत्तर हिन्दी कविता स्वच्छन्दतावादी मूल्याकन स्व० डॉ० वीरेन्द्र कुमार गुप्त एम० ए० स्वर्णपदक प्राप्त 1982

2 शिवमगल सिह सुमन के काव्य मे स्वच्छन्दतावादी चेतना का मूल्याकन डॉ० मो० रशीद खॉ 1983

3 कामायनी का स्वच्छन्दतावादी मूल्याकन डॉ० कमलेश कुमारी 1983

4 रामेश्वरलाल खण्डेलवाल के काव्य का स्वच्छन्दतावादी मूल्याकन डॉ० कुसुम लता शर्मा 1986

5 धर्मवीर भारती के काव्य का स्वच्छन्दतावादी दृष्टि से मूल्याकन डॉ० मोहम्मद इम्तियाज़ खॉ 1990

6 नयी कविता का स्वच्छन्दतावादी मूल्याकन डॉ० रेखा वर्मा

7 हिन्दी स्वच्छन्दतावादी समीक्षा के विकास मे आचार्य नन्ददुलारे बाजपेयी का योगदान (एम० फिल्० की उपाधि के लिए प्रस्तुत) श्रीमती कैसर आफताब, 1994

स्वच्छन्दतावादी विकास के अद्यतन चरण का प्रयास है मेरा लघु शोध प्रबन्ध डॉ० देवराज उपाध्याय की स्वच्छन्दतावादी समीक्षा दृष्टि।

इस अध्ययन के पश्चात् महत्त्वपूर्ण कड़ी के रूप मे मेरा पी एच० डी० का कार्य है हिन्दी की स्वच्छन्दतावादी समीक्षा के नये आयाम।

हिन्दी स्वच्छन्दतावादी चिन्तन के विकास मे स्वच्छन्दतावाद एव यथार्थवाद के समन्वय से नवस्वच्छन्दतावादी कला का विकास होता है। अत वैश्विक स्तर पर नवस्वच्छन्दतावादी अवधारणा को विकसित एव प्रतिष्ठित करने का श्रेय अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग को ही जाता है।

स्वच्छन्दतावादी चिन्तन को और अधिक विकसित रूप मे देखने के लिए प्रयत्नशील **प्रो० अजब सिह** आज भी स्वच्छन्दतावादी चिन्तन मे साधनारत है। यही कारण है कि सागर विश्वविद्यालय के अलावा अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय मे स्वच्छन्दतावादी चेतवा क्रम मे सबसे अधिक कार्य हुआ है और आज भी हो रहा है। **आचार्य नन्ददुलारे बाजपेयी** की परम्परा को विकसित करने मे अपना महत्त्वूर्ण योगदान देते हुए **प्रो० अजब सिह** ने हिन्दी स्वच्छन्दतावादी समीक्षको को अद्यतन वैचारिकता के परिप्रेक्ष्य मे यथार्थवादी चेतना से जोड़कर हिन्दी समीक्षा को एक नया सदर्भ दिया है। मेरा निश्चित अभिमत है कि स्वच्छन्दतावाद पर अन्तर्राष्ट्रीय विश्वविद्यालय अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय अलीगढ़ मे व्यवस्थित कार्य हुआ है।

अत॰ स्पष्ट है कि स्वच्छन्दतावादी समीक्षा का भी क्रमिक विकास हुआ है। सर्वप्रथम पूर्व

स्वच्छन्दतावादी स्वच्छन्दतावादी तत्पश्चात् नवस्वच्छन्दतावादी जिसे **डॉ० नामवर सिह** न क्रातिकारी नवस्वच्छन्दतावाद का नाम दिया और **डॉ० अजब सिंह** ने विस्तृत फलक पर विश्लेषित कर एक नवीन आयाम प्रदान किया।

आज **डॉ० नामवर सिह** अन्तर्राष्ट्रीय स्वच्छन्दतावाद की बात करते हुए कहते है कि केवल एक रोमाटिसिज्म था ही नही। अत रोमाटिसिज्म को रोमाटिसिज्म न कहकर रोमाटिसिज्म्स कहना चाहिए अर्थात् एक वचन नही बहुवचन क्योंकि **निराला-प्रसाद, पन्त** सभी का रोमाण्टिसिज्म अलग है। वही दूसरी ओर **डॉ० हजारीप्रसाद द्विवेदी** ने स्वच्छन्दतावाद को अपने युग की सम्पूर्ण चेतना और विचार सघर्ष की कलात्मक अभिव्यक्ति कहकर उसे वैश्विक अवधारणा के रूप मे विश्लेषित किया है। किन्तु मै स्वच्छन्दतावाद को केवल अन्तर्गष्ट्रीय अथवा वैश्विक अवधारणा के रूप मे ही नही वरन् इस ब्रह्माण्ड के सम्पूर्ण चिन्तन की कलात्मक अभिव्यक्ति मानती हूँ। आज यदि हम वैयक्तिकवाद की बात करते है तो स्वच्छन्दतावाद की बात करते है यदि राष्ट्रीयतावाद की बात करते है तो स्वच्छन्दतावाद की बात करते है यथार्थवाद की बात करते है तो स्वच्छन्दतावाद की बात करते है। यही नही जब हम प्रकृतिवाद अनुकृतिवाद तथा अध्यात्मवाद की बात करते है तब भी स्वच्छन्दतावाद ही की बात करते है। अत स्वच्छन्दतावादी चिन्तन को केवल अन्तर्राष्ट्रीय या वैश्विक चिन्तन मानना मैं समझती हूँ स्वच्छन्दतावादी चिन्तन का क्षेत्र अत्यन्त सीमित कर देना है।

आज स्वच्छन्दतावादी चिन्तन का विकास नवस्वच्छन्दतावाद से भी अधिक और आगे की ओर बढ़ चला है। स्वच्छन्दतावाद और यथार्थ का समन्वित चिन्तन जब मनोवैज्ञानिक परिप्रेक्ष्य मे आध्यात्मिक चिन्तन से जुड़ एकरूपता को प्राप्त होता है तो वहाँ स्वच्छन्दतावाद अपने सहज रूप को प्राप्त होता है। आज इसे हम **सहज नवस्वच्छन्दतावाद** के रूप मे स्वीकार कर सकते है सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड के चिन्तन के रूप मे भी इसे **सहज नवस्वच्छन्दतावाद** ही कहना अधिक समीचीन लगता है। यह मेरी स्वय की मान्यता है कि स्वच्छन्दतावादी चिन्तन किसी युग का चिन्तन नही वह तो युगो युगो से किसी-न किसी रूप मे इस जगत् मे विधमान रहा है।

डॉ० देवराज उपाध्याय की परम्परावादी व स्वच्छन्दतावादी समीक्षा-दृष्टि

परम्परावादी अवधारणा और डॉ० देवराज उपाध्याय

एलिजाबेथ युग के अन्तिम चरण मे आकर लोगो का ज्ञान विकसित हो चुका था। लोग ज्ञान मे ही शक्ति है पर विश्वास करने लगे थे। जीवन के सत्यो को गम्भीर से गम्भीर व प्रौढ़ से प्रौढ़ भाषा मे अभिव्यक्त करते समय भावो की स्वाभाविक अभिव्यक्ति कही लुप्त हो गयी थी और कवि कृत्रिमता का आश्रय प्राप्त कर चुके थे। कृत्रिम अलकार भाषा की झूठी सजावट बनाव श्रृगार यह सब चरम सीमा पर पहुँच चुके थे। अत अब आवश्यकता समझी गयी परिवर्तन की। **एलिजाबेथ युग** मे इस अतिशय कृत्रिमता को रोकने तथा साहित्य मे सादगी और स्वाभाविकता लाने के लिए क्लासिकल युग का प्रारम्भ तो हुआ पर परिणाम ठीक इसके विपरीत ही निकला। क्लासिकल साहित्य कृत्रिमता दूर रखने के स्थान पर स्वय ही कृत्रिम अलकार भाषा की झूठी सजावट व बनाव श्रृगार मे उलझकर रह गया। वैसे क्लासिकल शब्द का अर्थ ही विशिष्ट अद्वितीय और गम्भीर होता है। ऐसी वस्तु जिसकी समता ससार की कोई वस्तु न कर सके क्लासिक ही कहलाती है किन्तु हम साहित्य की बात करते है तो क्लासिकल से हमारा मतलब एक ऐसे काव्य से होता है जो अपनी महानता ऊँचाई और गौरव मे ससार के अन्य काव्यो को पीछे छोड़ जाता हो जिसकी छाया भर छू सकना भी अन्य काव्य के लिए कठिन हो। [1]

रोमन और **ग्रीक** की श्रेष्ठ रचनाओं को क्लासिकल साहित्य की श्रेणी मे रखा गया। इसके अतिरिक्त वह सभी रचनाएँ जो रोमन व ग्रीक रचनाओं के आदर्शों पर अथवा उनका अनुकरण मात्र करके सृजित की गयी क्लासिकल साहित्य परिवार मे गिनी जाने लगी। इस युग के प्रमुख विद्वान् थे **अरस्तू, होमर, विरीजल** और **हारेस**। क्लासिकल साहित्य का समय 1660 से लेकर लगभग 1800 तक माना जाता है।

रोमन और ग्रीक श्रेष्ठ रचनाओं को क्लासिकल कहा गया। साथ ही साथ उनके आदर्शों को सामने रखकर उनके अनुकरण पर जिस साहित्य का सृजन होने लगा 1660 से लेकर 1798 तक इग्लैण्ड मे जो साहित्य का प्रवाह प्रवाहित होता रहा उसके सूत्र सचालन करनेवाले **होमर** थे **विरीजल** थे **हारेस** थे और सबसे ऊपर थे **अरस्तू**। इनके ही पदचिह्नो पर चलना काव्य की एकमात्र इति कर्तव्यता समझी गयी। अत इस युग के काव्य को क्लासिकल साहित्य कहते है। [2]

अरस्तू एक महान् दार्शनिक और विचारक था। उसे पश्चिमी चिन्तन का स्रोत माना जाता है। पाश्चात्य साहित्य शास्त्र का वह आदि आचार्य कहलाता है। अरस्तू ने साहित्य शास्त्र के जो आधारभूत सिद्धान्त प्रतिपादित किये है वही क्लासिकल साहित्य की विशेषताएँ भी है। यही वह क्लासिकल साहित्य की वे विशेषताएँ है जो इस साहित्य को अन्य साहित्य से पृथक् भी करती है।

1 डॉ० देवराज उपाध्याय *रोमांटिक साहित्य शास्त्र* पृ० 8

2 पृ० 8

अरस्तू के समय अन्य आलोचक भी अवश्य थ किन्तु व या तो किसी की कृति की कवल अत्यधिक प्रशसा करते थे अथवा केवल अत्यधिक निन्दा। ऐसा प्रतीत होता है कि सारी आलोचना उनकी पसन्द या नापसन्द पर निर्भर करती थी। इसका कारण शायद यही था कि आलाचना के कोई आधारभूत सिद्धान्त नही थे और यह सिद्धान्त प्रतिपादित किये **अरस्तू** ने।

सर्वप्रथम **अरस्तू** ने अनुभव किया कि किमी भी महान् कलाकृति म बाह्य आकार रूप सौष्ठव रूप सगठन इत्यादि सर्वत्र पाया जाता है अथात् किसी भी महान् कृति म कलापक्ष की ओर सभी का ध्यान रहता है। चाहे उसका भावपक्ष क्यो न निर्बल हा अथवा कवि भावपक्ष की ओर से उदासीन क्यो न हो किन्तु आगिक रूप-विन्यास की ओर स वह कभी उदासीन नही रहा। अत क्लासिकल साहित्य की सर्वप्रथम विशेषता यही है कि इस साहित्य मे बाह्य रूप सौन्दर्य और आगिक व्यवस्था का विशेष महत्त्व है अथवा अगर यूँ कहा जाये कि साहित्य का सृजन ही बाह्य रूप विन्यास क लिए होता था तो असत्य नही। पुराने विषयो को इस प्रकार नवीन रूप प्रदान किया जाता था कि मानो वह नये विषय हो। पुरातन को नवीन रूप प्रदान कर नवजीवन देना इस साहित्य की प्रमुख विशेषता थी।

सब कलाकृतिया मे बाह्य आकार प्रकार का सौष्ठव रूप सगठन तथा अनुरूपता का ध्यान सर्वत्र रखा गया है। प्रत्येक महान् कलाकृति मे चाहे और कुछ भी न हो पर इस रूप विन्यास और आगिक सगठन की ओर से उदासीनता कभी नही दिखायी गयी है।[1]

तत्पश्चात् क्लासिकल साहित्य की दूसरी विशेषता **अरस्तू** ने बतायी अनेकत्व मे एकत्व। प्रत्येक कृति मे अनेक प्रकार की विषमताएँ दृष्टिगोचर हाती है। कभी साहित्य मे शिथिलता आती है तो कभी वेग कभी उच्चता के दर्शन होते है तो कभी अत्यधिक गहराई दिखायी पड़ती है। इस प्रकार अनेक विषमताएँ साथ-साथ चलती रहती है किन्तु इनके अतिरिक्त प्रत्येक साहित्य मे कुछ-न-कुछ बात अवश्य ही होती है जो इन सारी विषमताओं को एकता की डोर मे बॉधे रहती है। इस एकत्व और अनेकत्व मे ही क्लासिकल साहित्य की विशेषता है। इस सैद्धान्तिक दृष्टिकोण पर विचार करने पर किसी कला-कृति मे बाह्य रूप विन्यास मुख्य स्थान ग्रहण करता है। इसका परिणाम यह निकलता है कि आलोचक भी कृति के बाह्य रूप सौष्ठव व विन्यास के मोहपाश मे बॅध जाना है रचना के अन्तस् म झॉकने की फुरसत ही नही होती। अत यही अनेकत्व मे एकत्व का सिद्धान्त क्लासिकल साहित्य का आधार है।

क्लासिकल साहित्य के आधारभूत सिद्धान्तो मे इस बात का भी वर्णन है कि कविता के शब्द बहुत अधिक न हो सीधी-स्पष्ट शैली का प्रयोग हो भाव भी खूब अधिक आये व्यर्थ आडम्बरो को स्थान न मिले। एक ही बात को बार-बार न कहा जाये। अलकार आये किन्तु इतने अधिक न हो कि उनसे साहित्य मे व्यर्थ का भार बढ़े अपितु अलकारो का प्रयोजन इस प्रकार हो कि वे स्वय काव्य के अन्तस से फूटते से प्रतीत हो। कहने का तात्पर्य यह है कि अलकारो का प्रयोग इस प्रकार नही होना चाहिए कि फटे हुए कपड़े का अवगुण ढॅकने के लिए उसमे ऊपर के दूसरे कपड़े का पेबन्द लगा हो। कथावस्तु सरल स्पष्ट व सीधी-सादी हो और उसमे अस्पष्टता व क्लिष्टता न हो।

एकत्व ही क्लासिकल साहित्य का प्राण है। सकलन-त्रय सिद्धान्त से इस प्राण की रक्षा होती

1 डॉ० देवराज उपाध्याय *रोमांटिक साहित्य शास्त्र* पृ० 8

है। साथ ही इसका यह भी तकाजा है कि जो कुछ कहा जाय थोड़े शब्दो मे कहा जाय वाक्य ऐसे हो जिनमे भाव कस-कस कर भरे गये हो घुमा फिराकर कहनेवाली शैली का अनर्थक आडम्बरो की पुनरावृत्ति की प्रवृत्ति का, पूर्णरूप से परित्याग हो। अलकारो के व्यर्थ के भार से कविता भाराक्रान्त न की जाय अलकार आये भी तो वैसे हो मानो वे स्वतः काव्य के अन्तस् से फूट पड़े हो बाहर से चिपकाये जैसे न मालूम पड़ते हो। कथावस्तु यथासाध्य सीधी सादी हो उसमे जटिलता न आने पावे। [1]

एक प्रसिद्ध कहावत है कि कवि बनाए नही जाते वह तो स्वय पैदा ही होते है अर्थात् Poet ıs born not made किन्तु क्लासिकल साहित्य के सिद्धान्तो ने तो विभिन्न प्रकार की कविताएँ करने के कुछ विशेष तरीके बताएँ हैं। Heroıc Epıc Pactoral तथा ejorgıcs काव्य के लिए विभिन्न तरीके बताये हैं। कुछ शब्दो मे हेर फेर कर आसानी से कविता लिखी जा सकती थी। यही कारण है कि क्लासिकल साहित्य मे भावो की कमी थी। जो साहित्य स्व-मेव हृदय के अन्तस् की आवाज हो और जो साहित्य शब्दो की हेराफेरी से रचा गया हो उसमे कुछ-न-कुछ तो असमान्य और अमान्य दोनो ही होगा।

कहा तो यही जाता है कि Poet ıs born not made पर क्लासिकल साहित्य के सिद्धान्तो ने ढोगा पीटकर कविता ढालने का नुस्खा बतलाया। उसने बतलाया कि Heroıc काव्य लिखना हो तो अमुक-अमुक छन्दो का और अमुक शब्दो का प्रयोग करो। इसी तरह Epıc काव्य के लिए Postoral काव्य के लिए तथा Ejorgıcs के लिए कुछ खास खास नुस्खे और चुटकुले बताये गये है।[2]

किसी भी देश के सामाजिक आर्थिक व राजनीतिक परिवर्तन की छाप उस समय के साहित्य पर अवश्य ही पड़ती है क्योंकि साहित्य ही समाज का दर्पण होता है। किसी साहित्य को पढ़कर तत्कालीन विचारधारा का अनुमान सरलता से लगाया जा सकता है, यही कारण है कि तत्कालीन विचारधारा के प्रभावस्वरूप साहित्य का केवल भावपक्ष ही प्रभावित नही होता है वरन् साहित्य के बाह्य रूप सगठन व आगिक व्यवस्था पर भी उसका विशिष्ट अनुकूल प्रभाव पड़ता है। क्लासिकल साहित्य मे रूप विन्यास रूप-सगठन व्यवस्था तथा आगिक व्यवस्था की विशिष्टता मे निःसन्देह तत्कालीन विचारधारा का प्रमुख योगदान है। किसी भी साहित्य की बाहरी आकृति उस साहित्य के आन्तरिक दृष्टिकोण से प्रभावित होकर ही कोई राय ग्रहण करती है। क्लासिकल साहित्य मे जो गौरव है, उच्चता है और अनुशासन के प्रति कड़ा रुख है उसी से उसका बाह्य रूप सौष्ठव भी प्रभावित हुए बिना नही रह सका। क्लासिकल साहित्य ने जिस प्रकार और जिस रूप मे अपने को अभिव्यक्त किया, उसके आन्तरिक दृष्टिकोण का यही तकाज़ा था।

क्लासिकल साहित्य मे रूप-सौष्ठव की महत्ता है उसमे रूप विधान के आनुपातिक सौष्ठव का आग्रह है, उसमे गौरव है उच्चता है, अनुशासन की कड़ाई है तो इसलिए है कि वह एक ऐसे दृष्टिकोण की अभिव्यक्ति है जो अपने को उसी रूप मे चरितार्थ कर सकता था। [3]

प्रत्येक काव्य अथवा साहित्य तत्कालीन विचारधारा के अनुकूल रूप धारण करता है। क्लासिकल

1 डॉ० देवराज उपाध्याय *रोमांटिक साहित्य शास्त्र* पृ० 12
2 वही पृ० 13
3 वही पृ० 16 17

साहित्य भी तत्कालीन विचारधारा के अनुकूल रूप लिये हुए है। क्लासिकल साहित्य का प्रादुर्भाव ही तत्कालीन साहित्य मे अतिशय कृत्रिमता के फलस्वरूप हुआ था। प्राचीन ग्रीक क्लासिकल साहित्य मे तो अन्तस्थ प्रेरणाओं की मॉगस्वरूप उस युग की ग्रीक भावनाओं की अभिव्यक्ति भी मिलती है किन्तु नवक्लासिकवाद उन लोगो के हाथ मे पड़ गया था, जिसमे मौलिकता और प्रतिभा क प्रति तनिक भी आकर्षण नही था। जीवन की ताजगी व सौन्दय क प्रति कोई प्रेम व आकर्षण नही था। अत॰ स्वाभाविक अभिव्यक्ति को तो जैसे जग लग गया था। कृत्रिमता ने अपनी जड़े फैलानी शुरू कर दी थी। अत आवश्यकता हुई एक बार फिर परिवर्तन की। उसी समय फ्रास म क्रान्ति की लहर आयी जिसने अपने युग के साहित्य मे भी क्रान्ति पैदा की। फलस्वरूप क्लासिकल साहित्य के प्रति विद्रोह के स्वर मुखरित होने लगे और परिणाम मिला रोमाटिक साहित्य' के रूप मे। क्लासिक साहित्य का प्रचलन क्रान्ति की लहर मे न जाने कहॉ लुप्त हो गया था।

स्वच्छन्दतावादी अवधारणा और डॉ० देवराज उपाध्याय

जब क्लासिकल साहित्य मे बाह्य आडम्बर और कृत्रिमता अपनी चरम सीमा पर पहुँच गय तो एक बार पुन परिवर्तन की ज्वाला भभकने लगी। शोलो को हवा दी फ्रास की क्रान्ति ने। फ्रान्स की क्रान्ति ने ही उस समय जन चेतना जागृत की इधर दूसरी ओर वैज्ञानिक आविष्कारो ने आग मे घी डालने का कार्य किया। विज्ञान के आविष्कारो ने मनुष्य के चिन्तन का अपने ढग से परिवर्तिन कर दिया था। वैज्ञानिक सभ्यता के फलस्वरूप मनुष्य ने बधनो के बधन को तोडा और इस प्रकार अनायास ही परम्परा की कड़ियाँ टूटती चली गयी। मानव-जीवन मे आये इस असीमित परिवतन ने मनुष्य मे आत्म प्रकाश उत्पन्न किया। मनुष्य ने स्वय को पहचाना। क्रान्ति की इस लहर से साहित्य-जगत् भी किस प्रकार अछूता रह पाता? अत साहित्य-क्षेत्र मे भी इस क्रान्ति ने पैर पसारे तथा विद्रोह और परिवर्तन की स्थिति उत्पन्न की। इस आन्दोलन ने जन चेतना को तेजी से जागृत किया मनुष्य मे आत्म चेतना के भाव से आत्म प्रकाश उदित हुआ। फलस्वरूप वैयक्तिक स्वतत्रता को बल मिलने लगा। अतएव परम्परा और कड़े अनुशासन की बेड़ियॉ अनायास ही स्वमेव टूटती चली गयी। अपनी समस्त जीवनी शक्ति और काव्य समृद्धि के साथ उमड़ पड़ा एक स्वच्छन्द साहित्य जिसे आज रोमाटिक साहित्य कहा जाता है।

यह रोमाटिक साहित्य रूपी एक ऐसा प्रकाश था जिसकी चमक से यूरोप फ्रास जर्मन और इग्लैण्ड सब के सब उदीप्त हो उठे और जिसकी चमक आज भी साहित्य-जगत को दीप्तमान किये हुए है। इसकी चमक पाठको की ऑखो मे आज भी शीतलता प्रदान करती है।

डॉ० देवराज उपाध्याय भी रोमाटिक कविता की उत्पत्ति का श्रेय फ्रास की क्रान्ति को ही देते है। फ्रास की क्रान्ति से परोक्ष प्रभाव ग्रहण करती हुई कविता अन्तत स्वत अभिव्यक्ति को प्राप्त होती है। **डॉ० उपाध्याय** का मत है कि रोमाटिक कविता तो स्वत प्रसूत काव्य है। वह कवि की इच्छा अनिच्छा और परिश्रम पर निर्भर नही है, न उसे तराशने और छॉटने की आवश्यकता है। वह तो कवि के अन्तस् से स्वत ही उमड़ती है और कवि को अपने को अभिव्यक्त करने के लिए विवश कर देती है। कवि के हृदय मे भाव उमड़ घुमड़कर हलचल पैदा करते है प्रवाह अथवा आवेग का सचार होते ही कविता फूट पड़ती है शब्दो की ढाल लेकर। यह कविता अपनी अभिव्यक्ति की भाषा स्वय ही ले आती है। अनुशासन को ताक मे रख परम्परा को तोड़, एक विशिष्ट ढग से यह कविता

अभिव्यक्त होती है। इस साहित्य की अभिव्यक्ति मे प्रवाह है गति है गहराई है स्वच्छन्दता है विद्रोह है और अनुशासन की अवहेलना भी है। इस साहित्य मे तो जो विद्रोह, आवेश आवेग और स्वच्छन्दता इत्यादि पायी जाती है वह इस कारण है कि उस समय का जीवन-दर्शन अपने को इसी रूप मे कविता के माध्यम से अभिव्यक्त कर सकता था और इसी प्रकार की अभिव्यक्ति मे ही उसकी सतुष्टि थी।

रोमाटिक साहित्य शास्त्र मे जो एक प्रवाह है स्वच्छन्दता है गति है गहराई है अनुशासन की अवहेलना है तो वह भी इसी कारण है कि जीवन की फिलासफी जो अपने को अभिव्यक्त करना चाहती है वह एक विशिष्ट ढग की है, जिसे इसी रूप मे प्रकट होकर सतोष हो सकता था। [1]

डॉ० देवराज का मत है कि रोमाटिक कविता स्वत॰ प्रसूत काव्य है। कवि की इच्छा अनिच्छा से उसका कोई सम्बन्ध नही। रोमाटिक कविता स्वय की अभिव्यक्त के लिए कवि को बाध्य कर देती है किन्तु इसके साथ-साथ **डॉ० उपाध्याय** कविता की उत्पत्ति के लिए एक प्रेरक शक्ति का होना मानते है। यह कवि के अन्तस् मे विधमान रहती है। जब कवि एकान्त अथवा शान्ति के क्षणो मे हृदय के किसी शक्तिशाली अथवा प्रबल भावो का पुन स्मरण करता है तो कविता हृदय से उमड़ पड़ती है। अत॰ स्पष्ट है कि अन्य रोमाटिक कवियो के समान वह भी स्वत॰ प्रसूत प्रेरणा को ही रोमाटिक काव्य की जननी मानते है।

इस स्वत प्रसूत प्रेरणा के लिए **डॉ० उपाध्याय** कल्पना स्वप्रकाश सहज प्रतिभा इत्यादि नाम सुझाते हैं। इसे वह शक्ति का नाम देते है। एक ऐसी शक्ति जो कवि हृदय मे भावो का सचार करती है वेदना उत्पन्न करती है और प्रेरित करती है हृदय के भावो को उमड़ने घुमड़ने को। यही वेदना कवि के हृदय पर इस प्रकार चोट करती है कि कवि के अन्तर्मन से आह निकलती है और यही आह गान के रूप मे अभिव्यक्ति को प्राप्त होती है। यह स्वत प्रसूत वेदना जिसे वैयक्तिक अनुभूति भी कहते है कवि हृदय पर अपना प्रभाव फैलाती हुई कवि को एक दिव्यलोक के दर्शन कराती है जहॉ केवल सौन्दर्य ही-सौन्दर्य है और तब कवि की यह अनुभूति कोयल की कूक के समान सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड मे वेदना की सृष्टि करती है।

रोमाटिक कविता की सृष्टि मे स्वत प्रसूत प्रेरणा के अन्य साथी भी महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा, करते है। **डॉ० हजारीप्रसाद द्विवेदी** ने **डॉ० उपाध्याय** की पुस्तक **'रोमाटिक साहित्त्व शास्त्र'** की भूमिका मे इसे निविड़ आवेग का नाम दिया है। स्वत प्रसूत प्रेरणा अथवा कल्पना तथा आवेग दोनो एक दूसरे के पूरक है। इन्हे एक दूसरे से अलग नही किया जा सकता है। हॉ यह अवश्य है कि कभी कल्पना का पलड़ा भारी होता है तो कभी आवेग का किन्तु एक की अनुपस्थिति मे दूसरा अपग है अपूर्ण है। यही दोनो रोमाटिक काव्य के जन्मदाता है।

डॉ० देवराज उपाध्याय के अनुसार रोमाटिक कविता वैयक्तिक अनुभूति का परिणाम है। जब तक कवि स्वय व्यक्तिगत रूप से किसी भी भाव घटना अथवा दृश्य के प्रति वैयक्तिक अनुभूति नही रखेगा कविता का सृजन नही कर सकेगा। जब तक कवि के स्वय के हृदय मे वेदना की अनुभूति

1 डॉ० देवराज उपाध्याय *रोमाटिक साहित्य शास्त्र* पृ० 17

नही होगी तो फिर प्रवाह आवेग और भावो की गड़गड़ाहट भी कहाँ जन्म ले सकेगी? कहाँ फिर हमे उस काव्य का दर्शन हो सकेगा जिसकी अभव्यक्ति के लिए कवि बाध्य हो जाय। अत स्पष्ट है कि वैयक्तिक स्वात्रत अनुभूति भी रोमाटिक काव्य का एक आवश्यक तत्त्व है। इतना अवश्य है कि वैयक्तिक स्वात्रत अनुभूति कल्पना और आवेग क माध्यम से ही प्रकट हाती है।

सार्वभौमिक सत्य का उद्घोष है कि साहित्य समाज का दर्पण हाता है। कवि भी एक सामाजिक प्राणी है। अत कवि पर सामाजिक परिवर्तन व सामाजिक परिस्थितियो का पूण प्रभाव पड़ता है। कवि का हृदय बड़ा कोमल होता है और इस कोमल हृदय के कारण वह सामाजिक आवश्यकताओं को समझते हुए भावुक मन से अपने हृदय की अनुभूतियो को बड़ी ही सुन्दरता से लेखनी मे डुबो देता है। रोमाटिक कवि भी सामाजिक प्राणी है। समाज मे रहकर ही वह काव्य का सृजन करता है। अत उसके काव्य मे वैयक्तिक अनुभूति के साथ ही उस युग की आत्मा की आवाज भी बोलती है। कवि की वैयक्तिक अनुभूति और युग के समवेत कण्ठस्वर की ध्वनि का परिणाम ही रोमाटिक कविता है। कवि ही युग व समाज की आत्मा की धड़कन व स्पन्दन की ध्वनि स्पष्ट रूप से सुन सकता है और उसे अपनी वैयक्तिक अनुभूति के माध्यम से कविता रूपी माला मे पिरो सकता है। अत कवि ही अपनी कविता के माध्यम से तत्कालीन विचारधाग का मामूहिक रूप मे प्रतिनिधित्व करता है। क्लासिकल साहित्य से रोमाटिक साहित्य तक की यात्रा इस बात का प्रमाण है कि इस आमूल परिवर्तन की चाह कवि की वैयक्तिक अनुभूति और उस युग के समवेत कण्ठस्वर की ध्वनि ही है। इसी को यदि सृजनात्मक प्रेरक शक्ति का नाम दिया जाय तो शायद कुछ गलत नही होगा। यही कवि की अपनी विशिष्टता होती है। युग की आत्मा की आवाज कवि हृदय को सर्वोत्तम साधन बनाती है और कवि की वाणी से ही अपना जयोद्यार कराती है। कवि अपने छाटे से व्यक्तित्व मे उम युग की आत्मा का भार लिये फिरता है। परिस्थिति और वातावरण के साथ साथ पर्याप्त सदेश पाकर कवि की वाणी मुखरित हो उठती है क्योंकि अब यह उसका नैतिक और मौलिक कर्तव्य हो जाता है। इसके विपरीत **डॉ० उपाध्याय** का एक तर्क और भी है। वह कहते है कि जो कवि किसी अतीत युग की घटना को अपने काव्य का आधार बनाता है जिसका उसको साक्षात् ज्ञान भी नही है केवल सुनी-सुनायी बातो मे अपनी कल्पना का समावेश कर काव्य का सृजन करता है ऐसी स्थिति मे उसकी वाणी मे वह तेज और ज्योति किस प्रकार स्थान पा सकती है जो युगात्मक ध्वनि से दीप्त कवि की वाणी का शृगार होती है।

डॉ० देवराज उपाध्याय के अनुसार वह काव्य ही रोमाटिक काव्य हो सकता है जो आन्तरिक सौन्दर्य और आन्तरिक चेतना की बात करे। इन्द्रियातीत काल्पनिक सौन्दर्य इस काव्य की मुख्य विशेषता है। यही विशेषता रोमाटिक काव्य और क्लासिकल काव्य का विभेदीकरण भी करती है। रोमाटिक कवि आँखे मूँदकर आन्तरिक सासारिक सौन्दर्य का साक्षात्कार कराता है। काव्य के प्रमुख उद्देश्य के अनुरूप पाठक के हृदय को आनन्दोद्रेक किया जाय तो वहाँ परमानन्द के साथ-साथ आत्म सतुष्टि भी प्राप्त होती है। यहाँ सौन्दर्य अपने बहुत्व स्वरूप का प्रत्यक्षीकरण करते हुए भी एकत्व मे लीन हो जाता है। आन्तरिक चेतना न हो अथवा आत्म जागृति के भाव न हो तो वह काव्य निर्जीव होता है। ऐसा **डॉ० उपाध्याय** का मत है। जिस काव्य के रसास्वादन से श्वास को गति न मिले जिस काव्य के रसास्वादन से प्राण स्पन्दित न हो तथा जिस काव्य के रसास्वादन से आत्मा आनन्दित न हो वह काव्य रोमाटिक काव्य नही हो सकता। रोमाटिक काव्य ही वह काव्य है जिससे श्वास को गति

मिलती है मन की धड़कने धक् धक् की आवाज करती है और कभी-कभी तो यहाँ तक होता है साँस रोककर पाठक जिज्ञासा के साथ काव्य का रसास्वादन करता है तो शान्त वातावरण मे दिल की धड़कने इस प्रकार शान्ति भग करती है मानो शान्त सागर मे किसी ने एक नन्हा सा ककड़ फेक उसमे हलचल पैदा कर दी हो।

वही काव्य सौन्दर्यमयी हो सकता है जिसमे भावो की गहराई हो भावो की उच्चता हो तथा जो वास्तविकता पर निर्भर करता हो। यदि काव्य मे उपर्युक्त तत्त्वो का सर्वथा अभाव होता है तो वह शब्दो का जाल ही होगा। जब काव्य मे भावो की गहराई और उच्चता होती है तभी काव्य आत्मा को स्पन्दित कर सकता है। रोमाटिक कविता मे यह सब विद्यमान है। यूँ तो क्लासिकल काव्य मे भी रूप रग सौष्ठव बाह्य सुन्दरता है किन्तु यदि अभाव है तो आन्तरिक प्राण स्पन्दन का। जब काव्य मे जिज्ञासा व रहस्यमयता नही होगी तो कौतूहल नही होगा जब कौतूहल नही होगा तो फिर आन्तरिक जीवन प्राण स्पन्दन कैसा? किन्तु कौतूहल को स्थूल रूप मे नही वरन् स्थूल के सूक्ष्म रूप मे देखना होगा। सस्ती रहस्यमयता रोमाटिक कवियो के लिए त्याज्य है।

डॉ० उपाध्याय का मत है कि इस स्वत प्रसूत और कवि हृदय से स्वमेव अभिव्यक्त हुई कविता अपनी अभिव्यक्ति की भाषा भी अपने साथ लाती है अर्थात् स्वाभाविक और स्वत प्रसूत विचार उसी भाषा मे अभिव्यक्त होते है जो मनुष्य के लिए स्वाभाविक हो। जिस भाषा का प्रयोग दैनिक रूप से किया जाता हो वही स्वाभाविक भाषा होती है उसे हम आम बोलचाल की भाषा भी कह सकते है। इस भाषा मे कृत्रिमता नही होती और कृत्रिमता रोमाटिक कविता के पास फटक भी नही सकती। सरल और सीधे शब्द ही पाठको के हृदय मे गहराई तक उतर सकते है। यही भाषा भावो की गहराई और भव्यता को पाठको के हृदय खण्ड से सयुक्त कर देने के लिए समर्थ हो सकती है वही दूसरी ओर भाषा की तड़क भड़क, आलकारिकता और कृत्रिमता पाठको के ध्यान को इधर-उधर भटका देती है जिससे वर्ण्य वस्तु का सौन्दर्य नष्ट हो जाता है और फिर कविता उसी प्रकार हो जाती है जैसे अधिक पानीवाला शर्बत है तो शर्बत किन्तु मिठास केवल नाममात्र को। अत काव्य मे साधारण सुलभ भाषा का ही प्रयोग होना चाहिए।

डॉ० देवराज उपाध्याय के अनुसार रोमाटिक कविता की सामान्य विशेषताएँ

कहा जाता है कि कविता कोई आसमान से टपकी हुई वस्तु नही है। वह तो अपने अन्दर सदैव नवीनता ग्रहण करती है तभी तो आज उसका समृद्धिशाली रूप हमे देखने को मिलता है। रोमाटिक कविता भी कोई दैविक उपहार नही है। वह आज जिस रूप मे हमारे सम्मुख उपस्थित है निश्चय ही वह युगो की देन है। आज रोमाटिक कविता हमारे सम्मुख उपस्थित है तो वह क्लासिकल कविता की ही देन है। यदि क्लासिकल कविता न होती तो रोमाटिक कविता भी न होती। अत रोमाटिक कविता की उत्पत्ति का श्रेय भी क्लासिकल कविता को ही जाता है। यह दूसरी बात है कि रोमाटिक कविता क्लासिकल कविता के प्रति विद्रोह व प्रतिक्रिया का परिणाम है।

साहित्य समाज का दर्पण होता है। यही कारण है कि जब कोई भी आन्दोलन हुआ तो उसका सीधा प्रभाव उस काल के साहित्य पर पड़ा है। जर्मन रोमाटिक आलोचक तो यहाँ तक मानते है कि

1 डॉ० देवराज उपाध्याय *रोमाटिक साहित्य शास्त्र* पृ० 23

कविता मे केवल कवि की वैयक्तिक आत्मानुभूति की अभिव्यक्ति नही होती उसमे केवल कवि के आत्मदर्शन की झलक नही मिलती बल्कि कवि के माध्यम से उस युग की आत्मा (Spirit of the age) बोलती है। उसमे युग के समवेत कण्ठस्वर की ध्वनि सुनायी पड़ती है।[1]

रोमाटिक कविता मे भी उस युग की आत्मा (Time Spirit) के दर्शन होत है। क्लासिकल कविता के प्रति विद्रोह इस बात का प्रमाण है कि उस युग मे समाज आमूल परिवर्तन चाहता था। समस्त बधनो को तोड़, स्वच्छन्द विचरण उसकी कामना थी।

रोमाटिक कविता अपने अन्दर उन गुणो को समन्वित किये हुए है जो जाश शक्ति व्याकुलता विद्रोह, क्षुब्धता उत्तेजना, स्वच्छन्दता आदि भावनाओं के वशीभूत है। रोमाटिक कविता की विशेषताओं पर **डॉ० देवराज उपाध्याय** ने अपनी पुस्तक **रोमाटिक साहित्य शास्त्र**' मे विस्तृत चर्चा की है।

कल्पना तत्त्व

रोमाटिक कविता की सर्वप्रथम विशेषता है कल्पना तत्त्व । कल्पना तत्त्व को **डॉ० देवराज उपाध्याय** आन्तरिक प्रेरणा का नाम देते है। यह आन्तरिक प्रेरणा ही स्वतःप्रसूत वेदना है। इसके लिए कवि को परिश्रम नही करना पड़ता न ही वह कवि की इच्छा पर निर्भर है। वह तो कवि के अन्दर स्वय उमगती है उमड़ती है और कवि को अपने वशीभूत कर उसे अपनी अभिव्यक्ति के लिए विवश कर देती है। यह आन्तरिक प्रेरणा रोमाटिक कविता का मूल है। यह कविता की जननी है। इस स्वत प्रसूत आन्तरिक प्रेरणा के अभाव मे तो कोई भी कविता जन्म ले ही नही सकती है।

वर्ड्सवर्थ ने तो यहाँ तक कहा है –

Poetry is the spontaneous overflow of powerful feelings it takes its origin from emotions recollected in tranquillity अर्थात् प्रबल वेगवती भावनाओं की स्वाभाविक उमड़न ही कविता का रूप धारण करती है और प्रशान्त क्षणो मे स्मृत मनोवेगो से ही इसकी उत्पत्ति होती है।[1]

प्रबल वेगवती भावनाओं की स्वाभाविक उमड़न कुछ नही अपितु कवि की आन्तरिक स्वत प्रसूत प्रेरणा है जो अन्तत स्वत ही कविता का रूप धारण कर प्रस्फुटित होती है। यह प्रेरणा कुछ नही वरन् कवि के अन्त करण की आवाज होती है।

निविड़ आवेग

कल्पना के साथ साथ रोमाटिक कविता का एक अस्त्र और है आवेग। आवेग भी इस काव्य का प्रधान तत्त्व है। यह सदैव कल्पना के साथ उपस्थित रहता है। कल्पना के अविरल प्रवाह मे आवेग की प्रधानता होती है। कभी-कभी कल्पना आवेग को दबोच लेती है और कभी आवेग कल्पना को। कभी दोनो समान रूप से आते है। कहने का तात्पर्य यह कि कल्पना व आवेग इन दोनो को एक दूसरे से अलग नही किया जा सकता है। दोनो एक-दूसरे के पूरक है। आवेग कल्पना के अभाव मे उत्पन्न हो ही नही सकता। कल्पना का अविरल प्रवाह ही आवेग को जन्म देता है।

वैयक्तिक स्वातन्त्र्य की प्रबलता

1 डॉ० देवराज उपाध्याय *रोमाटिक साहित्य शास्त्र* पृ० 121

रोमाटिक कविता क्लासिकल कविता के विद्रोहस्वरूप उत्पन्न हुई थी। क्लासिकल कविता मे सामूहिकता को अधिक महत्त्व दिया किन्तु रोमाटिक कविता मे वैयक्तिक स्वातत्र्य को अधिक महत्त्व दिया गया। सुदृढ़ राष्ट्र के निर्माण मे योग्य व्यक्तियो व स्वाधीनता का महत्त्वपूर्ण योगदान है। स्वभावत कोई भी व्यक्ति दुराचारी नही होता। यदि उसको व्यक्तिगत स्वाधीनता दे दी जाय और सभी नियम अनुशासन की कड़ाई समाप्त कर दी जाये तो व्यक्ति के चरित्र व उसकी बुद्धि दोनो मे ही अद्वितीय अपूर्व उन्नति होगी। वैयक्तिक स्वातत्र्य के विकास से ही शब्द का विकास सम्भव है। यही कारण है कि रोमाटिक कविता वैयक्तिक स्वातत्र्य पर अधिक बल देती है।

नियम व बधन के प्रति विद्रोह

रोमाटिक कविता तो प्रत्येक नियम व बधन के परे है। वह तो बन्धनो को तोड़ देने का आह्वान करती है। कोई नियम बधन वह नही मानती। किसी भी अनुशासन मे रहना उसे सह्य नही। यदि रोमाटिक कविता नियम व बधन मे बध जाय तो वह अपना स्वच्छन्द रूप ही खो बैठेगी और अन्तत क्लासिकल हो जायगी।

इस श्रेणी की कविता मे किसी तरह के बधन की पाबदी असह्य है। प्रत्येक कवि अपनी मौलिक अनुभूतियो की अभिव्यक्ति के लिए अनुरूप पथ निर्माण के लिए स्वतत्र होगा।[1]

कवि स्वय ही अपनी अभिव्यक्ति के लिए पथ निर्माण करेगा। किसी नियम या बधन को नही मानेगा। वह स्वय नियम बनायेगा और स्वय ही उसे तोड़ेगा क्योंकि किसी भी बॅधन मे बधकर वह स्वतत्र अभिव्यक्ति से वचित रह जायगा और जब तक वह नियमो का अवलोकन करेगा स्वतःप्रसूत वेदना का आवेग जो क्षणिक होता है न जाने कौन सी राह लेगा। रोमाटिक कविता मर्यादा नियम प्रतिबध सब की अवहेलना करके तथा सभी प्रतिबन्धो व परम्पराओं को किनारे रख अपने लक्ष्य तक पहुँचने को उतावली रहती है।

आत्मगौरव की भावना

रोमाटिक कविता की एक विशेषता यह है कि इस कविता मे आत्म-गौरव की भावना सर्वत्र पायी जाती है। रोमाटिक कविता व्यक्ति प्रधान होती है। अतएव आत्म-गौरव की भावना इस कविता की प्रधान विशेषता है। यही प्रवृत्ति इमे आन्तरिक चेतना की ओर भी उन्मुख करती है।

अदम्य प्रेरणा, उत्साह और उमग

रोमाटिक कविता के लिए कोई भी बधन असह्य है वह उन्हे छिन्न भिन्न कर देना चाहती है। अदम्य प्रेरणा उत्साह और उमग रोमाटिक कविता के अतस्थल को उभारती है।

यथार्थवाद रोमासवाद की सार-वस्तु

रोमाटिक विचारधारा कृत्रिमता, असत्यता और झूठ का विरोध करती है। स्वाभाविकता और यथार्थता तो रोमाटिक काव्य का सार है, विशुद्ध अनुकरण का रोमाटिक काव्य मे कोई स्थान नही किन्तु काव्योचित अनुकरण या सत्यता रोमाटिक काव्य का प्राण है।

प्रकृति वर्णन

रोमाटिक कविताओं मे प्रकृति का व्यजनात्मक वर्णन होता है। कुछ वर्णनात्मक कविताओं को

1 डॉ० देवराज उपाध्याय *रोमाटिक साहित्य शास्त्र* पृ० 24

भी स्थान मिला है। रोमाटिक कवि प्रकृति पर सरसरी दृष्टि डालकर केवल उसका बाह्य रूप-आकर्षण अपनी लेखनी मे कलमबन्द नही करता वरन् वह तो प्रकृति क अन्त मे प्रवेश कर उसे आत्मसात् कर बड़ी तन्मयता व आत्मीयता से उसका वर्णन करता है। उसका यह वर्णन कवल वर्णन नही है वरन् प्रकृति की दिव्यता की ओर सकेत है। प्रकृति के रहस्यो की ओर सकेत है। रोमाटिक काव्य का प्रकृति काव्य कहा जाय तो अनुचित नही। रोमाटिक कवि केवल मनारजन के लिए प्रकृति वर्णन नही करता वरन् वह ता प्रकृति के क्रिया कलापो को इस प्रकार अपनी लेखनी मे डुबो देता है कि मानो हम साक्षात् प्रकृति के दर्शन कर रहे हो। हमारे हृदय मे गति उत्पन्न कर कल्पना क्षत्र का उद्‌घाटन कर सृजन के कार्य मे लगा देना यही कार्य है रोमाटिक कविता का।

प्रशात सरोवर मे एक ककड़ी पड़ जाने से जिस तरह तरग चक्र की सृष्टि हो जाती है उसी तरह इस कविता से उत्तेजित होकर पाठक अनन्त की कल्पना मे व्याप्त हो जायगा।[1]

आध्यात्मिकता की ओर झुकाव

रोमाटिक साहित्य की एक बड़ी विशेषता यह है कि इस समय के कवियो के काव्यो म आध्यात्मिकता की झलक स्पष्ट दृष्टिगोचर होती है। रोमाटिक कवि प्रत्येक वस्तु को आध्यात्मिकता से मण्डित कर देता है वह हुस्ने बुता के परदे मे रब का जलवा देखने की बात करता है। बूँद मे बाडव का दाह देखता है। उसके लिए ब्रह्माण्ड ही पिण्ड है। रोमाटिक कवि स्थूल मे सूक्ष्म का दर्शन करता है। वह विविध लीलाओं की डोर हिलानेवाले इस जगत् के सूत्रधार की खोज करता है।

जीवन-दर्शन का पुट

प्रत्येक रोमाटिक कवि दार्शनिक भी होता है। उसे जीवन दर्शन के गम्भीर सिद्धान्तो का ज्ञान रहता है और उन्ही को वह सुबोधतर रूप मे देने की कोशिश करता है। एक दार्शनिक होने के नाते रोमाटिक कवि सृजन व्यापार और तद्‌गत मानसिक अवस्था तथा हृदय की गहराई के उस बिन्दु तक पहुँचने की कोशिश करता है जहॉ से सृजन कार्य आरम्भ होता है।

कविता के पात्र

रोमाटिक कविता के पात्र शहर के रहनेवाले नही होते वरन् सुदूर ग्राम अथवा प्रकृति मे विचरण करनेवाले होते है। यह पात्र ऐसे होते है कि इनका जीवन प्राकृतिक रूप से प्रकृति के अचल मे व्यतीत होता है। जीवन की भीड़ भाड़ व कृत्रिमता से दूर होते है। **डॉ० उपाध्याय** मानते है कि फैशन और सभ्यता तो मनुष्य के जीवन मे कृत्रिमता ला देती है। प्रकृति को महत्त्व देनेवाले काव्य मे उनकी पूछ ही कैसे हो सकती है?[2]

डॉ० देवराज उपाध्याय कहते है कि ऐसी कविता मे वैसे ही पात्रो का वर्णन विशेष रूप से होगा जिनका जीवन शहर की भीड़ भाड़ से दूर प्रकृति के अचल मे प्राकृतिक रूप से व्यतीत होता हो। ऐसे मनुष्यो के विचार रहन सहन के ढग प्रकृति से ही अनुप्रमाणित होते है।[3]

साधारण शैली का प्रयोग

स्वत प्रसूत वेदना उमड़ घुमड़कर प्रवाह गति को प्राप्त हो कविता के रूप मे प्रस्फुटित होती है।

1 डॉ० देवराज उपाध्याय *रोमाटिक साहित्य शास्त्र* पृ० 25
2 वही पृ० 24
3 वही पृ० 24

यहाँ कृत्रिमता का कोई स्थान नही। स्वत० स्वाभाविक रूप से हृदय से प्रस्फुटित भाषा शैली साधारण दैनिक व्यवहार के शब्दो से परिपूर्ण होती है तभी उसमे सजीवता आ सकती है उसमे एक अपील होती है जो कृत्रिम भाषा मे नही। रोमाटिक कविता की शैली का यही रूप है यही उसकी विशेषता है । इस कविता मे क्लासिक युग की कृत्रिमता तड़क भड़क व अलकृत भाषा का सर्वथा अभाव होता है।

शैली की सादगी होगी दैनिक व्यवहार मे प्रयोग होनेवाली शब्दावली के प्रति आग्रह होगा भाषा निरलकृत होगी। क्लासिक युग की **Poetic diction** की तड़क भड़क का अभाव होगा क्योंकि ऐसे श्रेणी के कवियो का सिद्धान्त यह है कि स्वाभाविक स्थिति मे हृदय से निकली भाषा मे जो सजीवता और अपील होगी वह कृत्रिम भाषा मे नही हो सकती।[1]

रोमाटिक कविता का कला-पक्ष

रोमाटिक कविता मे स्वाभाविक अभिव्यक्ति पर अत्यधिक बल दिया जाता है किन्तु यदि यह समझा जाय कि कला का रोमाटिक कविता मे कोई स्थान नही है ऐसा नही है। इसमे कला स्वत प्रसूत भावो मे सुचारुता लाने के उद्देश्य से प्रयोग की जाती है बल्कि अगर यूँ कहा जाय कि स्वय ही प्रकट हो जाती है तो अतिश्योक्ति नही होगी। इसको इस प्रकार भी कह सकते है कि रोमाटिक कविता कला के लिए नही अपितु कला रोमाटिक कविता के लिए होती है।

रोमाटिक कहलाने के लिए किन किन गुणो का होना आवश्यक है यह कहना कठिन है। पर असाधारणता विशालता अतिशयता तो है ही। रोमाटिक साधारणता सतहीपना चलतापन छुटपुटपन से कभी-कभी सन्तुष्ट नही होता उसे कोई बड़ी चीज (Big thing) चाहिए जहाँ उसे अपनी बयाँ के लिए वसयत मिल सके। वहाँ पर tea cup tragidies की बात नही चल सकती।[1]

रोमाटिक कविता मे गीति और मुक्तक काव्यो की प्रधानता

डॉ० देवराज उपाध्याय अपनी पुस्तक **'रोमाटिक साहित्य शास्त्र'** मे लिखते है कि रोमाटिक कविता मे प्रबन्ध काव्यो की अपेक्षा गीति काव्य व मुक्तक काव्यो की प्रधानता है। इसका कारण उन्होने बताया है कि रोमाटिक कविता के लिए आन्तरिक प्रेरणा की परम अपेक्षा है। इस कविता के लिए जिस तरह की प्रेरणा की आवश्यकता होती है वह क्षणिक मात्र है। इस क्षणिक प्रेरणा से काव्य मे चमक बनी रहती है अर्थात् उनके अनुसार स्वच्छन्दतावादी कवि काव्य के सारे बन्धन छिन्न भिन्न करता है, वह तो स्वच्छन्द विचरण चाहता। छन्द के बधन मे पड़कर वह अपनी अभिव्यक्ति पर अकुश नही चाहता है। यदि वह काव्य की इस परम्परा को नही तोड़ पाया तो फिर स्वच्छन्दतावादी कवि रहा ही नही। फिर एक दूसरी बात भी है जो **डॉ० उपाध्याय** बार बार कहते है कि रामाटिक कविता कवि की स्वत प्रसूत आन्तरिक वेदना की अभिव्यक्ति है। वह तो स्वत अभिव्यक्त होती है जबरन अभिव्यक्त करायी नही जाती। जो कविता स्वत अभिव्यक्त होगी वह किस बन्धन को नही मानेगी क्योंकि वह तो उन्मुक्त काव्य होगा उसकी उन्मुक्तता व स्वच्छन्दता अपनी अलग पहचान बनाती है। लोगो के हृदय पर अपनी छाप छोड़ती है और पाठक उसकी कविता मे तो जैसे रम जाता है उसको बार-बार पढ़ता है और कभी भी भूल नही पाता।

1 डॉ० देवराज उपाध्याय *रोमाटिक साहित्य शास्त्र* पृ० 24
2 डॉ० देवराज उपाध्याय *ग्रन्थावली खण्ड* 2 पृ० 351

यही कारण है कि रोमाटिक कविता किसी भी पद्य छन्द के चक्कर मे नही पड़ती न ही किसी अलकार की योजना उसकी योजना होती है। कोई भी रोमाटिक कविता किसी छन्द विशेष अथवा अलकार विशेष के लिए नही कही जाती अपितु अलकार छन्द इत्यादि का तो कभी-कभी लेश मात्र अश भी नही होता। कभी-कभी तो इस प्रकार अभिव्यक्ति हो जाती है मानो काइ गद्य हो।

रोमाटिक कविता मे जो आन्तरिक प्रेरणा कार्य करती है वह क्षणिक होनी है और वह इतनी क्षणिक होती है कि प्रबन्ध काव्य की प्रतीक्षा नही कर सकती। इतने समय मे तो कवि का हृदय इस स्वत प्रसूत वदना से अभिभूत प्रवाह कवि को कहाँ से कहाँ अपने साथ बहा ले जायगा। उसका वेग कवि को कही ठहरने का अवसर ही कब देता है? यह लावा तो शब्दो के माध्यम से जाने कब फूट पड़े यह तो स्वय कवि का हृदय भी नही जानता? यह कविता व्यक्ति स्वातत्र्य की बात करती है। उसके अन्दर विद्रोह है किसी प्रकार का बन्धन उसे सह्य नही।

सगीतात्मकता भी रोमाटिक कविता मे प्रचुर मात्रा मे पायी जाने लगी। **डॉ० देवराज उपाध्याय** के अनुसार जब से रोमाटिक स्वच्छन्दतावादी कविताओं का बोलबाला प्रारम्भ हुआ तब से गीति काव्य की महत्ता बढ़ी और उसी के आधार पर साहित्य का मूल्याकन प्रारम्भ हुआ। जो कृति या रचना गीतिकाव्य के आदर्शों का जिस अनुपात मे सफलतापूर्वक पालन कर सकती थी उसे कला और साहित्य मे आदरणीय समझा जाने लगा।[1]

रोमाटिक कविता का जीवन के प्रति दृष्टिकोण

डॉ० देवराज उपाध्याय अपनी पुस्तक **रोमाटिक साहित्य शास्त्र'** मे मानते है कि रोमाटिक काव्य का जीवन के प्रति दृष्टिकोण बड़ा ही व्यापक है। वह जीवन के साधारण से साधारण और व्यापक से व्यापक सत्य को इस प्रकार जन मानस के सम्मुख अभिव्यक्त करती है कि वह प्रत्येक के लिए ग्रहणीय तत्पश्चात् प्रेषण योग्य हो जाते है। यह अलग बात है कि उनकी अभिव्यक्ति का ढग भिन्न हो और इसी भिन्नता लिये हुए प्रेषित किया गया हो। भिन्न भिन्न प्रकार की कविताएँ ही इस भिन्न अभिव्यक्ति का कारण हो सकती है।

डॉ० देवराज उपाध्याय यह भी मानते है कि कवि जीवन के प्रति वैज्ञानिक दृष्टिकोण भी रखता है। वह प्राकृत वस्तुओं की रूपरेखा क्रिया कलापो एव बाह्य आवरूप का सूक्ष्म निरीक्षण करता है। फिर वह प्रकृति व मनुष्य के सम्बन्ध मे कुछ साधारण धारणाएँ बना अपने भावो की अभिव्यक्ति करता है उसे काव्योचित अभिव्यक्ति देने की चेष्टा मे सौन्दर्य व प्रभाव लाने के लिए उसे नये ढग से प्रकाशित करता है जिससे वह काव्य आनन्द उत्पन्न करे उस साहित्य के प्रति पाठक प्रेम-दृष्टि रखे और उससे लाभ उठाये।

कवि सत्य को प्रकृति और जगत् के बीच प्रतिष्ठित करके देखता है। कवि का मस्तिष्क अतिसवेदनशील अति प्रतिक्रियाशील हो सकता है कि वास्तविकता से सम्पर्क होते ही सत्य उसके मानस पटल पर इस प्रकार उग आता है मानो उसकी दिव्य दृष्टि के नेत्र खुल गये हो और वह सत्य का साक्षात्कार कर रहा हो। ऐसे दूसरी तरह के सवेदनशील कवि होते हैं। प्राकृत वस्तु की वेदना

1 डॉ० देवराज उपाध्याय *ग्रन्थावली खण्ड* 2 पृ ०58

उनक हृदय को बेध देती है। भाव स्वत ही हृदय से स्रोत रूप मे उमड़ते है और फिर अभिव्यक्ति के अनुरूप भाषा लेकर प्रस्फुटित होते है। **डॉ० देवराज** कहते है सत्य की आन्तरिक ज्योति अपनी अभिव्यक्ति की भाषा साथ लिये आती है। गान आह से निकलता है और ऑखो से निकलकर कविता चुपचाप बह जाती है। इस मनोवृत्ति से प्रसूत कविता रोमाटिक कविता होगी। इसमे उमड़न होगी वेग होगा प्राणो की व्याकुलता होगी पर्वतो को गिरा देने की शक्ति होगी स्वच्छन्दता होगी और सबसे बड़ी चीज होगी कवि की आन्तरिक प्रेरणा जो प्रत्येक महान् कविता का मूल तत्त्व है और जिसके बिना कविता की रचना नही हो सकती। इस कविता मे बोधातीत सत्य के प्रति सकत होगा। इसमे दार्शनिकता का पुट होगा। इस नामरूपात्मक जगत् की विविध लीलाओं के पीछे छिपकर बैठे हुए डोर हिलानेवाले सूत्रधार की खोज होगी यह कविता रहस्यवाद लिये हुए होगी प्रत्येक आश्चर्यजनक साहसिक कार्यों के प्रति इसमे आग्रह होगा अतीत की गौरवगाथा के प्रति दिलचस्पी होगी।[1]

अत स्पष्ट है कि स्वच्छन्दतावाद की क्रान्ति केवल साहित्य तक ही सीमित नही रह गयी थी बल्कि मनुष्य के जीवन से सम्बन्धित प्रत्येक क्षेत्र मे इसने अपने पॉव पसारे। मनुष्य ने प्रत्येक क्षेत्र मे अपने विचारो क्रिया-कलापो मे परिवर्तन की आवश्यकता को समझा। यही कारण था कि उसने प्रत्येक बधन नियम अनुशासन और रीति रिवाज परम्परा व ढग सभी मे परिवर्तन व स्वच्छन्दता की आवश्यकता को समझा। मनुष्य के अन्तर्जगत् और बहिर्जगत् दोनो मे ही स्वच्छन्दतावाद की क्राति ने अपना काम कर दिखाया। विज्ञान की उन्नति विभिन्न वैज्ञानिक आविष्कार औद्योगिक क्राति, ग्राम से शहर की ओर पलायन वही दूसरी ओर अर्थशास्त्र व समाजशास्त्र जैसे नये विषयो को पढ़ाया जाना दर्शन शास्त्र का शुद्ध बुद्धि तर्क तथा विज्ञान का ऐन्द्रियता को सर्वे सर्वा मानना सभी ने मनुष्य के जीवन को बहुत अधिक प्रभावित किया। किन्तु उपर्युक्त सभी बाते स्वच्छन्दतावाद की क्राति के फलस्वरूप ही उत्पन्न हुई। अत स्वच्छन्दतावाद का जीवन सम्बन्धी दृष्टिकोण अत्यधिक व्यापक है। स्वच्छन्दतावाद वैयक्तिक स्वतत्रता का पक्षधर है। यही कारण है कि प्रत्येक पुरातन नियम कानून के प्रति विद्रोह की भावना लेकर यह अग्रसर होता है।

यथार्थवादी दृष्टिकोण एव जीवन के प्रति परिवर्तित नूतन दृष्टिकोण की सवारी रोमास के रथ पर चढ़कर, जीवन के पथ पर निकली तो धीरे धीरे परिस्थितियो के बीच सारा दृश्य ही बदल गया अथवा यो कहिये कि परिवर्तित होने की विवशता उत्पन्न हो गयी। रथ की वही सामग्री पहिये वैसे ही थे अश्व भी वही बागडोर भी वही पर वाहक बदल गया था। उसके विचार दूसरे थे वह किसी दूसरे ही उद्देश्य से यात्रा के लिए निकला था।[2]

परम्परावादी व स्वच्छन्दतावादी अवधारणा तथा डॉ० देवराज उपाध्याय

कोई भी कविता जीवन के व्यापक तथ्यो को अभिव्यक्त करती है और उसकी अभिव्यक्ति इतनी विशिष्ट होती है कि वह प्रत्येक के लिए ग्रहणीय बन जाती है। वह जीवन की सच्चाई को विशिष्ट ढग से अभिव्यक्त करती है। कविता कई विशिष्ट प्रकार से अपने को अभिव्यक्त कर प्रेषणीय बनाती है और इस अन्तर का कारण भिन्न प्रकार का हो सकता है।

1 डॉ० देवराज उपाध्याय *रोमाटिक साहित्य शास्त्र* पृ० 19
2 डॉ० देवराज उपाध्याय *ग्रन्थावली खण्ड* 2 पृ० 247

रोमाटिक साहित्य क्लासिकल साहित्य के प्रति विद्रोह के फलस्वरूप आया। अतएव रोमाटिक साहित्य व क्लासिकल साहित्य मे पर्याप्त विभिन्नता के दर्शन हाते है। **डॉ० देवराज उपाध्याय** न अपनी पुस्तक **'रोमाटिक साहित्य शास्त्र'** मे इस विषय पर गम्भीरता से विचार किया है।

क्लासिकल साहित्य मे रूप सौष्ठव की महत्ता है उसमे रूप विधान क आनुपातिक सौष्ठव का आग्रह है उसमे गौरव है उच्चता है अनुशासन की कड़ाई है तो इसलिए है कि वह एक एस दृष्टिकोण की अभिव्यक्ति है जो अपने को उसी रूप म चरितार्थ कर सकता था। रोमाटिक साहित्य मे ना प्रवाह है स्वच्छन्दता है गति है गहराई है अनुशासन की अवहेलना है तो वह भी इसी कारण है कि जीवन की वह फिलासफी जो अपने को व्यक्त करना चाहती है एक विशिष्ट ढग की है जिमे इसी रूप मे प्रकट होकर सतोष हो सकता था।[1]

साहित्य के भावपक्ष और विभाव अर्थात् Substance और form दो पक्ष होते है। क्लासिकल साहित्य मे विभाव अर्थात् form का अधिक महत्व है। क्लासिकल साहित्य मे बाह्य रूप विधान आनुपातिक होता है। काव्य सौष्ठव को अधिक सराहा जाता है। इस काव्य मे काव्य के नियमा के प्रति कड़ाई और अनुशासन है। यह काव्य गम्भीर व शात है। यही कारण है कि इस साहित्य मे गौरव व उच्चता है।

रोमाटिक साहित्य की प्रवृत्ति चचल है। उसमे ऑधी और तूफानो का बोलबाला है। इस साहित्य मे प्रवाह है वेग है अत स्वच्छन्दता है। इस साहित्य मे एक गति है यही कारण है कि यह साहित्य किसी नियम या कानून मे कही बॅध नही सकता है और यह साहित्य स्वच्छन्द विचरण करता हुआ अनुशासन की अवहेलना करता है। विद्रोह इस साहित्य का मूल स्वर है। यह साहित्य व्यक्ति स्वातत्र्य की बात करता है। व्यक्ति की स्वतत्र अनुभूति कल्पना और आवेग के माध्यम से ही अभिव्यक्त होती है और जब वह भाषा के माध्यम से प्रकट होती है ता अनुशासन नियम नीति सदाचार किसी से भी उसका सामजस्य नही हो पाता। मन का यह आवेग कवि का रुकने का अवसर ही नही दता वह तो बस हर बधन को तोड़ता प्रवाहित ही होना रहता है।

कभी-कभी ऐसा भी होता है कि जीवन के साधारण सत्य अथवा तथ्य के अधिक ग्रहणीय और प्रेषणीय बनाने के लिए उसे नवीन परिस्थितियो के तहत नये ढग से प्रकाशित किया जाता है कि यह सर्वज्ञात साधारण तत्त्व नवीन प्रतीत होता है। इसका महत्त्व इसमे नही है कि यह व्यक्ति की व्यक्तिगत अनुभूति की दिव्यता या विशिष्टता को प्रकट करती है वरन् इसका सौन्दर्य और महत्त्व इसमे है कि यह किस प्रकार अभिव्यक्त की जा रही है। इसी परम्परा मे **डॉ० देवराज उपाध्याय** का कथन है कि इस कविता को किस कौशल और किस ढग से सजाया गया है कि वह परिचित होते हुए भी नवीनतम है। इसी तथ्य की जॉच की जाती है क्योंकि इस प्रकार का साहित्य कलासाध्य होगा परिश्रमसापेक्ष होगा। इस तरह का साहित्य कवि के हृदयरस मे लेखनी डुबोकर नही लिखा जायगा। अत यह साहित्य परम्परावादी क्लासिकल साहित्य होगा। यथार्थवाद के समीप, दैनिक जीवन मे आनेवाली और दिखलायी पड़नेवाली और चीजो को नये ढग से सजाकर रखनेवाली कविता होगी।

किन्तु इसके विपरीत रोमाटिक कवि का मष्तिष्क अत्यधिक सवेदनशील और प्रतिक्रियाशील

1 डॉ० देवराज उपाध्याय *रोमाटिक साहित्य शास्त्र* पृ० 17

हो सकता है। जब वह वास्तविकता के सम्पर्क मे आता है तो सत्य उसके मानस पटल पर इस प्रकार अकित हो उठता है मानो उसकी दिव्य दृष्टि के नेत्र खुल गये हो वह सत्य से हूबहू साक्षात्कार करता है। प्रकृत वस्तु के प्रति उसकी प्रतिक्रियाशीलता का भाव इतना तत्वपरक होता है कि प्रकृत वस्तु की वेदना उसके हृदय को भेदती है। यह अनुभूति स्वतःप्रसूत वेदना के रूप मे उसके हृदय के अन्तर्मन पर प्रवाहित होती है तथा एक अदम्य प्रवाह व वेग भाषा के रूप मे अभिव्यक्त हो जाता है। यह कविता रहस्यवाद से परिपूर्ण दार्शनिकता का पुट लिये आश्चर्यजनक और साहसिक कार्यों के प्रति स्वच्छन्दता से पूर्ण, प्राणो की आकुलता लिए और पर्वतो को गिरा देने की शक्ति लिये होगी।

डॉ० देवराज उपाध्याय अपनी पुस्तक **रोमाटिक साहित्य शास्त्र** मे इस विभिन्नता को और अधिक स्पष्ट करते है। **डॉ० उपाध्याय** के अनुसार

रोमाटिक और क्लासिकल साहित्य मे विभिन्नता दिखलायी पड़ती है। वह बाह्य रूप विधान की उतनी नही जितनी वह स्पिरिट की, दृष्टिकोण की तथा प्रेरणा की है। एक के लिए पिण्ड ही ब्रह्माण्ड है दूसरे के लिए ब्रह्माण्ड ही पिण्ड है। एक मे सामूहिकता का आग्रह है तो दूसरे मे वैयक्तिकता पर जोर। बाह्य इन्द्रिय ग्राह्य चाक्षुष सौन्दर्य एक के लिए प्रधानवाद है तो दूसरे के लिए इन्द्रियातीत काल्पनिक सौन्दर्य। एक आँखे खोलकर बाह्य ससार की झाँकी करता है और कराता है तो दूसरा आँखे मूँदकर आन्तरिक ससार के सौन्दर्य की झाँकी करता है और कराता है। एक मे मनुष्य की प्रतिष्ठा है वह नरकाव्य है तो दूसरा प्रकृति के गौरवगान मे सलग्न है वह प्रकृतिकाव्य है। एक कहेगा

Man Superior walks

Amid the glad creations

Thomson Spring

तो दूसरा कहेगा

To me the meanest flower that blows can give thoughts that do after lie too deep for tears

–Wordsworth

डॉ० उपाध्याय यह मानते है कि क्लासिकल साहित्य और रोमाटिक साहित्य मे जो अन्तर है उसकी नीव अत्यधिक गहराई मे है। यह अन्तर सस्कृति का अन्तर है। प्रत्येक राष्ट्र या प्रदेश की सस्कृति वहाँ के साहित्य को प्रभावित करती है। वहाँ की जलवायु, मिट्टी अथवा यो कहिए कि भौगोलिक स्थिति भी उस राष्ट्र के साहित्य को प्रभावित करती है। क्लासिकल साहित्य की उत्पत्ति भूमध्यसागर के तट पर बसे प्रदेशो मे हुई थी। वहॉ का वातावरण शात है। वहाँ की जल-तरगो मे हलचल नही होती। अत यदि क्लासिकल साहित्य की उत्पत्ति भूमध्यसागर तट पर होती है तो कोई आश्चर्य नही कि क्लासिकल साहित्य मे गम्भीरता के दर्शन हो इतिवृत्तात्मक सौन्दर्य की प्रधानता हो। वह साहित्य शुद्ध सौन्दर्य से ही सतुष्ट हो जाय और सौन्दर्य के This worldliness पर बल दे।

दूसरी ओर रोमाटिक साहित्य शास्त्र की उत्पत्ति उत्तरी महासागरो के तट पर बसे प्रदेशो मे हुई थी। उत्तरी महासागरो का वातावरण बड़ा ही चचल है। वहाँ आँधी और तूफान की अत्यधिकता

है। यदि ऐसे स्थानो पर रोमाटिक साहित्य की उत्पत्ति होती है तो यह साहित्य अगर अपने मे प्रवाह वेग प्राणो की व्याकुलता विद्रोह की भावना स्वच्छन्दता प्रकृति प्रेम आध्यात्मिकता दाशनिकता साहसिक कार्य करने की शक्ति पर्वतो को गिरा देने की शक्ति आदि गुण रखता है तो कोई आश्चर्य नही होगा।

स्कॉटजेम्स ने अपनी पुस्तक ' **The making of Literature** ' मे क्लासिकल रोमाटिक साहित्य पर विचार करते हुए कहा है

The one seeks alwyas a mean the other an extremity Repose satisfies the classic Adventure attracts the Romantic The One appeals to tradition the other demands the novel On one side we may find the virtues and defects which go with the nation of fitness propriety measure restraint conservatism authority calm experience comeliness on the other those which suggested by exitement, energy restlessness sprituality curiosty troublousness progress liberty experiment pro vocutiveness

अर्थात् एक सदा मध्यम मार्ग की खोज मे रहता है दूसरा अति की क्लासिक को शान्ति पसद है। रोमाटिक को साहसिकता आकृष्ट करती है। एक परम्परा की ओर देखता है दूसरे मे नूतनता की चाहना होती है। एक के पक्ष मे वह सब गुण और दोष आ सकते है, जिनका सम्बन्ध चुस्ती औचित्य सन्तुलन सयम गतानुगतिकता अनुशासन शान्ति अनुभव के साथ है। दूसरे पक्ष मे उन गुण और दोषो का समावेश है जो आवेश शक्ति आकुलता आध्यात्मिकता कौतूहल प्रक्षुब्धता प्रगति, स्वातत्र्य प्रायोगिकता और उत्तेजकता की भावनाओं के साथ साथ चला करते है।[20]

1 डॉ० देवराज उपाध्याय *रोमाटिक साहित्य शास्त्र* पृ० 21

डॉ० देवराज उपाध्याय की दृष्टि मे पाश्चात्य स्वच्छन्दतावादी कवि

डॉ० देवराज उपाध्याय ने रोमाटिक काव्य शास्त्र के कोई मूलभूत सिद्धान्त स्वय नही अपितु पाश्चात्य रामाटिक कवियो के माध्यम से प्रतिपादित किया है। जहॉ तक मेरा अपना विचार है अपनी पुस्तक **रोमाटिक साहित्य शास्त्र** मे उनका उद्देश्य रोमाटिक काव्य शास्त्र के सिद्धान्तो को प्रतिपादित करना था भी नही किन्तु हिन्दी साहित्य ज्ञान भण्डार मे पाश्चात्य रोमाटिक काव्य शास्त्र सिद्धान्त व साहित्य शास्त्रीय विचारधारा को सकलित कर भारतीय साहित्य को और अधिक समृद्धिशाली बनाना था। अपनी पुस्तक **रोमाटिक साहित्य शास्त्र** मे अपनी बात शीर्षक क अन्तर्गत वह अपनी इस परम इच्छा को व्यक्त करते है। साथ ही वह प्रत्येक हिन्दी प्रेमी से आशा करते हे कि वह उनकी इस परम इच्छा को कार्यान्वित करेगा।

अरस्तू से लेकर **क्रिस्टोफर काडवेल** तक न जाने कितने साहित्यशास्त्रियो ने कविता, साहित्य और काव्य को न जाने कितने विविध रूपा मे सम्झने और समझाने का प्रयत्न किया है जो हमारे लिए मनन और विचार सकत-ग्रहण का आधार हो सकता है। यह आवश्यक है कि हम उन्हे पढ़े उनका मनन करे और उन पर भारतीय रोशनी का पानी फेरकर उसे और भी समृद्ध करे। समय आ गया है कि हमारे हिन्दी की चिन्ता मे घुल घुलकर मरनेवालो और हिन्दी प्रेमियो का ध्यान इस ओर जल्द से जल्द आकृष्ट हो और कुछ इस ओर क्रियात्मक पद उठाया जाये। इसमे थोड़ी सी भी शिथिलता अक्षम्य अपराध होगी।[1]

लोगो की अग्रेजी साहित्य के प्रति बढ़ती उदासीनता ने **डॉ० देवराज उपाध्याय** को झकझोर कर रख दिया था। उनका मानना था कि यदि यह उदासीनता इसी प्रकार बढ़ती चली गयी तो इसके बड़े ही गम्भीर परिणाम हिन्दी साहित्य को भुगतने पड़ सकते है। अग्रेजी साहित्य मे जो कुछ भी उच्चकोटि की चिन्तनसामग्री है वह हमसे सदा के लिए लुप्त हो सकती है और यह क्षति भारतीय राष्ट्रीय जीवन के लिए अपूरणीय होगी। यदि हम अग्रेजी साहित्य की समृद्धि की ओर से उदासीन हो जायें तो इसमे हिन्दी साहित्य का भला नही है। यदि पारस्परिक विचारो के आदान प्रदान का साधन टूट जाये तो जो क्षति भारत को उठानी पड़ेगी वैसी इगलिस्तान को नही। इसका कारण यह है कि भारतीय मस्तिष्क ने अब तक जो कुछ सोचा और साहित्य रूप मे सुरक्षित रख छोड़ा है वह अनुवाद के रूप मे या सकलन के रूप मे अग्रेजी साहित्य को समृद्धिशाली बना रहा है किन्तु हमारे देश मे लोग इस प्रवृत्ति के प्रति उदासीन है।

डॉ० देवराज उपाध्याय की इस परम इच्छा और उनकी भावनाओं का आदर करते हुए यहॉ पर रोमाटिक कवियो के शास्त्रीय सिद्धान्त उनके विचार मनन सहित प्रस्तुत है। यहॉ **एडिसन, लेसिग, रस्किन** को भी स्थान दिया जा रहा है जो सर्वथा उचित है। क्योंकि **एडिसन** और **लेसिग** उस समय के कवि थे जब क्लासिकल विचारधारा से चिन्तन रोमास की ओर मुड़ रहा था **रस्किन** उस समय का प्रतिनिधित्व करते है जब रोमास की बाढ़ मे उतार आ चला था।[2]

1 डॉ० देवराज उपाध्याय *रोमाटिक साहित्य शास्त्र* पृ० 1 2
2 वही, पृ० 4

डॉ० देवराज उपाध्याय विलियम वर्ड्सवर्थ और उसके द्वारा प्रतिपादित किये गये काव्य सिद्धान्तो से सर्वाधिक प्रभावित है। यही कारण है कि **लिरिकल बैलेड्स** की भूमिका का वह रोमाटिक काव्य का बाइबिल मानते है। इस ग्रन्थ से उन सभी सिद्धान्तो का ज्ञान होता है जो रामाटिक काव्य के प्रधान आधार स्तम्भ है।

लिरिकल बैलेड्स की भूमिका को Preface को हम रोमाटिक काव्य का बाइबिल कह सकते है।[1]

डॉ० देवराज उपाध्याय, कालरिज द्वारा उसकी पुस्तक Biographia Literaria मे दिय गये आलोचना के मूलभूत सिद्धान्तो से भी अत्यन्त प्रभावित दिखते है। **कॉलरिज** द्वारा की गयी **वर्ड्स्वर्थ** की आलोचना की कसौटी को वह साहित्यालोचना की कसोटी मानते है। **डॉ० उपाध्याय** हिन्दी आलाचना के प्रति चिन्तित दिखायी देते है और हिन्दी आलोचको से निवेदन करत है कि **कॉलरिज** की पुस्तक Biographia Literaria मे प्रस्तुत **वर्डसवर्थ** की कविताओं के गुण दोष विवेचन का अध्ययन अवश्य ही करे। **कॉलरिज** के यह सिद्धान्त इतने सरीखे व सटीक है कि T S Eliot न **कॉलरिज** को विश्व का सर्वश्रेष्ठ आलोचक माना है। **डॉ० उपाध्याय** की दृष्टि मे पाश्चात्य कवियो के काव्य शास्त्रीय सिद्धान्तो का वर्णन इस प्रकार है –

डॉ० देवराज उपाध्याय और एडिसन

एडिसन उस काल के व्यक्ति थे जब चिन्तन स्रोत क्लासिकल विचारधारा से रोमाटिक विचार क परिवर्तन की ओर अग्रसर था। यह समय रोमाटिक कविता का बाल्यकाल था। यह वह समय था जबकि परिवर्तन की ओर सबकी निगाहे लगी थी। जो भी इस काल के कवि थे उनका कर्तव्य इस समय और अधिक बढ़ गया था कि वह इस परिवर्तन को रास्ता दिखाये इस बाढ़ को ढाल दे। इसी समय के कवि **एडिसन थे**। इसके पूर्व **अरस्तू** ने काव्य के जो सिद्धान्त प्रतिपादित किये थे वह इतने अधिक तर्कसम्मत सर्वमान्य तथा दृढ़ स्थापित थ कि एसा लगता था कि वह काव्य के अन्तिम लक्ष्य है और अब इसके बाद काव्य सिद्धान्त स्थापित नही किये जा सकते है। ऐसा प्रतीत होता था कि इसके बाद काव्य साहित्य शास्त्र अब आगे उन्नति नही कर सकेगा। **अरस्तू** के ठोस अलकारो की बाह्य रूप रेखा मे इतना आकर्षण था कि काव्य के अन्तस मे देखने का उत्साह ही नही रहा यहॉ तक कि सर्वानन्दविधायिनी कविता के बारे मे भी कोई शब्द न कहे जा सके। अत॰ अब ऐसे काव्य सिद्धान्तो की आवश्यकता प्रतीत हुई जिसमे काव्य साहित्य सिद्धान्त की व्यापक सीमा के अन्तर्गत काव्य के अतिरिक्त विविध विधाऍ यहॉ तक कि प्रत्येक कलाकृति भी आ सके। **एडिसन** ही वह पहले व्यक्ति थे जिन्होने इस प्रकार के काव्य सिद्धान्तो की प्रतिष्ठा का सबसे पहले प्रयत्न किया। अत आधुनिक युग के सर्वप्रथम साहित्यशास्त्रियो मे **एडिसन** का नाम अग्रणीय है।

एडिसन आधुनिक युग के आचार्य तथा आलोक स्तम्भ **बेकन** के काव्य-सम्बन्धी विचारो से पूर्णतया प्रभावित है। इसके साथ साथ वह अरस्तू द्वारा प्रतिपादित काव्य सिद्धान्तो को नकार भी नही पाता। यहॉ तक कि **Paradise Lost** की आलोचना का आधार भी यही काव्य सिद्धान्त है किन्तु यदि वह कही इस मापदण्ड को असफल पाता है तो उसमे आवश्यकतानुसार लचीलेपन का समावेश कर उसे परिवर्तित कर देता है किन्तु साथ ही यह भी स्पष्ट कर देता है कि यहॉ सिद्धान्तो की शिथिलता

1 डॉ० देवराज उपाध्याय *रोमाटिक साहित्य शास्त्र* पृ० 111

डॉ० देवराज उपाध्याय की दृष्टि मे पाश्चात्य स्वच्छन्दतावादी कवि

डॉ० देवराज उपाध्याय ने रोमाटिक काव्य शास्त्र के कोई मूलभूत सिद्धान्त स्वय नही अपितु पाश्चात्य रोमाटिक कवियो के माध्यम से प्रतिपादित किया है। जहॉ तक मेरा अपना विचार है अपनी पुस्तक **रोमाटिक साहित्य शास्त्र** मे उनका उद्देश्य रोमाटिक काव्य शास्त्र के सिद्धान्तो को प्रतिपादित करना था भी नही किन्तु हिन्दी साहित्य ज्ञान भण्डार मे पाश्चातृय रोमाटिक काव्य शास्त्र सिद्धान्त व साहित्य शास्त्रीय विचारधारा को सकलित कर भारतीय साहित्य को और अधिक समृद्धिशाली बनाना था । अपनी पुस्तक **रोमाटिक साहित्न शास्त्र** मे अपनी बात शीर्षक के अन्तर्गत वह अपनी इस परम इच्छा का व्यक्त करते है। साथ ही वह प्रत्येक हिन्दी प्रेमी से आशा करते है कि वह उनकी इस परम इच्छा को कार्यान्वित करेगा।

अरस्तू से लकर **क्रिस्टोफर काडवेल** तक न जाने कितने साहित्यशास्त्रियो ने कविता साहित्य और काव्य को न जाने कितने विविध रूपो मे समझने और समझाने का प्रयत्न किया है जो हमारे लिए मनन और विचार सकेत-ग्रहण का आधार हो सकता है। यह आवश्यक है कि हम उन्हे पढ़े उनका मनन करे और उन पर भारतीय रोशनी का पानी फेरकर उसे और भी समृद्ध करे। समय आ गया है कि हमारे हिन्दी की चिन्ता मे घुल घुलकर मरनेवालो और हिन्दी प्रेमियो का ध्यान इस ओर जल्द से जल्द आकृष्ट हो और कुछ इस ओर क्रियात्मक पद उठाया जाये। इसमे थोड़ी सी भी शिथिलता अक्षम्य अपराध होगी।[1]

लोगो की अग्रेजी साहित्य के प्रति बढ़ती उदासीनता ने **डॉ० देवराज उपाध्याय** को झकझोर कर रख दिया था। उनका मानना था कि यदि यह उदासीनता इसी प्रकार बढ़ती चली गयी तो इसके बड़े ही गम्भीर परिणाम हिन्दी साहित्य को भुगतन पड़ सकते है। अग्रेजी साहित्य मे जा कुछ भी उच्चकोटि की चिन्तनसामग्री है वह हममे सदा के लिए लुप्त हो सकती है और यह क्षति भारतीय राष्ट्रीय जीवन के लिए अपूरणीय होगी। यदि हम अग्रेजी साहित्य की समृद्धि की ओर से उदासीन हो जायॅ तो इसमे हिन्दी साहित्य का भला नही है। यदि पारस्परिक विचारो के आदान प्रदान का साधन टूट जाये तो जो क्षति भारत को उठानी पड़ेगी वैसी इगलिस्तान को नही। इसका कारण यह है कि भारतीय मस्तिष्क ने अब तक जो कुछ सोचा और साहित्य रूप मे सुरक्षित रख छोड़ा है वह अनुवाद के रूप मे या सकलन के रूप मे अग्रेजी साहित्य को समृद्धिशाली बना रहा है किन्तु हमारे देश मे लोग इस प्रवृत्ति के प्रति उदासीन है।

डॉ० देवराज उपाध्याय की इस परम इच्छा और उनकी भावनाओं का आदर करते हुए यहॉ पर रोमाटिक कवियो के शास्त्रीय सिद्धान्त उनके विचार मनन सहित प्रस्तुत है। यहॉ **एडिसन, लेसिग, रस्किन** को भी स्थान दिया जा रहा है जो सर्वथा उचित है। क्योंकि **एडिसन** और **लेसिंग** उस समय के कवि थे जब क्लासिकल विचारधारा से चिन्तन रोमास की ओर मुड़ रहा था **रस्किन** उस समय का प्रतिनिधित्व करते है जब रोमास की बाढ़ मे उतार आ चला था।[2]

1 डॉ० देवराज उपाध्याय *रोमाटिक साहित्य शास्त्र* पृ० 1 2
2 वही, पृ० 4

डॉ० देवराज उपाध्याय विलियम वर्ड्सवर्थ और उसके द्वारा प्रतिपादित किय गये काव्य सिद्धान्तो से सर्वाधिक प्रभावित है। यही कारण है कि **लिरिकल बैलेड्स** की भूमिका का वह रोमाटिक काव्य का बाइबिल मानते है। इस ग्रन्थ से उन सभी सिद्धान्तो का ज्ञान होता है जो रोमाटिक काव्य के प्रधान आधार स्तम्भ है।

लिरिकल बैलेड्स की भूमिका को Preface को हम रोमाटिक काव्य का बाइबिल कह सकत है।[1]

डॉ० देवराज उपाध्याय, कालरिज द्वारा उसकी पुस्तक **Biographia Literaria** मे दिये गये आलोचना के मूलभूत सिद्धान्तो से भी अत्यन्त प्रभावित दिखते है। **कॉलरिज** द्वारा की गयी **वर्ड्स्वर्थ** की आलोचना की कसौटी को वह साहित्यालोचना की कसौटी मानते है। **डॉ० उपाध्याय** हिन्दी आलोचना के प्रति चिन्तित दिखायी देते है और हिन्दी आलोचको से निवेदन करते है कि **कॉलरिज** की पुस्तक **Biographia Literaria** मे प्रस्तुत **वर्डसवर्थ** की कविताओं के गुण दोष विवेचन का अध्ययन अवश्य ही करे। **कॉलरिज** के यह सिद्धान्त इतने सरीखे व सटीक है कि **T S Eliot** ने **कॉलरिज** को विश्व का सर्वश्रेष्ठ आलोचक माना है। **डॉ० उपाध्याय** की दृष्टि मे पाश्चात्य कवियो के काव्य शास्त्रीय सिद्धान्तो का वर्णन इस प्रकार है –

डॉ० देवराज उपाध्याय और एडिसन

एडिसन उस काल के व्यक्ति थे जब चिन्तन स्रोत क्लासिकल विचारधारा से रोमाटिक विचार क परिवर्तन की ओर अग्रसर था। यह समय रोमाटिक कविता का बाल्यकाल था। यह वह समय था जबकि परिवर्तन की ओर सबकी निगाहे लगी थी। जो भी इस काल के कवि थे उनका कर्तव्य इस समय और अधिक बढ़ गया था कि वह इस परिवर्तन को रास्ता दिखाये इस बाढ़ को ढाल दे। इसी समय के कवि **एडिसन थे**। इसके पूर्व **अरस्तू** ने काव्य के जो सिद्धान्त प्रतिपादित किये थे वह इतने अधिक तर्कसम्मत सर्वमान्य तथा दृढ़ स्थापित थे कि ऐसा लगता था कि वह काव्य के अन्तिम लक्ष्य है और अब इसके बाद काव्य सिद्धान्त स्थापित नही किये जा सकते है। ऐसा प्रतीत होता था कि इसक बाद काव्य साहित्य शास्त्र अब आगे उन्नति नही कर सकेगा। **अरस्तू** के ठोस अलकारो की बाह्य रूप रेखा मे इतना आकर्षण था कि काव्य के अन्तस मे देखने का उत्साह ही नही रहा यहॉ तक कि सर्वानन्दविधायिनी कविता के बारे मे भी कोई शब्द न कहे जा सके। अत॰ अब ऐसे काव्य सिद्धान्तो की आवश्यकता प्रतीत हुई जिसमे काव्य साहित्य सिद्धान्त की व्यापक सीमा के अन्तर्गत काव्य के अतिरिक्त विविध विधाऍ यहॉ तक कि प्रत्येक कलाकृति भी आ सके। **एडिसन** ही वह पहले व्यक्ति थे जिन्होने इस प्रकार के काव्य सिद्धान्तो की प्रतिष्ठा का सबसे पहले प्रयत्न किया। अत आधुनिक युग के सर्वप्रथम साहित्यशास्त्रियो मे **एडिसन** का नाम अग्रणीय है।

एडिसन आधुनिक युग के आचार्य तथा आलोक स्तम्भ **बेकन** के काव्य-सम्बन्धी विचारो से पूर्णतया प्रभावित है। इसके साथ साथ वह अरस्तू द्वारा प्रतिपादित काव्य सिद्धान्तो को नकार भी नही पाता। यहॉ तक कि **Paradise Lost** की आलोचना का आधार भी यही काव्य सिद्धान्त है किन्तु यदि वह कही इस मापदण्ड को असफल पाता है तो उसमे आवश्यकतानुसार लचीलेपन का समावेश कर उसे परिवर्तित कर देता है किन्तु साथ ही यह भी स्पष्ट कर देता है कि यहॉ सिद्धान्तो की शिथिलता

1 डॉ० देवराज उपाध्याय *रोमाटिक साहित्य शास्त्र* पृ० 111

से काम नही चलनेवाला है। अत परिवर्तन आवश्यक है'

साहित्य शास्त्र सम्बन्धी विचारो के क्रम मे **एडिसन** ने W1t Judgement Humour तथा Pleasure of ımagınatıon अर्थात् बुद्धि, कल्पना और कल्पना के आनन्द पर भी विचार किया है। उनके इन विचारो ने आधुनिक साहित्यालोचन शास्त्र को एक दृढ़ व स्पष्ट दार्शनिक आधारभूमि दी है। **एडिसन** के अनुसार W1t मनुष्य की वह शक्ति है जो इस नाना रूपात्मक जगत् मे परस्पर विरोधी दिखलायी पड़नेवाली वस्तुओं मे से समानता के कुछ सूत्रो को पकड़ लेती है और उसके सहारे अपने मनोनुकूल चित्रो की सृष्टि कर देखने और दिखाने मे प्रवृत्त होती है।[1]

डॉ० उपाध्याय W1t के लिए हिन्दी मे कल्पना शब्द सुझाते है। **एडिसन** ने W1t या Humour को एक ही माना है। जब W1t मे थोड़ा सा हास्य समा जाता है तो वह Humour हो जाता है फिर एडिसन W1t या Humour को True False तथा M1xed अर्थात् सच्ची कल्पना कपोल कल्पना और मिश्रित कल्पना मे विभक्त करते है। साधर्म्य पर आश्रित कल्पना सच्ची कल्पना स्थूल सादृश्य पर आश्रित कल्पना कपोल कल्पना तथा साधर्म्य और सादृश्य दोनो पर आधारित कल्पना मिश्रित कल्पना की श्रेणी मे आती है। **एडिसन** द्वारा False Humour की परिभाषा से **डॉ० उपाध्याय** पूर्णत प्रभावित है। वह कहते है कि हिन्दी मे उच्चकोटि के हास्य का सर्वथा अभाव है। पूरा लेख पढ़ जाइए यह ही समझ मे नही आयेगा कि व्यग्य बाण किस ओर चल रहे है। **एडिसन** ने **Essay on pleasure of ımagın ıtıon** मे लिखा है कि प्रकृतवस्तु और कलावस्तु मे अन्तर है। प्रकृतवस्तु हमारी इन्द्रियो के प्रभाव-क्षेत्र मे आती है और उसी के सामने अपना प्रदर्शन कर समाप्त हो जाती है आगे नही बढ़ती। किन्तु कला वस्तु इन्द्रियो के द्वार से मस्तिष्क तक पहुँचती है। वह विधायक कल्पना को भी प्रतिक्रिया के लिए बाध्य करती है क्योंकि इन्द्रियो के प्रति निवेदित न रहकर असल मे इसकी अपील विशेषकर कल्पना के लिए होती है। इससे जो आनन्द प्राप्त होता है वह बिम्ब-ग्रहण के लिए आनन्द से मिलता जुलता है। इससे **एडिसन** ने यह सिद्धान्त निकाला कि उच्च-कोटि का काव्य या कला वस्तु वही हो सकती है, जिसमे बिम्ब ग्रहण कराने की शक्ति कल्पना घनीभूत रूप से वर्तमान हो।[2]

कल्पना के आनन्द के विषय मे **एडिसन** का मत है कि मनुष्य की समस्त ज्ञानेन्द्रियो की अनुभूतियाँ आनन्द देने मे इसकी समता नही कर सकती है। यही इन्द्रिय कल्पना के सामने Ideas का जाल बुनती है। इससे उत्पन्न आनन्द ही कल्पना के आनन्द है। यह आनन्द पुन॰ दो श्रेणियो प्राथमिक और द्वितीय मे विभक्त है। साक्षात् चाक्षुष प्रतीति से उत्पन्न आनन्द प्राथमिक आनन्द या Prımary Plcasure कहलाता है किन्तु जब चाक्षुष प्रतीति से उपलब्ध आनन्द पदार्थ ऑखो से ओझल हो अपनी स्मृति अनेक रगो और रूपो से सुसज्जित मानस पटल पर छोड़ जाता है तो उससे प्राप्त आनन्द द्वितीय आनन्द या Secondary Pleasure कहलाता है। कला वस्तु द्वितीय प्रकार के आनन्द की सृष्टि करती है। यही आनन्द काव्य का सर्वोच्च आनन्द है ऐसा **एडिसन** का विचार है। कवि की वाणी से उद्दीप्त पाठक के मस्तिष्क मे काम करनेवाली कल्पना के Secondary Pleasure के बारे मे **एडिसन** कहता है

1　डॉ० देवराज उपाध्याय *रोमांटिक साहित्य शास्त्र* पृ० 84
2　वही पृ० 48

शब्दो के बधन मे बँधकर प्रकृत वस्तु मानो बधनरहित हो जाती है निस्सीम हो जाती है अपार शक्ति समन्वित हो जाती है और हमारे हृदय को अनिर्वचनीय आनन्द से भर देती है। इसका कारण प्रकृत वस्तु के निरीक्षण मे उसका उतना ही रूप हमारी कल्पना मे उग सकता है जो हमारी ऑखो द्वारा गृहीत हो सकता है।[1]

एडिसन ने ही अग्रेजी को सर्वप्रथम सामाजिक चिन्तन का समर्थ और उचित माध्यम बनाया। उसने ऐसे गध की नीव डाली थी जिसमे लखक के व्यक्तित्व क प्रतिबिम्ब के साथ राष्ट्र के चरित्र और प्रतिभा का भी बिम्ब दिखायी दे। उसने विद्ववाणी को जनवाणी से मिलाया। दर्शन का समाजीकरण करना उसे आम जनता तक सम्प्रेषित करना ही **एडिसन** की महत्त्वाकाक्षा थी। स्वय **एडिसन** ने अपनी इस महत्त्वाकाक्षा के बारे मे लिखा है

कहा जाता है कि **सुकरात** ने दर्शन को देवताओं क स्वर्ग से उतारकर साधारण मनुष्यो के बीच ला प्रतिष्ठित किया। मेरी महत्त्वाकाक्षा यही है कि लोग जब मेरी चर्चा करे तो यह कहे कि मैने दर्शन को बन्द कोठरियो पुस्तकालयो और कालेजो से निकालकर क्लबो मे सभाओं मे चाय और कॉफी-गृहो मे ला खड़ा किया।[7]

इस प्रकार हम कह सकते है कि **एडिसन** ने साहित्य शास्त्र मे परिवर्तन की परम्परा की नीव डाली और साहित्यिक आलोचना चिन्तन को एक स्पष्ट व सुदृढ़ आधारभूमि दी।

डॉ० देवराज उपाध्याय और लेसिग

आधुनिक जर्मनी के आलोचको मे **लेसिग** का नाम सर्वप्रथम लिया जाता है। **लेसिग अरस्तू** का अनुयायी था और चाहता था कि **अरस्तू** द्वारा प्रतिपादित काव्य सिद्धान्तो का साहित्य-क्षेत्र मे ज्यो का त्यो पालन होना चाहिए। वह समझता था कि **अरस्तू** द्वारा प्रतिपादित काव्य सिद्धान्त शाश्वत सत्य रूपी दीपक की ज्योति है और जिसकी आभा कभी मलिन नही पड़नी चाहिए। यही कारण था कि कभी-कभी साधारण पाठक को यह भ्रम हो जाता था कि **लेसिग** क्लासिकल साहित्य के प्रति अध श्रद्धा की भावना रखता है। **लेसिंग** रोमाटिक साहित्य के युग मे भी **अरस्तू** द्वारा प्रतिपादित क्लासिकल साहित्य के सिद्धान्तो की दुहाई देता था। यद्यपि यह अनोखा सत्य है कि **लेसिंग** ही वह आलोचक विचारक था जिसने जर्मनी मे रोमासवाद के स्वागतार्थ भूमि तैयार की थी। यही कारण था कि लोगो ने **लेसिग** को I mancipated Classic कहा क्योंकि वह प्राचीन क्लासिकल साहित्य मे केवल विश्वास करता था अधविश्वास नही।

लेसिग ने अपनी पुस्तक **Laocoon** मे मूर्तिकला, चित्रकला और काव्य की सीमा निर्धारित की है। **Dramaturgic** मे **लेसिग** ने ट्रेजेडी के आन्तरिक और बाह्य रूपो और व्यवहारो पर तर्कपूर्ण विचार विवेचन किया है। काव्य साहित्य के सिद्धान्तो की परख विश्लेषण और उनके परिणामो के मूल्याकन ने **लेसिग** को सर्वश्रेष्ठ आलोचक बना दिया था।

लेसिंग का मत है कि काव्य कला के अतिरिक्त अन्य जितनी भी कलाएँ है उनमे तन्मयता की प्राप्ति नही होती। इसका कारण यह है कि उन कलाओं मे प्रयुक्त स्थूल उपकरण बीच-बीच में अपना

1 डॉ० देवराज उपाध्याय *रोमाटिक साहित्य शास्त्र* पृ० 52 53
2 वही पृ० 3

स्थूल रूप प्रकट कर ही देते है जिससे स्वच्छन्दता मे बाधा पड़ती रहती है और तन्मयता का तारतम्य भ्रमित होता दिखायी पड़ता है। दूसरी ओर शब्द तो भाव ही हैं और यह भाव ही पाठक के समक्ष रसानुभूति प्रकट करते है यदि इनमे स्थूलता कुछ मात्रा मे पायी भी जाती है तो पाठक की कल्पना मे उससे रुकावट पैदा नही होती। काव्य ही वह वस्तु है जो पाठक को रसावस्था तक पहुँचाती है। **लेसिग** की पारखी मनोवैज्ञानिक दृष्टि केवल क्षेत्र की भिन्नता निर्धारित नही करती वरन् वह उन उपकरणो की विभिन्नता निर्धारित करती है जिनका प्रयोग विभिन्न कलाओं मे होता है। उदाहरणार्थ काव्य केवल शब्दो के माध्यम से अभिव्यक्त हो सकता है चित्र रगो के माध्यम से और मूर्ति पत्थरादि के माध्यम से। भिन्न माध्यमो के आश्रय के कारण प्रत्येक कला मे इन माध्यमो की अभिव्यजना शक्ति भी भिन्न भिन्न है। चित्र से मूर्ति और काव्य का कार्य नही चल सकता है उसी प्रकार मूर्ति से चित्र और काव्य का तथा काव्य से चित्र और मूर्ति का कार्य नही चल सकता। यदि इनका आपस मे एक दूसरे से काम लिया जाने लगेगा तो यह एक दूसरे के क्षेत्र मे अनधिकार प्रवेश करने की चेष्टा ही मानी जायगी। **लेसिग** ने भिन्न भिन्न कलाओं का सीमा क्षेत्र निर्धारित किया। यह दूसरी बात है कि हमे प्रत्येक कला मे सर्वत्र एक ही प्रकार की विशिष्ट मनःस्थिति और मनोवेग का दर्शन पाते है।

लेसिग ने अपने निबन्धो के माध्यम से काव्य के व्यापक तथा अन्य कलाओं जैसे मूर्तिकला व चित्रकला क अपेक्षाकृत सीमित क्षेत्र का बड़ा ही विस्तृत वर्णन किया है।

एक स्थान पर **लेसिग** कहता है कि सौन्दर्य मे लावण्य (Charm) अवश्य होना चाहिए और मात्र कवि ही इस लावण्य का प्रदर्शन भली प्रकार कर सकता है। **लेसिंग** गतिशील सौन्दर्य को ही लावण्य का नाम देता है। उसका मत है कि यह गतिशील सौन्दर्य अथवा लावण्य कवि के लिए अत्यधिक उपयोगी है, चित्रकार या मूर्तिकार के लिए नही। वास्तव मे चित्रकार के चित्रण गतिहीन हो सकते है। चित्रकार के वश मे गति का व्यग्यात्मक चित्रण ही है। अत चित्रकार के लिए विद्रूप हो जाता है किन्तु, कविता मे विशुद्ध रूप की और गतिशील सौन्दर्य की ओर देखने की लालसा बनी रहती है।

गतिशील सौन्दर्य ही लावण्य है। इसलिए यह कवि के लिए जितना उपयोगी है उतना चित्रकार के लिए नही। चित्रकार तो गति का व्यगात्मक चित्रण ही कर सकता है वास्तव मे उसके चित्र गतिहीन हाते है। अत चित्रकार के लिए विद्रूप हो उठता है। पर कविता मे उसके विशुद्ध रूप की ऐसे गत्यात्मक सौन्दर्य की जिसकी ओर बार-बार देखने की लालसा बनी रहती है रक्षा होती है।[1]

इस प्रकार हम देखते है कि **लेसिग** सच्चे अर्थों मे आलोचक था। उसने अपने ग्रन्थो के द्वारा **हरडर** और **गेटे** के रोमाटिक सिद्धान्तो के लिए मार्ग प्रशस्त किया था। उसने मनोवैज्ञानिक पृष्ठभूमि मे साहित्य शास्त्र के सिद्धान्तो के लिए सुदृढ़ आधार पर पृष्ठभूमि तैयार की। दर्शन के क्षेत्र मे जो स्थान **कापट** का है साहित्य शास्त्र के क्षेत्र मे वही स्थान **लेसिग** का है।

डॉ० देवराज उपाध्याय और परसी विशी शेली

शेली का नाम आज भी आग्ल काव्य गगन मण्डल मे देदीप्यमान नक्षत्रो की तरह विराजमान है जिनकी आभा को काल का अन्धकार भी स्पर्श नही कर पाता है। कठिन नियमो रूढ़ियो और

1 डॉ० देवराज उपाध्याय *रोमाटिक साहित्य-शास्त्र* पृ० 63

बाह्य आडम्बरो के अत्याचार मे पिसी जानेवाली कविता को मुक्ति दिलाने मे शेली की बहुमुखी प्रतिभा का अनन्य योगदान है। अत्याचारो से शोषित कविता जिस क्लासिकल काव्य सिद्धान्तो ने नियमो क कारागार मे डाल दिया था उस बन्दिनी को कारागार से बाहर निकालन और उसे स्वाभाविक राह पर स्वाभाविक विकास के लिए प्रयत्नशील करने के लिए **शेली** ने अत्यन्त परिश्रम किया। यह प्रथमत कवि था बाद मे आचार्य।

शेली के काव्य सिद्धान्त उसकी अपनी पुस्तक **Defence of Poetry** मे सगृहीत है।

पिकाक ने अपनी पुस्तक **"The four Ages of Poetry"** म कविता की उत्पत्ति और उसके विकास पर चर्चा की थी और साथ ही यह विचार भी प्रतिपादित किये थ कि अब कविता का काल समाप्त होनेवाला है। **पिकाक** का मत था कि ज्यो-ज्यो मानव सभ्यता की ओर बढ़ेगा कविता स उसका नाता टूटता जायगा। **पिकाक** समझता था कि ज्ञान विज्ञान की उन्नति के कारण कविता को अपना वर्चस्व भी बचाना कठिन होगा। पीतल युग की कविता ने जब बड़ा ही प्रतिगामी पद उठाया और Back to the nature का नारा लगाया तो **पिकाक** ने कविता के समर्थको के समक्ष दो प्रश्न रखे। प्रथम तो यह कि कविता को पुन लौह युग की अवस्था मे ले जान का क्या औचित्य? तथा दूसरा प्रश्न था कि कविता की उपयोगिता क्या है? विज्ञान क आविष्कार तथा उद्योगो से हमारे व्यावहारिक जीवन मे सहायता मिलती है। हमारी सुख समृद्धि मे वृद्धि होती है किन्तु कविता की काल्पनिक बात हमारे किस काम की? **पिकाक** महोदय यह भी चाहते थे कि कवि अपने सामाजिक नेतृत्व का मुकुट अब वैज्ञानिको और यन्त्राविष्कारको को सौप दे।

शेली, पिकाक के इन आक्षेपो से विचलित हो उठा और उसने ठान ही लिया कि मुझे इन आक्षेपो को निरस्त करना है।

पिकाक महोदय के आक्षेपो की निस्सारता प्रमाणित करने के लिए **शेली** ने कविता क स्वरूप उसको उत्पन्न करनेवाली प्रेरणाओं व उसस सम्बद्ध विविध मानसिक व्यापारो की व्याख्या आदि की तथा कविता के विविध पहलुओं पर विचारपूर्ण विवेचन कर **पिकाक** महोदय की समस्त भविष्यवाणियो और आक्षेपो को निरस्त कर उन्हे ताक मे बैठा ही दिया।

सर्वप्रथम **शेली** ने कविता क्या है? के प्रसग मे कविता के रूप पर गम्भीरतापूर्वक विचार कर परिभाषा दी है। कविता की परिभाषा **शेली** के शब्दो मे इस प्रकार है कविता कल्पना की अभिव्यक्ति है और यह अभिव्यक्ति मनुष्य की जन्मजात प्रवृत्ति है।[1]

कविता का स्वरूप निर्धारण करते समय **शेली** ने दो शब्दो का प्रयाग किया है वह है कल्पना और विवेक। प्रकृति मे यही दोनो शक्तियॉ काम करती है। कल्पना से कवित्व का भाव जागृत होता है और विवेक से वैज्ञानिक नियम व सिद्धान्तो की रचना की जाती है। कल्पना से कवित्व जागृत होने के बाद कलाकृति की रचना होती है। विवेक मस्तिष्क की शक्ति है यह प्रमेय वस्तु का विश्लेषण करती है और उसकी जॉच पड़ताल कर प्रेरक शक्तियो की व्याख्या करती है। विवेक विशेष से साधारणत्व की ओर अग्रसर होता है किन्तु कल्पना इसके विपरीत साधारण से विशेषत्व की ओर बढ़ती है। प्रारम्भ मे दोनो मे साधारणत्व को ढूँढ़ा जाता है पर बुद्धि वही विश्रात के कारण आगे नही

1 डॉ० देवराज उपाध्याय *रोमाटिक साहित्य शास्त्र* पृ० 76

बढ़ती और कल्पना यहाँ निरन्तर कार्य करते हुए इस साधारणत्व को विशेष मे डालकर उसका रूप प्रत्यक्षीकरण करती है कि आत्मा को साधारण से सम्बन्ध स्थापित करने मे कठिनाई का अनुभव होता ही नही वरन् विशेष की स्थिति मे गौण हो जाती है। अत प्रत्येक कला का पूर्व रूप विज्ञानमय होता है और प्रत्येक विज्ञान का पूर्वरूप कलामय होता है। दोनो एक ही सिक्के के दो पहलू है।

विवेक का कार्य तोड़ फोड़ करना है और कल्पना यदि तोड़ फोड़ करती है तो जोड़ने के लिए। विवेक प्रमेय वस्तु के रग को ग्रहण करता है तो कल्पना प्रमेय वस्तु मे निहित रग के व्यजित भाव को।

कोई भी अति सवेदनशील प्राणी जब अपने जीवन के किसी भी महत्त्वपूर्ण क्षण मे किसी अपूर्व ज्योति की झलक देखता है तो लगता है कि मानो उसे किसी अज्ञात लोक की वास्तविकता से साक्षात्कार हो गया हैं। उसकी इस कल्पना की कोई विशिष्ट रेखा या आकार प्रकार नही होता है वह तो निर्गुण निराकार होती है किन्तु कल्पना को इससे भी सतोष नही होता वह चुपके से अपनी समस्त जीवनी शक्ति के साथ मनुष्य के मन मे प्रवेश कर तत्सम्बन्धी भावनाओं के विविध क्षेत्र का विस्तार करती है। मन ही-मन यह विविध भावनाएँ एक व्यापक भावना मे परिणति हो जाती है और भावो का एक चक्र स्थापित करती हैं जो अन्तत कविता का रूप धारण करता है। उस मौलिक सत् पदार्थ की पूर्ण उन्मुक्त अभिव्यक्ति इसी रूप मे हो सकती थी ऐसा कवि-आलोचक **शेली** का मत है। आत्मा मे अभिव्यक्ति की एक प्रेरणा होती है उसी प्रेरणा के लिए आत्मा कल्पना को आज्ञा देती है और इस प्रेरणा के लिए जब आकाश पाताल एक कर अभिव्यक्ति को शब्दो का जामा पहनाकर आत्मा के समक्ष लाकर खड़ी कर देती है तो कविता का जन्म होता है। अत कविता कल्पना की अभिव्यक्ति है।

पिकाक महोदय के अन्य प्रश्न कि कविता की अभिव्यक्ति का उद्देश्य क्या है? इस पर **शेली** ने विधिवत् विचार विनिमय किया है। **शेली** का मानना है कि मनुष्य अपनी वर्तमान स्थिति से कभी सन्तोष नही करता वह उच्चतम की ओर लक्ष्य करता है। मनुष्य की सारी प्रवृत्तियॉ उसको एक ऐसी अवस्था की ओर प्रेरित करती है जहॉ उसकी कल्पना उच्चतम को लक्ष्य करती है यह उच्चतम लक्ष्य और कुछ नही अपितु ब्रह्मानन्दसहोदर की क्षीण छायामात्र है। ससार मे हमारी इन्द्रियो के द्वार से जो भी वस्तु सवेदित होती है वह दर्शको पाठको और श्रोताओं को अधिकाधिक आनन्द की सृष्टि करा सकती है।

सासारिक वस्तुओं को देखकर मनुष्य को एक खास क्रम और लक्ष्य मे विश्वास उत्पन्न हो जाता है जिसमे और किसी चीज की अपेक्षा विशुद्ध आनन्द देने की सामर्थ्य है।[1]

प्रकृति सदैव तट से तम की ओर लक्षित रहती है इस अवस्था तक पहुँचने की उसमे अदम्य प्रेरणा है और इसमे सफलता हेतु सहायतार्थ-मानव चेतन मस्तिष्क का प्रयोग करती है। अन्य कवि आलोचको की तरह **शेली** भी आनन्द को काव्य का प्रयोजन मानते है। केवल आनन्द ही नही वरन् परमानन्द जो कि ब्रह्मानन्दसहोदर की क्षीण छायामात्र है।

तर्क बौद्धिकता या विचार यह मनुष्य जाति की स्वाभाविक विशिष्टता है इन्ही के सहारे मनुष्य सपने सँजोता है। मनुष्य जानता है कि इन्द्रियानुभूत जितने भी पदार्थ है उन सबमे अधूरापन है वह

1 डॉ० देवराज उपाध्याय *रोमांटिक साहित्य शास्त्र* पृ० ४०

मानव प्रवृत्तियो को सतुष्ट नही कर सकते उसकी सारी आकाक्षाओं की पूर्ति नही कर सकते किन्तु मनुष्य कल्पना के द्वारा एक आदर्श सत्ता अथवा व्यवस्था का दर्शन अवश्य कर सकता है। मानसिक जगत् की इस आवश्यकता की पूर्ति करती है कविता। कविता हमारे ऊपर पड़े अज्ञान के पर्दे को हटाकर हमे सच्ची स्थिति का ज्ञान कराती है और हमे आदर्श की ओर अग्रसर होने की प्रेरणा देती है। मानव को अपने विकास के लिए प्रेरित करते हुए विकास के अपार क्षेत्रो का उद्घाटन करती है। **शेली** कहता है कि कविता के इतने उपयोग होने पर भी **पिकाक** महोदय उसे निरुपयोगी बताए तो यह हिमाकत नही तो और क्या है? प्रकृति कला और कलाकार इन पर भी **शेली** ने विस्तृत प्रकाश डाला है। **शेली** ने अपने विस्तृत विवेचन मे बताया कि मनुष्य का प्रकृति से प्रकृति का कला से कला का कलाकार से क्या और कैसा सम्बन्ध है।

कविवर **शेली** के अनुसार मनुष्य के अन्दर कुछ प्रवृत्तियॉ होती है और वे प्रवृत्तियॉ मनुष्य को सदैव प्रेरित करती रहती है। मनुष्य अपनी वर्तमान स्थिति से कभी भी सतुष्ट नही होता। ऐसे मे मनुष्य को प्रवृत्तियो द्वारा प्रेरित किया जाता है। ये प्रवृत्तियॉ मनुष्य को उसी ओर प्रेरित करती है जिस ओर प्रकृति अपनी उच्चतम अवस्था को लक्ष्य करती है। अत प्रकृति भी अपने लक्ष्य की प्राप्ति की सफलता के लिए सदैव मानव चेतन मस्तिष्क की सहायता प्राप्त करती है। मानव प्रकृति के इस उद्देश्य से भलीभॉति परिचित होता है और वह प्रकृति को अपने लक्ष्य तक पहुँचने मे उसकी सहायता करता है। मनुष्य को प्रकृति मे कही पूर्णता दिखायी नही पड़ती किन्तु प्रत्येक वस्तु मे कोई न-कोई आनन्ददायक भावात्मक रूप समाया रहता है। विरोधी तत्त्वो की प्रधानता के कारण भले ही उसका स्वरूप गौण हो जाय किन्तु उसकी गौणता का एहसास होना ही काफी है। मनुष्य के हृदय मे बैठा कवि इस गौणता को बृहदता मे निकालकर विश्व मे उसकी बृहदता का डका बजाता है। इस कार्य मे कल्पना अपना अत्यधिक योगदान देती है। इस कार्य की सफलता के लिए कल्पना आकाश पाताल एक कर देती है।

अत यदि कहा जाय कि कला प्रकृति के ऊपर सशोधन है तो असत्य नही वास्तविक जगत् मे जो वस्तुऍ हमे अस्पष्ट और अपूर्ण रूप मे दिखायी पड़ती है उन्हे पूर्णता व स्पष्टता प्रदान करना ही कलाकार का कर्तव्य है।

प्रत्येक वस्तु की अपनी विशिष्टता अन्य वस्तु की विशिष्टता से विरोधस्वरूप टकराती है किन्तु मनुष्य विशिष्टताओं मे साधारणत्व को प्रतीति के साथ सम्बद्ध कर एक ऐसी अवस्था की कल्पना करता है जो प्रकृति की आदर्श व्यवस्था को प्रतिनिधित्व प्रदान करती हुई उससे भी ऊँचे कही विराजमान होती है। अपने इस भाव को प्रकाशित करने के लिए मनुष्य भाषा का आश्रय लेता है। भावयुक्त भाषा के माध्यम से वह भावो के ही रूप मे साहित्य सृजन का कार्य करता है।

शेली का मत है कि प्रत्येक व्यक्ति प्राकृतिक वस्तुओं का अनुकरण अपने अन्य क्रिया-कलापो की भॉति करता है। प्रत्येक मनुष्य के समान अनुकरण का प्रदर्शन समान नही होता। प्रत्येक मनुष्य मे अनुकृति को प्रदर्शित करने की क्षमता समान नही होती। इसी क्षमता को प्रतिभा या Taste का नाम दिया गया है। जिनमे यह प्रतिभा (Taste) अति प्रचुर मात्रा मे विद्यमान है वह कवि साहित्यिक विचारक आविष्कारक गृह निर्माता, रीति, रस्मो व कानूनो के प्रतिष्ठापक तथा सस्थाओं व धर्म के जन्मदाता आदि किसी भी विशिष्ट व्यक्तित्व के रूप मे प्रकट हो सकते है।

शेली ने मनुष्य के अन्य क्रिया कला‍ ‍ अतिरिक्त नृत्य व सगीत का अनुकरण भी प्राकृतिक वस्तुओं की ध्वनि और उसकी हरकतो से किया है। इन्ही क्रिया-कलापो के अनुकरण के मध्य उसे विशुद्ध आनन्द की सृष्टि करनेवाली आदर्श व्यवस्था की झलक दिखायी देती है और आगे चलकर मनुष्य इस आदर्श का अनिवार्य और शाश्वत रूप स्वीकार कर ही लेता है। भले ही इस आदर्श सत्ता का मापदण्ड प्रत्यक्ष रूप से दिखायी पड़े या न पड़े। स्वय **शेली** कहता है, जिसकी स्थिति उसे अधिक अक्षुण्ण है उसके अस्तित्व की झलक आविष्कार को धर्म व्यवस्थापको और धर्मप्रवर्तको को मिली है। [1]

कला का प्रारम्भ आदिमयुग के सगीत व नृत्य का अनुकरण है। इस अनुकरण की प्रवृत्ति निरन्तर आगे की ओर बढ़ती हुई अन्तत अपनी चरम सीमा भी पार कर जाती है। इस यात्रा मे वह न्प्रकृति के ऊपर न तो कोई शक्ति और नियम लादती है और न ही कोई ऐसी वस्तु उसमे जोड़ने का प्रयत्न करती है जो उसमे वर्तमान न हो। वह तो प्रकृति का केवल सशोधित अनुकृति मात्र है। साथ ही साथ कला का यह प्रयत्न भी रहता है कि वह प्रकृति के अन्तराल की उस अविकसित शक्ति का विकास करे जिसका ज्ञान स्वय प्रकृति को भी नही है जिससे कि प्रकृति अपनी उसी शक्ति के अनुरूप अपना विकास कर सके उसकी गतिविधियॉ नियत्रित और इतनी ज्योतिर्मय हो जायॅ कि वह सत्यम् शिवम् सुन्दरम् के रूप को प्राप्त हो सके।

कविवर **शेली** का मत है कि कल्पना पुनर्सृजन का कार्य करती है। जो भी कुछ उसे बाह्य जगत् से प्राप्त होता है उसके इन्द्रियो क मार्ग से मनुष्य के अन्त करण से टकराकर एक ज्योति विकसित होती है और ज्योति के बढ़ते आलोक मे वह एक अलौकिक नवजगत् का साक्षात्कार करता है और फिर अमूर्त को मूर्त का रूप अपनी अनुकृति की प्रवृत्ति से सहज ही दे देता है। चाहे वह मूर्तिकला हो गृहकला अथवा अन्य कोई भी कला किन्तु कल्पना द्वारा सृजित भावो को साकार रूप देने की सबसे अधिक क्षमता शब्दो मे है अन्य किसी माध्यम मे नही। शब्द तो भावो के सकेत ही नही वरन् स्वय भी भाव रूप है। बिना किसी विरोध के भाव शब्दो के रूप मे खुलकर प्रकाश मे आ जाते है।

कवित्व भाव की चेतना मानवीय चेतना का स्वाभाविक रूप है। वह हर इसान की प्रवृत्ति है किन्तु इसका विकास मानवीय चेतना के विकास के साथ ही सम्भव है।

भाषा और कल्पना का परम सम्बन्ध है कल्पना की कृति। कल्पना से अलग भाषा का कोई रूप नही है कोई अस्तित्व नही है। भाषा और कल्पना का भेद केवल जल और तरगो हृदय और धड़कनो आकाश व नक्षत्रो के भेद के समान ही है। **शेली** के अनुसार भाषा कल्पनाप्रसूत है अत उसका सीधा सम्बन्ध पारस्परिक है जो कल्पना और अभिव्यक्ति के बीच की सीमा तथा सूत्र बनती है। [2]

कल्पना ही काव्य का प्रेरणा स्रोत है अर्थात् कल्पना को यदि काव्य की जननी कहा जाय तो गलत नही है। यह प्रेरणा अर्थात् कल्पना मानव की आदि सहचरी है और जीवनपर्यन्त उसके साथ ही लगी रहती है। यह कवि को अपनी अभिव्यक्ति के लिए बाध्य कर देती है मानो वह किसी दिव्य

1 डॉ० देवराज उपाध्याय *रोमाटिक साहित्य शास्त्र* पृ० ४३
2 वही पृ० ४८

आध्यात्मिक सत्ता के वशीभूत होकर अभिव्यक्ति का कार्य करती है। काव्य की प्रेरणा की तर्क से तुलना करना मूर्खता होगी क्योंकि यह तो स्वतःप्रसूत अनियत्रित किसी रहस्यमयी शक्ति क वशीभूत कार्य करती है।

कविता मनुष्य की मानसिक तृप्ति का साधन और मनुष्य की मानसिक चेतना की चिरसगिनी है। यह आदर्श व्यवस्था की ओर सकेत करती है जो प्रकृति की उच्चतम अवस्था है जहॉ सुख है आनन्द है बल्कि ब्रह्मानन्दसहोदर है।

डॉ० देवराज उपाध्याय और विलियम वर्ड्सवर्थ

विलियम वर्ड्सवर्थ उस समय का कवि था जब फ्रास की क्राति न उग्र रूप धारण कर लिया था जिसके फलस्वरूप हर ओर विद्रोह का स्वर मुखर था। साहित्य के क्षेत्र मे इस परिवर्तन के प्रति आवाज़ उठायी **वर्ड्सवर्थ** ने और साहित्यिक रूढ़ियो और परम्परावादी काव्य के प्रति विद्रोह का स्वर मुखरित करने मे **विलियम वर्ड्सवर्थ** का नाम अग्रणी है।

वर्ड्सवर्थ के जीवन की महत्त्वपूर्ण घटना थी **कॉलरिज** से उसकी मैत्री। **वर्ड्सवर्थ** क जीवन की यह घटना काव्य साहित्यिक जीवन की अत्यन्त महत्त्वपूर्ण घटना बन गई। दोनो काव्य सम्बन्धी चर्चाए करते थे और साहित्य को समृद्धिशाली बनाने की योजनाएँ बनाते थे। **वर्ड्सवर्थ** और **कॉलरिज** की सम्मिलित काव्य चर्चा का परिणाम हमे **Lyrical Ballads** के रूप मे मिलता है। जो क्लासिकल साहित्य के प्रभावपूर्ण शान्त सरावर मे हलचल पैदा करन और विक्षोभ भर देनेवाली वस्तु थी। **Lyrical Ballads** मे **वर्ड्सवर्थ** ने साहित्य शास्त्र का बड़ा ही सशक्त और शक्तिशाली वर्णन किया है। उसकी उत्कृष्ट काव्य रचनाओं के कारण उसे 1843 मे कवि सम्राट् यानी **Poet Laureateship** की उपाधि से अलकृत किया गया था। यह उस युग का सर्वश्रेष्ठ सम्मान था।

वर्ड्सवर्थ के विचारो और भावो की साधारणता ही उसके काव्य की विशेषता थी। उसके विचारो और भावो मे कही भी कोई भी ऐसी बात नही दिखायी देती जिससे उनको मौलिक कहा जाय किन्तु **वर्ड्सवर्थ** के काव्य मे मौलिकता इस बात मे है कि उसने जिन भी विचारो और भावो का समावेश अपने काव्य मे किया है उसके व्यक्तित्व की स्पष्ट छाप मिलती है। उसमे वर्ड्सवर्थीय विशिष्टता का समन्वय हो गया है। अपने विचारो एव भावो को अत्यन्त साधारण ढग से लोगो के सम्मुख प्रस्तुत करना उसकी विशिष्टता थी। यह साधारण प्रस्तुति ही उसकी उच्चता थी। बाहर के भावो को लेकर उन्हे अपने अनुरूप स्वरूप दे साज सज्जा के साथ लोगो के सामने परिवेष्ठित करना **वर्ड् सवर्थ** की विशे षता रही है।

वर्ड्सवर्थ की कविताओं मे हमे सजीव मस्तिष्क और सजीव क्रियात्मक सृजनशील व्यक्तित्व के अतिरिक्त उसमे सहानुभूतिपूर्ण मातृत्व का भी दर्शन होता है। उसके काव्यो मे आनन्द के साथ-साथ जीवन के गम्भीर रहस्यो की धारा भी बहती है जीवन की वास्तविकता के प्रति जागरूकता भी दिखायी देती है। यही से पाठक **वर्ड्सवर्थ** से दर्शन शास्त्र का प्रथम पाठ भी पढ़ता है। यद्यपि कवि **वर्ड्सवर्थ** ने अपना समस्त जीवन काव्य रचना मे व्यतीत किया था तो भी उसका उद्देश्य अपने काव्यो के माध्यम से सौन्दर्य की सृष्टि करना नही था अपितु सत्य का अन्वेषण ही उसका एकमात्र ध्येय था यही विशेषता रोमाटिक कवियो की अपनी अलग विशिष्टता है। उसके समक्ष सुन्दरम् की नही वरन् सत्यम् की मूर्ति थी।

शेली ने मनुष्य के अन्य क्रिया कला॰ ॰ अतिरिक्त नृत्य व सगीत का अनुकरण भी प्राकृतिक वस्तुओं की ध्वनि और उसकी हरकतो से किया है। इन्ही क्रिया-कलापो के अनुकरण के मध्य उसे विशुद्ध आनन्द की सृष्टि करनेवाली आदर्श व्यवस्था की झलक दिखायी देती है और आगे चलकर मनुष्य इस आदश का अनिवार्य और शाश्वत रूप स्वीकार कर ही लेता है। भले ही इस आदर्श सत्ता का मापदण्ड प्रत्यक्ष रूप से दिखायी पड़े या न पड़े। स्वय **शेली** कहता है जिसकी स्थिति उसे अधिक अक्षुण्ण है उसके अस्तित्व की झलक आविष्कार को धर्म व्यवस्थापको और धर्मप्रवर्तको को मिली है।[1]

कला का प्रारम्भ आदिमयुग के सगीत व नृत्य का अनुकरण है। इस अनुकरण की प्रवृत्ति निरन्तर आगे की ओर बढ़ती हुई अन्तत अपनी चरम सीमा भी पार कर जाती है। इस यात्रा मे वह प्रकृति के ऊपर न तो कोई शक्ति और नियम लादती है और न ही कोई ऐसी वस्तु उसमे जोड़ने का प्रयत्न करती है जो उसमे वर्तमान न हो। वह तो प्रकृति का केवल सशोधित अनुकृति मात्र है। साथ ही साथ कला का यह प्रयत्न भी रहता है कि वह प्रकृति के अन्तराल की उस अविकसित शक्ति का विकास करे जिसका ज्ञान स्वय प्रकृति को भी नही है जिससे कि प्रकृति अपनी उसी शक्ति के अनुरूप अपना विकास कर सके उसकी गतिविधियाँ नियत्रित और इतनी ज्योतिर्मय हो जायें कि वह सत्यम् शिवम् सुन्दरम् के रूप को प्राप्त हो सके।

कविवर **शेली** का मत है कि कल्पना पुनर्सृजन का कार्य करती है। जो भी कुछ उसे बाह्य जगत् से प्राप्त होता है उसके इन्द्रियो के मार्ग से मनुष्य के अन्त करण से टकराकर एक ज्योति विकसित होती है और ज्योति के बढ़ते आलोक मे वह एक अलौकिक नवजगत् का साक्षात्कार करता है और फिर अमूर्त को मूर्त का रूप अपनी अनुकृति की प्रवृत्ति से सहज ही दे देता है। चाहे वह मूर्तिकला हो, गृहकला अथवा अन्य कोई भी कला किन्तु कल्पना द्वारा सृजित भावो को साकार रूप देने की सबसे अधिक क्षमता शब्दो मे है अन्य किसी माध्यम मे नही। शब्द तो भावो के सकेत ही नही वरन् स्वय भी भाव रूप है। बिना किसी विरोध के भाव शब्दो के रूप मे खुलकर प्रकाश मे आ जाते है।

कवित्व भाव की चेतना मानवीय चेतना का स्वाभाविक रूप है। वह हर इसान की प्रवृत्ति है किन्तु इसका विकास मानवीय चेतना के विकास के साथ ही सम्भव है।

भाषा और कल्पना का परम सम्बन्ध है कल्पना की कृति। कल्पना से अलग भाषा का कोई रूप नही है कोई अस्तित्व नही है। भाषा और कल्पना का भेद केवल जल और तरगो हृदय और धड़कनो आकाश व नक्षत्रो के भेद के समान ही है। **शेली** के अनुसार भाषा कल्पनाप्रसूत है अत उसका सीधा सम्बन्ध पारस्परिक है जो कल्पना और अभिव्यक्ति के बीच की सीमा तथा सूत्र बनती है।[2]

कल्पना ही काव्य का प्रेरणा-स्रोत है अर्थात् कल्पना को यदि काव्य की जननी कहा जाय तो गलत नही है। यह प्रेरणा अर्थात् कल्पना मानव की आदि सहचरी है और जीवनपर्यन्त उसके साथ ही लगी रहती है। यह कवि को अपनी अभिव्यक्ति के लिए बाध्य कर देती है मानो वह किसी दिव्य

1 डॉ० देवराज उपाध्याय *रोमाटिक साहित्य शास्त्र* पृ० ८३
2 वही पृ० ८६

आध्यात्मिक सत्ता के वशीभूत होकर अभिव्यक्ति का कार्य करती है। काव्य की प्रेग्णा की तर्क से तुलना करना मूर्खता होगी क्योंकि यह तो स्वतःप्रसूत अनियत्रित किसी रहस्यमयी शक्ति क वशीभूत कार्य करती है।

कविता मनुष्य की मानसिक तृप्ति का साधन और मनुष्य की मानसिक चेतना की चिरसगिनी है। यह आदर्श व्यवस्था की ओर सकेत करती है जो प्रकृति की उच्चतम अवस्था है जहॉ सुख है आनन्द है बल्कि ब्रह्मानन्दसहोदर है।

डॉ० देवराज उपाध्याय और विलियम वर्ड्सवर्थ

विलियम वर्ड्सवर्थ उस समय का कवि था जब फ्रास की क्राति ने उग्र रूप धारण कर लिया था जिसके फलस्वरूप हर ओर विद्रोह का स्वर मुखर था। साहित्य के क्षेत्र म इस परिवर्तन के प्रति आवाज़ उठायी **वर्ड्सवर्थ** ने और साहित्यिक रूढ़ियो और परम्परावादी काव्य के प्रति विद्रोह का स्वर मुखरित करने मे **विलियम वर्ड्सवर्थ** का नाम अग्रणी है।

वर्ड्सवर्थ के जीवन की महत्त्वपूर्ण घटना थी **कॉलरिज** से उसकी मैत्री। **वर्ड्सवर्थ** के जीवन की यह घटना काव्य साहित्यिक जीवन की अत्यन्त महत्त्वपूर्ण घटना बन गई। दोनो काव्य सम्बन्धी चर्चाए करते थे और साहित्य को समृद्धिशाली बनाने की योजनाएँ बनाते थे। **वर्ड्सवर्थ** और **कॉलरिज** की सम्मिलित काव्य चर्चा का परिणाम हमे **Lyrical Ballads** के रूप मे मिलता है। जो क्लासिकल साहित्य के प्रभावपूर्ण शान्त सरोवर मे हलचल पैदा करने और विक्षोभ भर देनेवाली वस्तु थी। **Lyrical Ballads** मे **वर्ड्सवर्थ** ने साहित्य शास्त्र का बड़ा ही मशक्त और शक्तिशाली वर्णन किया है। उसकी उत्कृष्ट काव्य रचनाओं के कारण उसे 1843 मे कवि सम्राट् यानी **Poet Laureateship** की उपाधि से अलकृत किया गया था। यह उस युग का सर्वश्रेष्ठ सम्मान था।

वर्ड्सवर्थ के विचारो और भावो की साधारणता ही उसके काव्य की विशेषता थी। उसके विचारो और भावो मे कही भी कोई भी ऐसी बात नही दिखायी देती जिससे उनको मौलिक कहा जाय किन्तु **वर्ड्सवर्थ** के काव्य मे मौलिकता इस बात मे है कि उसने जिन भी विचारो और भावो का समावेश अपने काव्य मे किया है उसके व्यक्तित्व की स्पष्ट छाप मिलती है। उसमे वर्ड्सवर्थीय विशिष्टता का समन्वय हो गया है। अपने विचारो एव भावो को अत्यन्त साधारण ढग से लोगो के सम्मुख प्रस्तुत करना उसकी विशिष्टता थी। यह साधारण प्रस्तुति ही उसकी उच्चता थी। बाहर के भावो को लेकर उन्हे अपने अनुरूप स्वरूप दे साज सज्जा के साथ लोगो के सामने परिवेष्ठित करना **वर्ड्सवर्थ** की विशे षता रही है।

वर्ड्सवर्थ की कविताओं मे हमे सजीव मस्तिष्क और सजीव क्रियात्मक सृजनशील व्यक्तित्व के अतिरिक्त उसमे सहानुभूतिपूर्ण मातृत्व का भी दर्शन होता है। उसके काव्यो मे आनन्द के साथ साथ जीवन के गम्भीर रहस्यो की धारा भी बहती है जीवन की वास्तविकता के प्रति जागरूकता भी दिखायी देती है। यही से पाठक **वर्ड्सवर्थ** से दर्शन शास्त्र का प्रथम पाठ भी पढ़ता है। यद्यपि कवि **वर्ड्सवर्थ** ने अपना समस्त जीवन काव्य रचना मे व्यतीत किया था तो भी उसका उद्देश्य अपने काव्यो के माध्यम से सौन्दर्य की सृष्टि करना नही था अपितु सत्य का अन्वेषण ही उसका एकमात्र ध्येय था यही विशेषता रोमाटिक कवियो की अपनी अलग विशिष्टता है। उसके समक्ष सुन्दरम् की नही वरन् सत्यम् की मूर्ति थी।

उसकी कविताओं के अध्ययन से यह ज्ञात होता है कि यदि **वर्ड्सवर्थ** पुस्तकहीन और जनहीन ससार मे भी जन्मा होता तो उसके विचार तब भी वही होते जो आज है। शायद यही कारण है कि वह प्रकृति के साहचर्य मनुष्य का सर्वागीण विकास देखता है। इसी कारण वह Lyrical Ballads मे ग्रामीण किसान को अपने काव्य का विषय बनाता है। निम्न ग्रामीण जीवन का प्रशस्ति गान गाते हुए वह कहता है ग्रामीण अवस्था मे हृदय की भावनाओं को फलने फूलने का अवसर अधिक मिलता है। प्रकृति के सम्पर्क और साहचर्य से मनुष्य के विचार अधिक सूक्ष्म और स्वस्थ होते है। दूसरे उसका विचार यह भी था कि प्रकृति के साथ अहर्निश सम्पर्क मे जीवन व्यतीत करने से भाषा की श्रेष्ठता का निर्माण होता है। इसी कारण **वर्ड्सवर्थ** ने काव्य के लिए ग्रामीण किसानो की उद्दीप्त क्षणो की भाषा का काव्य के प्रयोग के लिए अनुमोदन किया है। इस बात को लेकर **वर्ड्सवर्थ** की काफी आलोचना की गयी थी। आलोचको ने भारी तूफान उठाकर **वर्ड्सवर्थ** की भर्त्सना की थी। यहॉ तक कि उसके अपने मित्र **कॉलरिज** तक ने उसे अपनी आलोचना का विषय बनाया था किन्तु इससे **वर्ड्सवर्थ** के ऊपर कोई प्रभाव नही पड़ा और वह सदैव अपने विचारो पर चट्टान की तरह अडिग रहा।

विलियम वर्ड्सवर्थ रोमाटिक युग का सर्वश्रेष्ठ नेता व अनन्य पुजारी था। उसकी कविताओं मे स्वच्छन्दतावादी चिन्तन की झलक स्पष्ट दृष्टिगोचर होती है। **वर्ड्सवर्थ** बड़ा ही भावुक था और उसका हृदय अत्यन्त ग्रहणशील था। उसने दो बार फ्रास की यात्रा की थी। सयोग से उन्ही दिनो फ्रास मे बड़ी ही उथल पुथल मची थी। लोग प्राचीन रूढ़ियो और दासत्व के प्रति अपनी आस्था व विश्वास तो समाप्त कर विद्रोह छेड़ चुके थे और समता भाई चारा और स्वतत्रता के सपनो को चरितार्थ करने वाली कल्पना से मदमस्त थे। फ्रास मे उन दिनो क्राति की लहर सर्वत्र दृष्टिगोचर हो रही थी। **वर्ड्सवर्थ** के भावुक मन और विचारो पर इस क्राति का प्रभाव पड़ा। वह क्रातिकारियो का सहयोग भी करना चाहता था किन्तु अपने अभिभावको के कारण इग्लैण्ड वापस आ गया। फ्रास की क्राति की उत्तमता पर **वर्ड्सवर्थ** का हृदय इतना मुग्ध था कि जब राजनीतिक मतभेद के कारण इग्लैण्ड व फ्रास के मध्य युद्ध छिड़ा तो वह फ्रास की विजय कामना की और प्रार्थना किया करता था। वह सासारिक सघर्षों से तग आ चुका था और सघर्षों से मुक्ति पाने के लिए अन्तत उसने प्रकृति की गोद मे शरण ली। सयोगवश उसे Wyet Valley मे भ्रमण करने का अवसर मिला। वहाँ के सौन्दर्य को देख **वर्ड्सवर्थ** मत्रमुग्ध हो गया। उस समय हृदय से मानो उद्‌गार फूट पड़े। **वर्ड्सवर्थ** के यह उद्‌गार काव्य साहित्य जगत् की अविस्मरणीय और शाश्वत सम्पत्ति बन गये। उसके प्रकृति सम्बन्धी श्रेष्ठ काव्यो के लेखन का समय यह ही था किन्तु **वर्ड्सवर्थ** के दृष्टिकोण मे आगे चलकर अचानक परिवर्तन दिखायी पड़ा। कहॉ तो वह स्वच्छन्दतावाद और प्रकृति के सौन्दर्य के गीत गाया करता था कहॉ अब उसके काव्य मे काठिन्य और कट्टरता आ गयी थी अब तो वह प्रत्येक सुधार का भी विरोधी हो गया था। जो कवि आनन्द और उल्लास सयोग वियोग प्रकृति शृगार और अनुपम वैभव के गीत गाया करता था वही जीवन के दुखमय व सुखमय बनाने का तरीका तथा लोगो को नैतिक शिक्षा और कर्तव्य के प्रति जागरूकता का पाठ पढ़ाने लगा था। फ्रास की क्राति ने भी आगे चलकर वीभत्स रूप धारण कर लिया जिसका सीधा प्रभाव उसके हृदय व विचारो पर पड़ा था यही कारण था कि वह सुधारो तक का विरोधी हो गया था। अत फ्रास की क्राति के परिवर्तित स्वरूप ने ही **वर्ड्सवर्थ** के उत्साह और उमग की करुणा पर अविश्वास और अनास्था की चादर डालकर उसकी आभा को समाप्त कर दिया था।

वर्ड्सवर्थ के काव्य मे मूल रूप से दो सिद्धान्तो के दर्शन होते है। यही सिद्धान्त **वर्ड्सवर्थ** के काव्य की गतिविधि को सचालित करते दिखायी देते है। **वर्ड्सवर्थ** का पहला काव्य सिद्धान्त मनुष्य से सम्बन्धित था तो दूसरा काव्य सिद्धान्त प्रकृति से। **वर्ड्सवर्थ** कहता था कि मनुष्य के अन्दर ही नारायण निवास करता है। नर मे ही नारायणत्व का अश होता है। मनुष्य चाहे तो वह नारायण का स्वरूप हो सकता है। वह नारायण बन परिस्थितियो पर शासन कर सकता है न कि उसके हाथ की कठपुतली। **वर्ड्सवर्थ** वैयक्तिक गौरव मे पूर्ण विश्वास व आस्था रखता था। **वर्ड्सवर्थ** का यह सिद्धान्त तत्कालीन समाज और उसके वातावरण की अपनी विशिष्टता थी।

दूसरा सिद्धान्त उसका रूसो द्वारा दिये नारे Back to the nature से प्रभावित था। उसकी धारणा थी कि यदि मनुष्य प्रकृति से सम्बन्ध स्थापित करले तो प्रकृति के साहचर्य मे मनुष्य अपने अन्दर अपार मानसिक और नैतिक बल को सगृहीत कर सकता है। अपनी इस धारणा के प्रति **वर्ड्सवर्थ** पूर्णत आश्वस्त था। **Lyııcal Ballads** मे उसने अपने इस सिद्धान्त को पूर्णतया प्रतिपादित भी किया है।

वर्ड्सवर्थ के मन मे प्रकृति और मनुष्य के प्रति अपार श्रद्धा भाव थे। वह दोनो को सर्वशक्ति सम्पन्न समझता था किन्तु साथ ही उसका विश्वास यह भी था कि मनुष्य और प्रकृति के अन्तराल से शक्ति ग्रहण करने को स्वय को स्वच्छन्द विचरण करने दे तो वह अनन्त शक्ति सम्पन्न हो सकता है। वह कहता है कि यद्यपि प्रकृति का अस्तित्व भी है और प्रकृति मे वह शक्ति भी है कि वह मनुष्य के हृदय को दिव्य शक्ति से मण्डित कर दे किन्तु मनुष्य के कल्पना-ससार के अभाव मे प्रकृति मूक हो जाती है क्योंकि मनुष्य की कल्पना ने ही प्रकृति को वाणी दी है चाहे प्रक्रति Thıngs for ever speakıng ही क्यो न हो। उसे जीवन तो मानव-जीवन से ही मिलता है। **वर्ड्सवर्थ** कहता है कि प्रकृति उसे ही कुछ देती है जो प्रकृति को कुछ देता है। प्रसुप्त कल्पनावाले व्यक्ति से प्रकृति को कोई सरोकार नही प्रकृति की विभूतियो का वरदान उसी को प्राप्त हो सकता है जिसकी कल्पना सदैव जागरूक हो। सक्षेप मे यही कहा जा सकता है कि **वर्ड्सवर्थ** के अनुसार जब मनुष्य की कल्पना के इस गौरवमयी प्रकृति के साथ सम्बन्ध होगे तो मनुष्य धर्म सुख शान्ति और नीति को प्राप्त कर सकता है।

वर्ड्सवर्थ प्रकृति का प्रेमी था और उसका अधिकाश समय प्रकृति के साहचर्य मे व्यतीत होता था। प्रकृति की निकटता के कारण प्रकृति की समस्त वस्तुओं के प्रति उसके हृदय मे प्रेम, श्रद्धा और आकर्षण के भाव जागृत हो गए थे। शहर निवासियो की अपेक्षा ग्रामवासियो विशेषकर किसानो का जीवन प्रकृति के साहचर्य मे व्यतीत होता है अतएव किसानो के जीवन भाव, रहन-सहन भाषा और उनकी भावनाओं का वह बड़ा आदर करता था और ग्रामीण किसान को वह बड़े ही सम्मान की दृष्टि से देखता था। ग्रामीण किसानो की भाषा मे उसे एक विचित्र-सा दर्द जीवन की हलचल मायूसी अपील और सबसे ऊपर पवित्रता दिखायी पड़ती थी। इसके साथ **वर्ड्सवर्थ** की विधायक कल्पना शक्ति इतनी तत्पर थी कि वह प्रकृत वस्तु को अपने रस से सीचकर लोक सृष्टि का बना देती थी। **वर्ड्सवर्थ** की इस प्रवृत्ति के कारण उसके मन के भाव अपनी अभिव्यक्ति के लिए ऐसी भाषा चुनते थे जो सजीवता लिए हुये साधारण बोल चाल की भाषा से भी कही अधिक उद्यता लिये होती थी।

इस प्रकार **वर्ड्सवर्थ** का काव्य दो प्रकार की शैलियो से प्रेरित दिखायी पड़ता है। पहली शैली

प्रकृति प्रेमी व्यक्ति से और दूसरी उसकी विधायक कल्पना से। **वर्ड्सवर्थ** की शैली के प्रेरणास्रोत को देख उसके आलोचको के स्वर मुखरित हो उठे। **कॉलरिज** उसके आलोचको मे प्रमुख था। उसके आलोचको का कथन था कि जब स्वय **वर्ड्सवर्थ** ने ही अपने Poetic Diction वाले सिद्धान्तो का परिपालन नही किया तो इसका अर्थ यही है कि इसमे कोई तथ्य या कोई सत्य नही है।

वर्ड्सवर्थ के काव्य शास्त्र के सम्बन्ध मे **डॉ० देवराज उपाध्याय** ने बड़ी ही विस्तृत चर्चा की है। **वर्ड्सवर्थ** के काव्य सिद्धान्त और आलोचको द्वारा इसकी आलोचना दोनो ही तत्त्वो को **डॉ० उपाध्याय** ने अपने चिन्तन व मनन का विषय बनाया है।

डॉ० देवराज उपाध्याय वर्ड्सवर्थ और **कॉलरिज** की मैत्री को ऑग्ल साहित्य की एक विचित्र घटना मानते है। **वर्ड्सवर्थ** और **कॉलरिज** की मैत्री के कारण ही Lyrical Ballads जैसे काव्य सग्रह का प्रणयन सम्भव हो सका था। इस काव्य सग्रह मे दोनो मित्र कवियो की कविताएँ सम्मिलित रूप से सग्रहीत थी और इन मित्रो की कविताओं का एकमात्र उद्देश्य था काव्य की आत्मा की क्लासिकल काव्य के परम्परावादी नियम आडम्बर और अनुशासन से मुक्ति। लोगो के समक्ष यह आदर्श उपस्थित करना कि स्वच्छन्द और उन्मुक्त वातावरण मे पली कविता कितने अधिक बल का सचार करती है और स्फूर्तिदायक हो सकती है। इस काव्य सग्रह मे सगृहीत कविताएँ आम काव्य प्रवाह से हटकर एकदम विपरीत धारा प्रवाहित करती दृष्टिगोचर होती थी। विपरीत धारा प्रवाहित करती इस काव्य सग्रह की कविताओं का भावपक्ष और विभाव पक्ष दोनो ही तत्कालीन युग क काव्य से एकदम भिन्न थे। नूतन काव्य धारा व काव्य युग का प्रारम्भ करने के उद्देश्य से उसके स्वरूप पर प्रकाश डालने का प्रयत्न किया था **वर्ड्सवर्थ** ने। उसके द्वारा प्रस्तुत काव्य सिद्धान्तो को रोमाटिक काव्यधारा का प्रधान आधार स्तम्भ माना गया है। यही कारण है कि Lyrical Ballads की भूमिका अर्थात् Preface को **डॉ० देवराज उपाध्याय** ने रोमाटिक काव्य का बाइबिल कहा है।

Lyrical Ballads के प्रकाशन के पूर्व **वर्ड्सवर्थ** के मित्रगण नूतन काव्यधारा के स्वरूप पर प्रकाश डालन के उद्देश्य से और नूतन काव्य सिद्धान्त प्रतिपादित करने के उद्देश्य से यह चाहते थे कि **वर्ड्सवर्थ** एक ऐसी पुस्तक लिखे जिसमे उपर्युक्त सभी तत्त्वो के अतिरिक्त काव्य का रसास्वादन भी कर सके। **वर्ड्सवर्थ** ने यद्यपि कोई ऐसी पुस्तक नही लिखी किन्तु उसकी सहज बुद्धि यह अवश्य स्वीकारती थी कि प्रेषणीय और ग्रहणीयता काव्य का मुख्य आधार है। क्लासिकल साहित्य की तड़क भड़क के सामने Lyrical Ballads जैसी सीधी सादी कविता के प्रस्तुतीकरण के सदर्भ मे इसके समर्थन और सफाई प्रस्तुत करने के उद्देश्य से और इस पुस्तक के सम्बन्ध मे की गयी ऊट पटॉग आलोचनाओं का उत्तर देने के लिए ही **वर्ड्सवर्थ** ने इसके द्वितीय सस्करण मे भूमिका लिखी जो Preface के नाम से जानी जाती है। इसमे **वर्ड्सवर्थ** ने तत्कालीन क्लासिकल काव्यालोचना और उसकी असगतियो से रोमाटिक कविताओं की भिन्नता प्रतिपादित करते हुए भिन्नता के कारण तथा उसकी उपलब्धियो इत्यादि का वर्णन किया है।

वर्ड्सवर्थ ने क्लासिकल काव्य की तड़क भड़क से भिन्नता रखने के कारण ही साधारण ग्राम्य जीवन की घटनाओं और परिस्थितियो को अपने काव्य का विषय बनाया। अपने काव्य मे भाषा प्रयोग करते समय **वर्ड्सवर्थ** ने इस बात का प्रयत्न किया और ध्यान भी रखा कि सर्वसाधारण की बोलचाल की भाषा का काव्योपयोगी बनाया जाय क्योंकि यह भाषा साधारणत जनसाधारण के व्यवहार की

भाषा होती है। इस भाषा के प्रयोग के माध्यम से वह इस काव्य को जनसाधारण तक पहुँचाने की चेष्टा करता है।

जब **वर्ड्सवर्थ** ने अपने ही प्रदेश की यानी कम्बरलैण्ड के लेक डिस्ट्रिक मे ग्राम्य और साधारण जीवन की घटनाओं को अपने काव्य का विषय बनाया तो आलोचको ने उसकी खूब भर्त्सना की किन्तु **वर्ड्सवर्थ** तो अपने मत पर अटल था चट्टान की भॉति अडिग था। **वर्ड्सवर्थ** का काव्य सिद्धान्त सर्वप्रथम प्रकृति से प्रेरणा लेता है। अत उसका मत था कि नगरवासी प्रकृति के साहचर्य से दूर रहता है जिसके कारण उसके खान पान वेश भूषा रहन सहन और साज सज्ञा के ढग मे कृत्रिमता बस जाती है जो उसे प्रकृति से और अधिक दूर कर देती है और वही दूसरी ओर एक ग्रामीण किसान प्रकृति के साहचर्य मे अपना समय व्यतीत करता है अत उसके रहन-सहन खान पान वेश भूषा और साज सज्ञा को सभ्यता के कृत्रिम बोझ से दबना नही पड़ता फलत वह अपनी स्वाभाविकता नही छोड़त। उनके जीवन का सचालन नैसर्गिक रूप से होता है। ऐसी स्थिति मे मनुष्य का प्राकृतिक जीवन स्रोत मनुष्य के जीवन को निरन्तर सीचता रहता है। मनुष्य का शारीरिक मानसिक और नैतिक शक्ति का विकास भी इसी अवस्था मे सम्भव है और तभी मनुष्य की मानवोचित भावनाओं को प्रस्फुटित होने का अवसर मिल सकता है।

वर्ड्सवर्थ स्वय भी कहता है

In that condition the essential passions of human heart (which supply the subject of poetry) find a setter soil in which they can attain maturity

अर्थात् इस परिस्थिति मे ही काव्य के आधारभूत मानव हृदयस्थ प्रधान भावनाओं को परिस्फुटित होकर परिपक्वावस्था तक पहुँचने के लिए उपयोगी जमीन मिल सकती है।[1]

अत ग्राम्य जीवन मे ही उसे अपने काव्योपयोगी इतनी सामग्री मिल सकती है तो काव्योपयोगी विषयो का निर्वाचन नगर के कृत्रिम जीवन से क्यो करे? अतएव **वर्ड्सवर्थ** ने किसानो हलवाहो और प्रकृति के यशगान को ही अपन काव्य का विषय बनाया।

अपने काव्य सग्रह **Lyrical Ballads** की भाषा के लिए उसने साधारण लोगो के व्यवहार की भाषा को ही चुना है। **वर्ड्सवर्थ** ने स्वय भी In a selection of language really used by man कहकर सर्वसाधारण की वास्तविक भाषा के प्रयोग का अनुमोदन किया है। विद्वानो ने अत्यन्त विद्वत्तापूर्ण युक्तियो से वर्ड्सवर्थ के भाषा सम्बन्धी सिद्धान्तो की जमकर आलोचना की थी किन्तु **डॉ० देवराज उपाध्याय** के अनुसार **वर्ड्सवर्थ** के आलोचक त्रुटि पर थे और इसी कारण वह **वर्ड्सवर्थ** के साथ न्याय नही कर सके। पहली बात तो यह थी कि **वर्ड्सवर्थ** ने अपने काव्य-सम्बन्धी सिद्धान्त **Poetic Diction** के विरोध मे प्रतिपादित किये थे। **वर्ड्सवर्थ** की आलोचना करते समय आलोचक इस तथ्य को भुला चुके थे। दूसरे **वर्ड्सवर्थ** ने अपने काव्य सग्रह मे ग्रामीण किसानो की सर्वसाधारण की भाषा की जो प्रशस्ति गायी है उसका अर्थ ही आलोचको ने गलत निकाला। वह समझे कि काव्य मे प्रयुक्त केवल ग्राम्यवासियो की सर्वसाधारण भाषा ही काव्य भाषा का स्थान ले सकती है अन्य कोई भाषा नही जबकि **वर्ड्सवर्थ** ने ग्रामवासियो की भाषा की अपने काव्य मे केवल प्रशसा की है। उसे काव्योपयोगी एकमात्र भाषा बनाने के लिए युद्ध नही।

अठारहवी शताब्दी मे **Poetic Diction** के आधार पर कुछ ऐसी कविताएँ लिखी जा रही थी जिनको पढ़कर लोगो के मन मे यह धारणा घर कर रही थी कि काव्य की भाषा मे कुछ न कुछ वैशिष्ट्य अवश्य ही होना चाहिए। साथ ही साथ लोग इस बात मे भी विश्वास करने लगे थे कि गद्य और पद्य की भाषा एक नही हो सकती है। दोनो मे पर्याप्त विभिन्नता है। किसी बात को साधारण सीधे सादे ढग से सहज भाव से प्रस्तुत करना गद्य ही माना जायगा काव्य नही। काव्य की श्रेणी मे स्वय को प्रतिष्ठित करने के लिए कविता को अपने अन्दर कुछ विशिष्ट शब्दो को सँजोना होगा। Man Lady Sky तथा Sea इन शब्दो का काव्य मे कोई स्थान नही होगा किन्तु Swain Nymph Blue Deep इत्यादि ऐसे शब्द है जो काव्योपयोगी है। यदि किसी वस्तु का उल्लेख उसके प्रचलित नाम से या किसी घटना को प्रकृत रूप मे उपस्थित कर दिया जाता था तो समस्त वर्णन नीरस माने जाते थे। जड़ को चैतन्य रूप प्रदान करने मूर्त को अमूर्त रूप देना अर्थान्तरन्यास का प्रयोग और प्राचीन क्लासिकल साहित्य के शब्दो वाक्याशो तथा कथाओं का बारम्बार प्रयोग ही काव्यात्मक समझा जाता था। तत्कालीन काव्योद्यान की शोभा इस तरह के झाड़ झखाड़ो से मन्द हो गई थी। **वर्ड्सवर्थ** कहता है कि यदि हम **Poetic Diction** के सिद्धान्त के पक्षपाती कवियो की रचनाओं का अध्ययन करे तो हमे वही अश सर्वोत्तम लगेगे जहाँ कवि **Poetic Diction** के सिद्धान्त से परे भाव व्यक्त करता है।

प्राय **वर्ड्सवर्थ** के आलोचक इस प्रश्न को उसकी आलोचना करते समय अवश्य ही प्रस्तुत करते थे कि क्या ग्राम्य जीवन मे ग्रामवासियो द्वारा प्रयुक्त भाषा काव्य की भाषा हो सकती है? इस सम्बन्ध मे **वर्ड्सवर्थ** कहता है कि कवि दो प्रकार से भावाभिव्यक्ति करता है। प्रथम नाटकीय साधन कहलाता है अर्थात् कवि पात्रो के द्वारा, उनके सवादो के द्वारा अपने हृदयस्थ भावो की अभिव्यक्ति करता है। अभिव्यक्ति के प्रथम प्रकार को लेकर तो आलोचक कोई आपत्ति नही करते किन्तु दूसरे प्रकार की अभिव्यक्ति को लेकर उनमे पर्याप्त मतभेद के दर्शन होते है। नाटकीय अभिव्यक्ति के बारे मे सभी एकमत है कि पात्रो की स्थिति के अनुरूप ही भाषा योजना होनी चाहिए। नाटक के पात्र किसी भी वर्ग के लिये जा सकते है और उनका कण्ठ स्वर भी उसी वर्ग जाति के अनुरूप होना चाहिए, जिससे वे सम्बन्धित हो। यदि ऐसा नही होगा तो उस काव्य मे कृत्रिमता आ जायगी। काव्य मे तादात्म्य और साधारणीकरण सम्भव न हो सकेगा फलत काव्य रसानुभूति देने के स्थान पर नीरस हो जायगा।

अभिव्यक्ति के वर्णनात्मक साधन के प्रयोग के बारे मे आलोचक **वर्ड्सवर्थ** के भाषा विषयक सिद्धान्तो के विरुद्ध थे। उनका कथन था कि अभिव्यक्ति के वर्णनात्मक साधन के प्रयोग मे कवि की भाषा **Poetic Diction** सिद्धान्त के अनुरूप ही होनी चाहिए क्योंकि इसमे वर्णन कवि स्वय कर रहा है न कि किसी वर्ग विशेष के पात्रो के माध्यम से भावाभिव्यक्ति हो रही है किन्तु **वर्ड्सवर्थ** की विचारधारा अपने आलोचको के विरुद्ध थी। उसका मत था कि कवि भी मानवीय भावनाओं के अनुरूप ही भावधारा और विचारधारा रखता है, साधारण मनुष्यो के समान सोचता भी है तो फिर उसकी भाषा अपने ही समान सोचने वाले व्यक्तियो और अपने ही समान अनुभव करनेवाले व्यक्तियो से किस प्रकार भिन्न हो सकती है? **वर्ड्सवर्थ** का कहना है कि कवि का कर्तव्य भावो की अभिव्यक्ति करना है किन्तु यह अभिव्यक्ति इस प्रकार की होनी चाहिए कि सर्वसाधारण के हृदय मे उतर जाय। भाषा की कृत्रिमता वर्ण्य-विषय की स्वाभाविकता को मलिन कर देती है और काव्य ऐसा हो जाता है जैसे अधिक पानी

डालकर बनाया गया शर्बत जिसका स्वाद फीका हो लेकिन है तो शर्बत। अत काव्य मे जहाँ तक सम्भव हो सके सीधी सादी साधारण सुलभ और व्यवहार की भाषा का ही प्रयोग होना चाहिए। भावो की गहराई और भव्यता तक पहुँचने मे सीधे सादे स्वाभाविक शब्द ही समर्थ हो सकते है।

साहित्य मे तड़क भड़क और कृत्रिमता की प्रवृत्ति सदैव से ही विद्यमान रही है ऐसा नही है। **LyricalBallads** के अध्ययन से पता चलता है कि साहित्य मे इस प्रकार की प्रवृत्ति ने पैर शनै॰ शनै॰ जमाये थे। प्राचीन कवि जब कविता किया करते थे वह उसी साधारण भाषा का प्रयोग अपने काव्य मे किया करते थे जो अत्यन्त ही सहज और स्वाभाविक होती थी। प्राचीन काव्य का सृजन भी स्वाभाविक वेग से होता था। कविता स्वत॰प्रसूत होती थी। किसी भी प्रकृत वस्तु के सम्पर्क मे आने के बाद कवि के हृदय के उद्‌गार कविता के रूप मे फूट पड़ते थे। वह जो कुछ भी सोचता विचारता था काव्य मे भी वही मिलता था। यही कारण था कि लोग उसकी कविता से प्रभावित होते थे क्योंकि कविता कवि के हृदय से निकल पाठक के हृदय मे विराजती थी। दुर्भाग्य से इसी समय कुछ ऐसे अनधिकारी कवियो ने साहित्य-क्षेत्र मे प्रवेश किया जो प्राचीन कवि के समान पाठक के अन्त स्थल मे हलचल तो पैदा नही कर सकते थे किन्तु उस पर प्रभाव को उत्पन्न करने की लालसा अपने हृदय मे अवश्य रखते थे। फिर उन्होने यह देखना प्रारम्भ किया कि प्राचीन कवि के काव्य मे वह क्या है जो पाठक को प्रभावित करती है उनको लगा कि कुछ वाक्याशो शब्दो अलकारो और उन्ही क नमूने पर आधारित शब्दो के बारम्बार प्रयोग से ही काव्य मे रस उत्पन्न हा सकता है। वास्तविक प्रेरणा के अभाव मे शायद कृत्रिम विचारो से ही काम चल जाय यह सोचकर उन्होने जबरदस्ती कविता करनी प्रारम्भ कर दी। अत्यधिक सौन्दर्य पैदा होने के कारण वह कृत्रिमता को अपनाते गए अतत काव्य मे कृत्रिमता चरम सीमा तक पहुँच गयी। आगे चलकर काव्य मे प्रेरणाहीन यश के लालची कवियो का आगमन हुआ और उन्होने निर्जीव काव्यानुकरण को ही काव्य की शक्ति मान लिया। कुछ कवियो ने इस Classical Style की भव्यता और सौन्दर्य के लिए योजना बनानी चाही किन्तु उनका यह प्रयत्न मौलिक प्रेरणा के अभाव मे एक भद्‌दा अनुकरण मात्र ही बनकर रह गया। इस युग के एक साहित्यकार **डिक्टेटर जॉनसन** ने तो कविता को कृत्रिमता और परम्परा की जजीरो मे इस प्रकार जकड़ दिया कि कविता चाहकर भी फड़फडा न सके। इसी अत्याचार के विरुद्ध मानवात्मा ने विद्रोह का डका बजाया और इस विद्रोह का परिणाम हमे मिला **Lyrical Ballads** मे सगृहीत कविताओं के रूप मे।

कवि किसे कहते है और कवि पद का अधिकारी कौन हो सकता है? इन प्रश्नो का ब्यौरेवार तो उत्तर नही मिल सकता है **Lyrical Ballads** मे किन्तु **वर्ड्सवर्थ** के यत्र तत्र बिखरे विचार इनके उत्तर की पुष्टि करते हुए दिखायी पड़ते है।

वर्ड्सवर्थ के अनुसार कवि भी साधारण मनुष्य है और दैवीय शक्ति या दिव्य लोक का निवासी नही। जिस प्रकार साधारणत मनुष्य अपने हृदय की बात दूसरो पर प्रकट करते है और दूसरो के हृदय की बात स्पष्ट जानते है और इसी व्यापार मे व्यापकत्व की अनुभूति की इच्छा रखते है यही इच्छा रूपी लालसा ही कवि को काव्य रचना की ओर प्रवृत्त करती है किन्तु कवि मे एक विशेषता होती है कि उसका हृदय स्पन्दनशील होता है। इस विशेषता के कारण वह साधारण मनुष्यो से भिन्न है। वह एक विशेष द्रष्टा है, जिसमे किसी वस्तु के वास्तविक तत्त्व और रहस्य को देखने और तत्पश्चात्

परखने की स्वाभाविक शक्ति होती है। कि ी भी घटना या वस्तु का वह गम्भीर और व्यापक विवेचन कर सकता है।

कवि का मनुष्य हृदय के प्रवेगो और भावनाओं से इतना अधिक सम्बन्ध रहता है कि उसे तृण-तृण मे जीवन का चिरस्पन्दन दिखायी देता है मानो सारा ससार विचित्र प्राणो के वेग पर थिरक रहा हो। कवि के लिए तुच्छ से तुच्छ वस्तु मे भी जीवन प्रवाहित होता है और यह ससार सम्वेत कण्ठ से उस आध्यात्मिक आधार शक्ति का विजय गान करता है जिससे यह सारा ससार सचालित है। कवि प्रकृत वस्तु मे अति प्रकृत वस्तु स्थूल मे सूक्ष्म रहस्य का दर्शन करता है। इसी अति सूक्ष्म रहस्य से परदा उठाने और उसे सर्वज्ञात बनाने को उसकी लेखनी मचलती रहती है।

कवि मे अधिक ऐन्द्रियता के कारण उसके अन्दर साधारण मनुष्यो से अधिक ग्रहणशीलता होती है। उसका हृदय समस्त भावो, विभावो को जल्दी ग्रहण करता है। आश्चर्य, हर्ष, विषाद अनुराग विजय इत्यादि भाव इतने प्रबल वेग से उसके हृदय मे जागृत होते और विस्तार पाते है कि वह जब तक अपने हृदय के इन भावो को अपनी लेखनी के माध्यम से दूसरो के हृदय मे उतार नही देता उसके हृदय का भार भी हल्का नही होता और न ही उसके हृदय को चैन मिलता है।

यूँ तो साधारण मनुष्य भी अपने हृदय के भावो को अभिव्यक्त करते है किन्तु कवि मे यह शक्ति साधारण मनुष्यो की अपेक्षा अधिक मात्रा मे पायी जाती है। यही शक्ति कवि की प्रधान विशेषता है। यदि कवि अपने हृदय के भावो को अभिव्यक्त करने मे असमर्थ रहता है तो वह मूक कवि ही कहला सकता है। ऐसा कवि जो अपने अस्तित्व की पहचान न बता सके। विज्ञान और कविता दोनो के द्वारा ही सत्य की अभिव्यक्ति होती है किन्तु भिन्नता इस बात मे है कि विज्ञान की अभिव्यक्ति साधारणत्व की भाषा मे निर्लेप होती है और मनुष्य की भावनाओं से उसका कोई सम्बन्ध नही होता उसका सम्बन्ध केवल बुद्धि से होता है। वही दूसरी ओर काव्य की अभिव्यक्ति विशिष्ट भाषा मे होती है। यह हमारी इन्द्रियो और हृदय के अन्त स्थल को गुदगुदाती है और हृदय के प्रसुप्त भावो को जाग्रत करती है। कवि की उपर्युक्त समस्त विशेषताएँ परिश्रम साध्य नही होती अपितु यह सभी विशेषताए उसमे स्वाभाविक रूप मे विद्यमान होती है और विकसित होती रहती है।

वर्ड्सवर्थ कविता की परिभाषा देते हुए कहता है कि जब मनुष्य प्रशान्त क्षणो मे बैठा हो तो उसकी स्मृति के मनोवेग के फलस्वरूप कविता की उत्पत्ति होती है। कविता मनुष्य हृदय की प्रबल वेगवती भावनाओं की स्वाभाविक उमड़न का ही दूसरा नाम है। **वर्ड्सवर्थ** के शब्दो मे Poetry is the spontaneous overflow of powerful feelings it takes its origin from emotions recollected in tranquility अर्थात् प्रबल वेगवती भावनाओं की स्वाभाविक उमड़न ही कविता का रूप धारण करती है और प्रशान्त क्षणो मे स्मृत मनोवेगो से इसकी उत्पत्ति होती है। [1] जब कवि का किसी घटना या प्रकृत वस्तु से साक्षात्कार होता है तो कवि हृदय पर इसका सहज प्रभाव पड़ता है। जब कवि प्रशान्त क्षणो मे बैठा होता है तो उसकी स्मृति पटल पर अकित घटना की स्मृति जाग जाती है यह स्मृति भावनाओं और भावो की उमड़न का रूप धारण कर कविता का रूप धारण करती है।

1 डॉ० देवराज उपाध्याय *रोमांटिक साहित्य शास्त्र* पृ० 121

किसी भी वस्तु की प्रत्यक्षानुभूति रसानुभूति या काव्यानुभूति नही हो सकती। तात्कालिक अभिव्यक्ति मे इतने तत्त्वो का समावेश रहता है कि वह पाठक के हृदय को क्रियाशील नही कर सकती। अत काव्यानुभूति प्रत्यक्षानुभूति नही हो सकती है क्योंकि कवि का कर्तव्य भी प्रत्यक्षानुभूति कराना नही है यदि ऐसा होगा तो कवि अपने धर्म का पालन करने मे सक्षम नही है।

अत **वर्ड्सवर्थ** कहता है कि प्रत्यक्षानुभूति मे काव्य सृजित नही हो सकता। प्रत्यक्षानुभूति करते समय तो काव्य सृजन का अवसर ही नही मिलता। काव्य प्रणयन के मानसिक व्यापार के बाद ही काव्य का सृजन हो सकता है।

कवि का हृदय अत्यन्त स्पन्दनशील और ग्रहणशील होता है। अत जब वह किसी प्रकृत वस्तु या घटना के सम्पर्क मे आता है तो उसका हृदय प्रतिक्रिया करने लगता है। वह इतना अधिक प्रतिक्रियाशील हो उठता है कि उस घटना या प्रकृत वस्तु के प्रति अभिभूत हो जाता है। उसमे प्रतिक्रिया का वेग आता है और चला जाता है किन्तु सृजन की शक्ति उसमे नही रहती। प्रतिक्रिया का वेग कवि के मन-मस्तिष्क पर अपनी गहरी छाप छोड़ जाता है अर्थात् घटना का प्रबल आघात उसके मन पर होता है। इस आघात का परिणाम यह होता है कि कवि के मस्तिष्क मे घटना की थोड़ी सी भी स्मृति उस घटना व उससे सम्बन्धित समस्त मनोवेगो को कवि के मस्तिष्क मे लाकर उपस्थित कर देती है। अनुकूल परिस्थिति पाकर प्रशान्त क्षणो मे घटना या प्रकृत वस्तु से सम्बन्धित सारी बाते बिजली के समान अतश्चक्षु के समक्ष सारे राग विराग अनुराग इत्यादि भावनाओं को साथ लिए जागृत हो जाती है। कवि हृदय इन भावनाओं से इतना प्रेरित हो उठता है कि उनको अभिव्यक्ति प्रदान किये बिना उसे चैन नही पड़ती। कवि केवल मनोरजन के लिए नही लिखता वरन् वह तो अपनी लेखनी द्वारा एक दिव्य सदेश ससार के समक्ष प्रस्तुत करना चाहता है किन्तु यह सब प्रत्यक्षानुभूति के समय सम्भव नही लेकिन इसका गहन प्रभाव मस्तिष्क पर पड़ता है और प्रशान्त क्षणो मे जब मस्तिष्क के फुरसत के क्षण होते है घटना की तनिक सी स्मृति जगकर उग्र रूप धारण कर काव्य का रूप ले लेती है। प्रत्यक्षानुभूति के समय काव्य सृजन इस कारण नही हो पाता क्योंकि उस समय अनेक तत्त्वो के सम्मिश्रण के कारण भावनाएँ सुषुप्त अवस्था मे मन के किसी कोने मे दुबकी हुई रहती है उनकी जागृति किसी भी समय स्मृति या कल्पना के क्षणो मे प्रबल मनोवेगो के द्वारा होती है प्रत्यक्षानुभूति के समय नही।

स्मृति की सदैव पुनरावृत्ति होती है। इस सदर्भ मे **डॉ० देवराज उपाध्याय** का कथन है कि यह पुनरावृत्ति कभी भी शुष्क नही होती। आधारभूत प्रकृत वस्तु का उसमे अश उपस्थित रहता है। इस आधारभूत प्रकृत वस्तु का हमारे भावो और मनोवेगो से साक्षात् सम्बन्ध रहता है। समय के साथ-साथ प्रत्यक्षानुभूति के विरोधी अवरोधक तत्त्व दूर हो जाते है और प्रत्यक्षानुभूति का केवल वह अश स्मृति बनकर हमारे समक्ष उपस्थित होता है जो हमारे मनोवेगो और भावो को सजीवता प्रदान कर, प्रदान करता रहे। आगे इसी सदर्भ मे उदाहरण देते हुए **डॉ० देवराज उपाध्याय** कहते है कि स्मृति का यह अश केवल उतना ही होता है जितना की मिट्टी के अन्तराल मे एक नन्हा सा बीज। उस बीज मे एक पूरे वृक्ष को अस्तित्व प्रदान करने की प्रेरणा होती है किन्तु उसमे अपने को वृक्ष के रूप मे विकसित करने की क्षमता प्रदान करने मे वायु जल व आसपास के पोषक तत्त्वो का बड़ा हाथ रहता है। इन सबके सहयोग से एक वृक्ष रूप मे परिणत होने की स्वाभाविक प्रेरणा रखता है। वह अपने को वृक्ष

रोमाटिक कवि ससार के कण कण मे जीवन के स्पदन का साक्षात्कार करता है। यही विशेषता रोमाटिक काव्य को क्लासिकल काव्य से अलग कर देती है। क्लासिकल काव्य प्रत्येक आभा से मण्डित है किन्तु अगर वह वचित है तो जीवन के स्पन्दन से आन्तरिक स्पिरिट से। क्लासिकल काव्य मे बाहरी साज सज्जा सौन्दर्य सभी कुछ है किन्तु आन्तरिक जीवन की प्रेरणा का सर्वथा अभाव है। यही प्रेरणा स्थूल जगत के अन्तराल मे छिपी उस दिव्य शक्ति से हमारा साक्षात्कार कराती है जो क्लासिकल काव्य के लिए आज तक रहस्य बना हुआ है। पुनर्जागृति की प्रवृत्ति को लेकर कुछ कवियो द्वारा सस्ते रहस्यवाद का प्रदर्शन भी किया गया। सनसनीखेज आश्चर्यजनक और विस्मयवर्द्धक घटनाओं की योजना करके लोगो के कौतूहल को सस्ते ढग से तृप्त करने की कोशिश की गयी। अत काव्य मे भूत प्रेत और रोमाचक घटनाओं को स्थान मिलने लगा। लोगो के हृदय को चटपटे मसालो से क्षणिक उत्तेजित करना कवियो का एकमात्र ध्येय बन गया। ऐसे समय मे **Lyrical Ballads** नामक काव्य सग्रह का साधारण भाषा मे वर्णित होना निश्चित ही एक रोमाचक साहित्यिक घटना थी जो क्लासिकल साहित्य से अतिकृत्रिमता को दूर करने के लिए अस्तित्व को प्राप्त हुई। अत **Lyrical Ballads** मे यह अपेक्षा की गयी कि साधारण अभिव्यक्ति द्वारा लोगो की मानसिक चटखारे लेने की प्रवृत्ति दूर हागी मानसिक शैथिल्य दूर होगा तथा किसी वस्तु के अन्तराल तक गहराई मे जाने की प्रवृत्ति बढ़ेगी।

वर्ड्सवर्थ के विरोधी आलोचको का मानना है कि छन्द की उपस्थिति के कारण काव्य की भाषा गद्य की भाषा से अनिवार्य रूप से भिन्न हो जाती है उसका वह रूप नही रह जाता जो स्वाभाविक साधारण गद्य का होता है किन्तु वर्ड्सवर्थ का मानना है कि काव्य मे छन्द की उपस्थिति एक विशेष उद्देश्य के कारण अनिवार्य है। छन्द काव्य रचना को कवित्वपूर्ण बनाने मे सहायता करते है किन्तु छन्द अनुपस्थिति मे रचना की काव्योपयोगिता नष्ट हो जाती है।

मानव हृदय के विचारो की सर्वोत्कृष्ट और सशक्त अभिव्यक्ति ही कवि का उद्देश्य है लेकिन भावो की अभिव्यक्ति का साधन केवल शब्द ही नही होते है सगीत द्वारा भी अपने भावो को प्रभावोत्पादक बना सकते है बशर्ते सगीतात्मकता काव्य के रूप पर आच्छादित न हो जाय। यदि काव्य को सगीत का सहारा मिल जाता तो काव्य के प्रमोद मे अपार वृद्धि हो सकती है। काव्य की रक्षा और उसके प्रभाव मे वृद्धि के लिए व्यवस्था इस प्रकार की होनी चाहिए कि काव्य के स्वाभाविक सगीतात्मक रूप को उभारकर सगीतमय बनाया जाय। काव्य मे यह कार्य छन्द और तुक के द्वारा ही सम्पन्न होता है। अत छन्द काव्य का स्वाभाविक अग है।

छन्दो के प्रयोग के कारण दुःखात्मक अनुभूतियाँ भी आनन्द प्रदान करनेवाली बन जाती है। छन्दो की प्रवृत्ति चित्त प्रसादिनी होती है और इनमे सगीतात्मकता भी होती है। अत दुख के भाव कवि की क्रियात्मक प्रतिभा और छन्दो की सगीतात्मकता के कारण आनन्द प्रदान करने वाले बन जाते है किन्तु यह सभी स्वत प्रसूत होती है इनके लिए कवि को प्रयत्न नही करना पड़ता है।

वर्ड्सवर्थ के विरोधी उसके काव्य की आलोचना करते हुए कहते है कि **वर्ड्सवर्थ** के काव्यीय विचार तुच्छ है। कही कही तो इतने तुच्छ और छिछले हो गये है कि उनको पढ़कर हँसी आती है किन्तु **वर्ड्सवर्थ** दोषारोपण का स्पष्टीकरण करते हुए कहता है कि काव्यवस्तु की साधारणता और साधारण अभिव्यक्ति के कारण ही आलोचको को यह भ्रम हो गया होगा, वास्तव मे ऐसा है नही।

वर्ड्सवर्थ का साधारण कथा भाग स्वाभाविक घटनाओं के माध्यम से एक दिव्य सदेश की अभिव्यक्ति करता है। **वर्ड्सवर्थ** के काव्य का उद्देश्य ही साधारण घटनाओं के माध्यम से जीवन की आन्तरिक गति अथवा जीवन के आन्तरिक स्पन्दन का दर्शनमात्र है।

काव्य के दो प्रकार के आलोचक होते है। पहला पक्ष काव्य के सौन्दर्य तथा उक्ति को महत्त्व देता है। क्लासिकल आलोचको का एक बड़ा अश इस मत का पक्षपाती था किन्तु दूसरा पक्ष अभिव्यक्ति या उक्ति के पीछे छिपे सत्य को महत्त्व देता है। इस पक्ष के आलोचको का मानना है कि भावो की गहराई व्यापकता और उच्चता मे ही काव्य का सौन्दर्य निहित है। यदि काव्य गाम्भीर्य व्यापकता और उच्चता लिये नही होगा तो शब्द केवल झॉकी बनकर रह जायेगे। वह पाठक को साक्षात् आनन्द प्रदान कर गम्भीर तृप्ति नही दे सकते। प्रकृति सृजनात्मक प्रेरणा के वशीभूत वस्तुओं को निम्नतर अवस्था से उच्चतर की ओर विकसित करने मे सदैव प्रयत्नशील रहती है। विकास ही प्रकृति का मूल मत्र है। सृजनात्मक अदम्य प्रेरणा ही कर्तव्य का मूल मत्र है। अत कविता केवल अभिव्यक्ति ही नही एक दिव्य सदेश देती है, जीवन को उच्चतर अवस्था मे ले जाने का उपक्रम है। अत **वर्ड्सवर्थ** को हम आलोचको की इसी श्रेणी मे रखते है क्योकि **वर्ड्सवर्थ** यह मानता था कि वर्णित कथा अथवा वस्तु विषय के द्वारा कविता का महत्त्व नही ऑका जा सकता। कविता का महत्व उसके द्वारा प्रकृति की आन्तरिक प्रवृत्ति की अभिव्यक्ति मे है। अभिव्यक्ति के अन्तराल मे छिपे सत्य मे है।

डॉ० देवराज उपाध्याय और सैमुअल टेलर कॉलरिज

कॉलरिज रोमाटिक युग का प्रवर्तक था। वह दार्शनिक कवि आलोचक था। **कॉलरिज** ने बड़ी ही उच्चकोटि की कविताएँ लिखी है और साथ ही साथ अत्यन्त दार्शनिक व उत्कृष्ट आलोचनाए भी की है। **कॉलरिज** की पुस्तक Biographia Literaria आज भी पाश्चात्य आलोचना की सर्वश्रेष्ठ पुस्तक है। इसमे **कॉलरिज** ने कविता सम्बन्धी आलोचनात्मक निबन्ध तथा **शेक्सपीयर** व अन्य कवियो के बारे मे उत्कृष्ट दार्शनिक आलोचनात्मक लेख लिखा है। **Biographia Literaria** मे **कॉलरिज** ने **शेक्सपियर** सम्बन्धी आलोचनात्मक लेखो मे अपने उत्कृष्ट दार्शनिक सिद्धान्तो को मौलिक व सरलतम रूप देने की कोशिश की है।

कॉलरिज ने आलोचना के क्षेत्र मे महारत हासिल की थी। वह आलोचना सम्बन्धी सिद्धान्तो की गहराई को जानता था बल्कि अगर यह कहा जाय कि उसने आलोचना की नब्ज़ पहचान ली थी तो गलत नही। आलोचना के सम्बन्ध मे स्वय **कॉलिरज** लिखता है

The ultimate end of criticism is much more to establish the principle of writing than to furnish rules how to pass judgement on what has been written by others

अर्थात् आलोचना का परम ध्येय यह है कि वह लेखन के परम सिद्धान्तो का प्रतिपादन करे। इतना ही नही दूसरो के लेख पर निर्णय देने के नियमो का उल्लेख करे।[1]

कॉलरिज से पूर्व किसी भी आलोचक ने आलोचना के भिन्न भिन्न अगो की व्याख्या के अतिरिक्त सृजन कार्य की गहराई व सृजन क्रिया के मूल स्रोत मानसिक अवस्था पर इतनी गहराई से तर्कपूर्ण व

1 डॉ० देवराज उपाध्याय *रोमाटिक साहित्य शास्त्र* पृ० 135

बुद्धिपरक विचार नही किया था। किसी विद्वान् ने तो **कॉलरिज** की श्रेष्ठता इस प्रकार व्यक्त की है

Aristotle is the mathematician of criticism while Coleridge is the high priest.

अर्थात् **अरस्तू** आलोचना का गणितज्ञ है पर **कॉलरिज** उसका उच्च पुजारी।[1] **वर्ड्सवर्थ** के काव्य सिद्धान्तो से **कॉलरिज** का मतभेद था। **कॉलरिज शेक्सपियर** की कविताओं से ज्यादा प्रभावित था। कविता क्या है? इस प्रश्न के उत्तर के लिए भी उसने प्रसगवश **शेक्सपियर** की कविताओं का उल्लेख किया है और **शेक्सपियर** की कविताओं को न्याय दिलवाया है।

कॉलरिज के अनुसार गद्य रचना का उपकरण अर्थात् पुनरावृत्ति लय, एकतानता अथवा तुक इन्ही सबसे कविता की भी रचना होती है। हॉ यह अवश्य हो सकता है कि गद्य रचना के उद्देश्य से काव्य रचना का उद्देश्य भिन्न हो और इसी क्रम मे इन उपकरणो की योजना भी की गई हो।

कुछ रचनाएँ ऐसी होती है जिनका उद्देश्य सत्य की अभिव्यक्ति होता है और उसम आनन्द स्वयमव उत्पन्न हो जाता है किन्तु इसके विपरीत कुछ रचनाओं का उद्देश्य आनन्दोद्रेक करना होता है। यह बात दूसरी है कि उससे किसी तथ्य या सत्य की अभिव्यक्ति स्वमेव हो जाये किन्तु काव्य रचना का उद्देश्य साक्षात् आनन्द की प्राप्ति ही है। वास्तव मे मानव मन प्रकृत वस्तु के ज्यो के त्यो रूप से आनन्दित नही होता वरन् वह उसमे अपनी कल्पना का समावेश कर उसे तोड़-मरोड़ कर दूसरे ही रूप मे जा उसकी कल्पना मे हो देखकर आनन्दित होता है।

काव्य की परिभाषा देते हुए **कॉलरिज** कहता है कि काव्य एक विशिष्ट रचना है जो विज्ञान से सर्वथा विपरीत है भिन्न है क्योंकि काव्य से आनन्द की प्राप्ति होती है और यही काव्य का उद्देश्य भी है कि वह साक्षात् आनन्दोद्रेक करे। सत्य की उपलब्धि साक्षात् आनन्द की श्रेणी मे नही आती। साक्षात् आनन्द हम उसे कह सकते है जिस आनन्द का रसपान करने से हमारी क्षुधा शान्त हो और हमे सतुष्टि मिले वही साक्षात् आनन्द है लेकिन **कॉलरिज** यह मानता है कि काव्य अपने इस उद्देश्य अर्थात् आनन्दोद्रेक उत्पन्न करना की पूर्ति सुन्दरता के माध्यम से ही करता है अर्थात् कोई भी वस्तु इसलिए सुन्दर नही कही जा सकती कि आनन्द प्रदान करती है वरन् वह आनन्दोद्रेक करती है अत सुन्दर है। **कॉलरिज** के अनुसार सुन्दरता की अपनी जाति ही अलग होती है। किसी भी प्रकृत वस्तु के कम या अधिक सुन्दर होने का प्रश्न ही नही उठता। सुन्दरता तो केवल सुन्दर है। सुन्दरता का दर्शन हमे वही होता है जहाँ बहुत्व अपने स्वरूप का अस्तित्व कायम रखते हुए एक बड़े एकत्व मे लीन हो जाता है।

कॉलरिज उन रचनाओं को काव्य के पद पर प्रतिष्ठित नही करता जिनकी कुछ पक्तियाँ अथवा उक्तियॉ रचना के अन्य अशो से समन्वय नही रखती। वह अपना स्वतत्र अस्तित्व रखती हैं और एक दूसरे से अलग दिखायी पड़ती है और सब पाठको का ध्यान अपनी ओर आकृष्ट करती है। असतुलित रचना को काव्य नही कहा जा सकता। काव्य मे सभी अशो की रचना इस प्रकार होनी चाहिए कि सभी काव्याशो मे पर्याप्त सन्तुलन और समन्वय हो।

कवि की प्रतिभा से ही काव्य की विशिष्टता उजागर होती है। जितनी अधिक प्रतिभा कवि के अन्दर होगी, काव्य रचना उतनी ही विशिष्टता लिये होगी। यदि हम कवि की प्रतिभा की परख नही कर सके तो हम उसके काव्य के साथ अन्याय करते है न्याय नही कर सकते है। अत काव्य

वर्ड्सवर्थ का साधारण कथा भाग स्वाभाविक घटनाओं के माध्यम से एक दिव्य सदेश की अभिव्यक्ति करता है। **वर्ड्सवर्थ** के काव्य का उद्देश्य ही साधारण घटनाओं के माध्यम से जीवन की आन्तरिक गति अथवा जीवन के आन्तरिक स्पन्दन का दर्शनमात्र है।

काव्य के दो प्रकार के आलोचक होते है। पहला पक्ष काव्य के सौन्दर्य तथा उक्ति को महत्त्व देता है। क्लासिकल आलोचको का एक बड़ा अश इस मत का पक्षपाती था किन्तु दूसरा पक्ष अभिव्यक्ति या उक्ति के पीछे छिपे सत्य को महत्त्व देता है। इस पक्ष के आलोचको का मानना है कि भावो की गहराई व्यापकता और उच्चता मे ही काव्य का सौन्दर्य निहित है। यदि काव्य गाम्भीर्य व्यापकता और उच्चता लिये नही होगा तो शब्द केवल झॉकी बनकर रह जायेगे। वह पाठक को साक्षात् आनन्द प्रदान कर गम्भीर तृप्ति नही दे सकते। प्रकृति सृजनात्मक प्रेरणा के वशीभूत वस्तुओं को निम्नतर अवस्था से उच्चतर की ओर विकसित करने मे सदैव प्रयत्नशील रहती है। विकास ही प्रकृति का मूल मत्र है। सृजनात्मक अदम्य प्रेरणा ही कर्तव्य का मूल मत्र है। अत कविता केवल अभिव्यक्ति ही नही एक दिव्य सदेश देती है जीवन को उच्चतर अवस्था मे ले जाने का उपक्रम है। अत **वर्ड्सवर्थ** को हम आलोचको की इसी श्रेणी मे रखते है क्योकि **वर्ड्सवर्थ** यह मानता था कि वर्णित कथा अथवा वस्तु विषय के द्वारा कविता का महत्त्व नही ऑका जा सकता। कविता का महत्व उसके द्वारा प्रकृति की आन्तरिक प्रवृत्ति की अभिव्यक्ति मे है। अभिव्यक्ति के अन्तराल मे छिपे सत्य मे है।

डॉ० देवराज उपाध्याय और सैमुअल टेलर कॉलरिज

कॉलरिज रोमाटिक युग का प्रवर्तक था। वह दार्शनिक कवि आलोचक था। **कॉलरिज** ने बड़ी ही उच्चकोटि की कविताएँ लिखी है और साथ ही साथ अत्यन्त दार्शनिक व उत्कृष्ट आलोचनाए भी की है। **कॉलरिज** की पुस्तक **Biographia Literaria** आज भी पाश्चात्य आलोचना की सर्वश्रेष्ठ पुस्तक है। इसमे **कॉलरिज** ने कविता सम्बन्धी आलोचनात्मक निबन्ध तथा **शेक्सपीयर** व अन्य कवियो के बारे मे उत्कृष्ट दार्शनिक आलोचनात्मक लेख लिखा है। **Biographia Literaria** मे **कॉलरिज** ने **शेक्सपियर** सम्बन्धी आलोचनात्मक लेखो मे अपने उत्कृष्ट दार्शनिक सिद्धान्तो को मौलिक व सरलतम रूप देने की कोशिश की है।

कॉलरिज ने आलोचना के क्षेत्र मे महारत हासिल की थी। वह आलोचना सम्बन्धी सिद्धान्तो की गहराई को जानता था बल्कि अगर यह कहा जाय कि उसने आलोचना की नब्ज़ पहचान ली थी तो गलत नही। आलोचना के सम्बन्ध मे स्वय **कॉलिरज** लिखता है

The ultimate end of criticism is much more to establish the principle of writing than to furnish rules how to pass judgement on what has been written by others

अर्थात् आलोचना का परम ध्येय यह है कि वह लेखन के परम सिद्धान्तो का प्रतिपादन करे। इतना ही नही दूसरो के लेख पर निर्णय देने के नियमो का उल्लेख करे। [1]

कॉलरिज से पूर्व किसी भी आलोचक ने आलोचना के भिन्न भिन्न अगो की व्याख्या के अतिरिक्त सृजन कार्य की गहराई व सृजन क्रिया के मूल स्रोत मानसिक अवस्था पर इतनी गहराई से तर्कपूर्ण व

1 डॉ० देवराज उपाध्याय *रोमाटिक साहित्य शास्त्र* पृ० 135

बुद्धिपरक विचार नही किया था। किसी विद्वान् ने तो **कॉलरिज** की श्रेष्ठता इस प्रकार व्यक्त की है

Aristotle is the mathematician of criticism while Coleridge is the high priest.

अर्थात् **अरस्तू** आलोचना का गणितज्ञ है पर **कॉलरिज** उसका उच्च पुजारी।[1] **वर्ड्सवर्थ** के काव्य सिद्धान्तो से **कॉलरिज** का मतभेद था। **कॉलरिज शेक्सपियर** की कविताओं से ज्यादा प्रभावित था। कविता क्या है? इस प्रश्न के उत्तर के लिए भी उसने प्रसगवश **शेक्सपियर** की कविताओं का उल्लेख किया है और **शेक्सपियर** की कविताओं को न्याय दिलवाया है।

कॉलरिज के अनुसार गद्य रचना का उपकरण अर्थात् पुनरावृत्ति लय एकतानता अथवा तुक इन्ही सबसे कविता की भी रचना होती है। हॉ यह अवश्य हो सकता है कि गद्य रचना के उद्देश्य से काव्य रचना का उद्देश्य भिन्न हो और इसी क्रम मे इन उपकरणो की योजना भी की गई हो।

कुछ रचनाएँ ऐसी होती है जिनका उद्देश्य सत्य की अभिव्यक्ति होता है और उसम आनन्द स्वयमेव उत्पन्न हो जाता है किन्तु इसके विपरीत कुछ रचनाओं का उद्देश्य आनन्दाद्रेक करना होता है। यह बात दूसरी है कि उससे किसी तथ्य या सत्य की अभिव्यक्ति स्वमेव हो जाये किन्तु काव्य रचना का उद्देश्य साक्षात् आनन्द की प्राप्ति ही है। वास्तव मे मानव मन प्रकृत वस्तु के ज्यो के त्यो रूप से आनन्दित नही होता वरन् वह उसमे अपनी कल्पना का समावेश कर उसे तोड़-मरोड़ कर दूसरे ही रूप मे जा उसकी कल्पना मे हो देखकर आनन्दित होता है।

काव्य की परिभाषा देते हुए **कॉलरिज** कहता है कि काव्य एक विशिष्ट रचना है जो विज्ञान से सर्वथा विपरीत है भिन्न है क्योंकि काव्य से आनन्द की प्राप्ति होती है और यही काव्य का उद्देश्य भी है कि वह साक्षात् आनन्दोद्रेक करे। सत्य की उपलब्धि साक्षात् आनन्द की श्रेणी मे नही आती। साक्षात् आनन्द हम उसे कह सकते है जिस आनन्द का रसपान करने से हमारी क्षुधा शान्त हो और हमे सतुष्टि मिले वही साक्षात् आनन्द है लेकिन **कॉलरिज** यह मानता है कि काव्य अपने इस उद्देश्य अर्थात् आनन्दोद्रेक उत्पन्न करना की पूर्ति सुन्दरता के माध्यम से ही करता है अर्थात् कोई भी वस्तु इसलिए सुन्दर नही कही जा सकती कि आनन्द प्रदान करती है वरन् वह आनन्दोद्रेक करती है अत सुन्दर है। **कॉलरिज** के अनुसार सुन्दरता की अपनी जाति ही अलग होती है। किसी भी प्रकृत वस्तु के कम या अधिक सुन्दर होने का प्रश्न ही नही उठता। सुन्दरता तो केवल सुन्दर है। सुन्दरता का दर्शन हमे वही होता है जहॉ बहुत्व अपने स्वरूप का अस्तित्व कायम रखते हुए एक बड़े एकत्व मे लीन हो जाता है।

कॉलरिज उन रचनाओं को काव्य के पद पर प्रतिष्ठित नही करता जिनकी कुछ पक्तियॉ अथवा उक्तियॉ रचना के अन्य अशो से समन्वय नही रखती। वह अपना स्वतत्र अस्तित्व रखती है और एक दूसरे से अलग दिखायी पड़ती है और सब पाठको का ध्यान अपनी ओर आकृष्ट करती है। असतुलित रचना को काव्य नही कहा जा सकता। काव्य मे सभी अशो की रचना इस प्रकार होनी चाहिए कि सभी काव्याशो मे पर्याप्त सन्तुलन और समन्वय हो।

कवि की प्रतिभा से ही काव्य की विशिष्टता उजागर होती है। जितनी अधिक प्रतिभा कवि के अन्दर होगी काव्य रचना उतनी ही विशिष्टता लिये होगी। यदि हम कवि की प्रतिभा की परख नही कर सके तो हम उसके काव्य के साथ अन्याय करते है न्याय नही कर सकते है। अत काव्य

के प्रति न्याय-अन्याय की विभाजन रेखा रेखाकित करना भी कवि की प्रतिभा का कार्य है क्योंकि मनुष्य अन्तःकरण के विविध व्यापार उनका स्वरूप और कार्य तथा मानव मस्तिष्क की सम्पूर्ण तहो तक पहुँचना अभी तक किसी भी मनोवैज्ञानिक के वश का कार्य नही हो पाया है किन्तु मानव आत्मा की सम्पूर्ण क्रियाओं को एक आदर्श कवि ही प्रबुद्ध रूप दे सकता है। इस प्रबुद्धता के कारण ही यह क्रियाएँ एकसमान और सापेक्ष समन्वित रूप मे एक लक्ष्य प्राप्ति के मार्ग की ओर निरन्तर अग्रसर रहती है। यहॉ विरोध की भावना समाप्त हो समन्वय के विचार जागृत करती है। कवि की इस प्रतिभा को **कालरिज** ने Imagination का नाम दिया है। Imagination के कार्यों का वर्णन करते हुए **कॉलरिज** कहता है कि इसका काम समन्वय की स्थापना करना है समन्वय एकरूपता का विविधता के साथ साधारण का विशेष के साथ विचार का मूर्ति के साथ। यद्यपि यह कृत्रिमता और अकृत्रिमता को एक तान कर देती है तो भी स्वाभाविकता की प्रमुखता बनाये रखती है कला की नही। [1]

अत प्रतिभा का कार्य है कि वह विविध प्रकृत वस्तुओं मे से साधारणत्व और शाश्वत को मानव आत्मा के सामने सविकल्प रूप मे इस प्रकार सॅजोती है कि आत्मा उसे सजातीय वस्तु समझ कर स्वीकार कर लेती है। यदि साधारण मनुष्य झूठ बोले तो हम उसे फौरन पकड़ लेते है किन्तु कवि की यह सहज प्रतिभा झूठ को हमारी ऑखो के सामने इस प्रकार खड़ा कर देती है कि उसके झूठ को पकड़ना हमारे वश की बात नही वरन् उल्टे हम उस झूठ को सजातीय सत्य समझ ऑखे मूॅदकर ग्रहण करते है। कवि की प्रतिभा से युक्त झूठ की तह मे हमे एक सर्वव्यापक सत्य का साक्षात्कार होता है। **कॉलरिज** स्वस्थ विचारो को कवि प्रतिभा का शरीर मानता है,

Good SENSE is the body of poetic genius FANCY its DRAPERY MOTION its LIFE and IMAGINATION the soul that is every where and in each and forms all into one graceful and intelligent whole

अर्थात् स्वस्थ विचार कवि प्रतिभा का शरीर है, कपोल-कल्पना उस पर की गई बेलबूटे की नक्काशी है वेगमयता उसका जीवन है कल्पना उसकी आत्मा है जो सर्वत्र और सबमे निवास करती है और सबको एक सुन्दर और बोधगम्य रूप देती है। [2]

कॉलरिज ने **शेक्सपियर** की रचनाओं का मूल्याकन करते समय ही काव्य के सिद्धान्तो को भी प्रतिपादित किया है और उन्ही के आधार पर **शेक्सपीयर** की रचनाओं को मूल्याकित किया है। रोमाटिक काव्य के मूल सिद्धान्तो मे स्वत प्रसूत अदम्य प्रेरणा को **कॉलरिज** काव्य की जननी मानता है। यह स्वत प्रसूत अदम्य प्रेरणा किसी बाहरी प्रभाव के वशीभूत नही होती वरन् यह तो कवि के मन की आवाज़ उसके अन्त करण की धड़कनो की आवाज है। यह हृदय मे स्वय जन्म लेने वाले भावो से पोषित होती है इसमे वैयक्तिक अनुभूतियो की प्रधानता रहती है। इस परिकल्पना को अनुभव करने के क्षणो मे कवि की जो मानसिक दशा अथवा मानसिक स्थिति होती है वही कवि के जीवन का सार है तत्त्व है।

काव्य को व्यक्तिगत बातो और परिस्थितियो से पृथक् रखना चाहिए इस कार्य मे प्रतिभा ही

1 डॉ० देवराज उपाध्याय *रोमाटिक साहित्य शास्त्र* पृ० 135
2 वही पृ० 140

अपना योगदान देती है। **कॉलरिज** के शब्दो मे

A second promise of genius is the choice of subjects very remote from the private interest and circumstances of the writer himself

अर्थात् प्रतिभा का दूसरा लक्षण यह है कि वह (काव्य के लिए) लेखक की व्यक्तिगत बातो और परिस्थितियो से पृथक् वस्तु का निर्वाचन करती है। [1]

व्यक्तिगत स्वार्थमूलक अनुभूतियॉ विशेषकर लालच प्रतिशोध कृतज्ञता आदि को साहित्य से पृथक् ही रखना चाहिए किन्तु इनका सार्वजनीन रूप साहित्य मे मान्य हो सकता है क्योकि इससे भावो का साधारणीकरण होता है और यह साहित्य की अत्यन्त आवश्यक आवश्यकता है।

कॉलरिज कहता है कि काव्य मे वर्ण्य वस्तु के निर्वाचन और उसके प्रतिपादन मे तटस्थता होनी चाहिए। व्यक्तिगत अनुभूतियॉ सार्वजनीन हो निर्वैयक्तिक हो जायॅ और वर्ण्य वस्तु के प्रतिपादन मे या व्यक्तिगत अनुभूतियो के प्रतिपादन मे वैयक्तिकता की छाप भी नही होनी चाहिए। जिस प्रकार ईश्वर प्रकृति व ससार की ओट मे छिपा रहता है उसी प्रकार कवि को भी रचना की ओट मे छिपे रहना चाहिए। कोरा आत्मनिवेदन भावो का निर्वैयक्तिकरण नही करता है जबकि उसमे निर्वैयक्तिकरण और भावो की सार्वजनीनता आनी चाहिए।

साहित्य मे यथार्थ का क्या महत्त्व है और साहित्य मे यथार्थ का क्या स्थान है? इन प्रश्नो पर भी **कॉलरिज** ने विचार किया है। हम यथार्थवाद और रोमासवाद को एकदम भिन्न वस्तु समझते है जबकि सच्चाई यह नही है और ना ही रोमाटिक काव्यधारा के कवि ऐसा मानते है। रोमाटिक साहित्य विचारधारा ही कृत्रिमता असत्यता व झूठ के विद्रोह-स्वरूप आई तो भला यहॉ यथार्थ से विद्रोह कैसा? रोमाटिक कवि तो यथार्थ को रोमासवाद का सार तत्त्व मानते है क्योंकि वह सभी स्वाभाविक और यथार्थता के पक्षपाती थे।

कॉलरिज भी काव्य मे यथार्थ के महत्त्व को भली प्रकार समझता था। कला प्रकृति का अनुकरण करती है किन्तु वह साधारण अनुकरण और काव्योचित अनुकरण को भिन्न समझता था। काव्य मे यथार्थ चित्रण सर्वथा उचित है। ऐसी घटना जो कभी घटी ही नही उसकी कल्पना तो हम आसानी से कर ही नही सकते। अत विषय का यथार्थ से सम्बन्ध होना ही चाहिए। यथार्थ और कल्पना का मिश्रित रूप ही काव्य का विषय होना चाहिए। काव्य योजना करते समय कलाकार चाहे जहॉ से और जिस रूप मे अपनी कृति आरम्भ करे उसे इस बात का ध्यान अवश्य रखना चाहिए कि भिन्नता मे अभिन्नता और अभिन्नता मे भिन्नता अवश्य ही वर्तमान होनी चाहिए असमानता मे समानता और समानता मे असमानता मिश्रित होनी चाहिए।

विद्वानो ने कला को प्रकृति का दर्पण माना है साथ ही कला को प्रकृति का अनुकरण भी कहते है अर्थात् प्रकृति की अनुकृति ही कला है। **कॉलरिज** ने प्रकृति और अनुकृति दोनो ही शब्दो को अपने विचार का विषय बनाया है। **कॉलरिज** का कथन था कि प्रकृति की समस्त रेखाओं की अनुकृति के स्थान पर केवल सौन्दर्य की अनुकृति की जाये। विविधता की एकता मे और बहुत्व मे

1 डॉ० देवराज उपाध्याय *रोमाटिक साहित्य शास्त्र* पृ० 141

एकतत्त्व मे ही मूलरूप से सौन्दर्य विराजमान है। आन्तरिक प्राणतत्त्व और सुडौलता के समन्वय मे सौन्दर्य के दर्शन होते है। सौन्दर्य की भा । स्वार्थ से परे होती है और कभी कभी स्वार्थ विरोधी पदार्थों मे भी आनन्द का सृजन करती है। सौन्दर्य मस्तिष्क के लिए उतना ही आवश्यक है जितना नेत्रो के लिए ज्योति। जब प्रतिभा और कल्पना मिलकर रचनात्मक और स्वाभाविक क्रियाएँ उत्पन्न करती है और जब उसमे चाक्षुष अथवा कर्ण प्रतीति भी अपने को समर्पित कर सामजस्य पैदा करती है तभी सुन्दरता का जन्म होता है। यही सुन्दरता मानस को तुष्टि प्रदान करती है।

रोमाटिक युग का प्रवर्तक होने के कारण **कॉलरिज** वैयक्तिक अनुभूतियो और भावो को अत्यधिक महत्व देता था किन्तु इनके नियत्रण हेतु वह बुद्धितत्त्व की आवश्यकता से भी इन्कार नही करता। वह कहता है कि बुद्धितत्त्व ही काव्य के ऊपर नियत्रण रख सकता है। विचारो की गम्भीरता और शक्तिमत्ता का काव्य मे एक विशिष्ट स्थान है और यह बुद्धितत्त्व से ही सम्भव है अन्यथा कवि प्रतिभा के हाथ की कठपुतली मात्र ही रह जायेगा किन्तु बुद्धितत्त्व के प्रति अत्यधिक आत्म निवेदन भी नही होना चाहिए। नही तो कही ऐसा न हो कि बुद्धि विचार करती रह जाये और एक दिव्य उच्च कोटि के सृजन का अवसर ही हाथ से निकल जाय।

वर्डसवर्थ के काव्य सम्बन्धी सिद्धान्तो का विवेचन करते समय **कॉलरिज** ने ग्राम्य जीवन की काव्यात्मक उपयोगिता पर भी प्रकाश डाला है। वह **वर्डसवर्थ** से इस विषय पर गहरा मतभेद रखता था। **वर्डसवर्थ** ने निम्न ग्रामीण जीवन के प्रशसा गीत गाये है और साथ ही साथ वह यह भी मानता है कि इसी ग्रामीण अवस्था मे हृदय की भावनाओं को फलने फूलने का अवसर अधिक मिलता है **कॉलरिज** के अनुसार चिन्तन का विषय है। यदि **वर्डसवर्थ** की कविताओं पर पुनर्विचार किया जाये तो उसके नाटकीय काव्य The Brothers Miceael Ruth The Mad Mother इत्यादि निम्न ग्रामीण जीवन से नही लिए गये है। उनकी भाषा, व्यवहार विचार और रहन सहन कुछ विशिष्ट परिस्थितियो के कारण इस प्रकार की है। यदि वह नगरनिवासी होते तो भी उनकी भाषा व्यवहार विचार रहन सहन इसी प्रकार का होता। **कॉलरिज** इसके दो कारण बताते है। प्रथम तो यह कि जरा सी भी आर्थिक स्वतत्रता मनुष्य को दासता और शोषण से मुक्ति तो दिला सकती है किन्तु ऐश्वर्य और विकास का अवसर नही देती। दूसरा कारण है परिश्रम और धार्मिक शिक्षा। अत यदि कोई भी मनुष्य परिश्रमी धार्मिक, मितव्ययी हो और उस पर उसे थोड़ी सी स्वतत्रता भी प्राप्त हो तो फिर ऐसे मनुष्य की भाषा और विचारो पर ग्राम या शहर की भाषा या विचारो का कोई प्रभाव नही पड़ता।

कॉलरिज के अनुसार स्वस्थता सूक्ष्मता मनुष्य के विचारो मे और हृदय मे पवित्र भावनाएँ प्रकृति के गम्भीर रहस्यो को स्पष्टता से हृदयगम करने की प्रवृत्ति आदि प्रकृति के साहचर्य या प्रकृति के सम्पर्क से अवश्य ही प्रमुख होती है किन्तु उसके लिए थोड़ी शिक्षा और सवेदनशीलता दोनो ही आवश्यक है।

वर्डसवर्थ का यह मानना है कि एक ग्रामीण जिन प्रकृत वस्तुओं के साहचर्य या सम्पर्क मे जीवन व्यतीत करता है उन्ही के द्वारा भाषा की श्रेष्ठता का निर्माण होता है किन्तु **कॉलरिज** का इस विषय पर विचारो मे भेद है। उसके अनुसार एक ग्रामीण किसान अशिक्षित होता है और अशिक्षा के कारण उसका भाषा-कोश अत्यन्त सकुचित होता है। शब्दो क अभाव मे प्रकृति चिन्तन के मानसिक व्यापारो की ही अभिव्यक्ति नही हो पाती है। वे केवल कुछ ही शब्दो और भावो को मूर्तिमान रूप दे सकते

है शेष की अभिव्यक्ति के लिए अस्पष्ट शब्दावली का ही प्रयोग होता है। मनुष्य के चेतन मस्तिष्क के परिणामस्वरूप ही श्रेष्ठ भाषा का निर्माण हुआ है। भाषा स्वाभाविक या प्राकृतिक रूप से जन्म नही लेती। मनुष्य बहुत ही सोच समझकर चेतन मस्तिष्क के द्वारा चिन्तन कर अपनी काल्पनिक वस्तुओं क्रियाओं और व्यापारो को एक नाम देता है इसी क्रम मे भाषा के शब्द भण्डार मे वृद्धि होती जाती है। काव्य साहित्य दर्शन और वैज्ञानिक क्षेत्रो मे प्रयुक्त अभिव्यजनात्मक शब्द मानव मस्तिष्क के चेतन व्यापार का ही परिणाम है। ध्वनि तो पशु पक्षी भी करते है, किन्तु उस ध्वनि को शब्द नही कहा जा सकता क्योकि ध्वनियो का निर्माण स्वभावजन्य नैसर्गिक प्रवृत्तियॉ करती है मानव चेतन मस्तिष्क नही।

वर्डसवर्थ ने काव्य मे ग्रामीण मनुष्यो की वास्तविक भाषा के प्रयोग का सुझाव दिया है किन्तु वास्तविक भाषा मे वस्तुत शब्द का अर्थ स्पष्ट नही है। प्रत्येक मनुष्य की भाषा देश काल वातावरण उसके ज्ञान और व्यवसाय पर निर्भर कर अलग अलग रूप लिये होती है किन्तु यदि उनकी भाषा को वास्तविक न कहा जाय ऐसा नही। प्रत्येक मनुष्य की भाषा वास्तविकता लिये हुए भी भिन्न होती है। व्यक्ति की वैयक्तिकता, वर्ग का साधारण धर्म तथा सार्वभौमिक प्रयोग के शब्द और वाक्य इन्ही तीन तत्त्वो का भाषा निर्माण मे प्रमुख योगदान रहता है किन्तु यदि भाषा के लिए हम वास्तविक भाषा के स्थान पर सर्वसाधारण की भाषा शब्द प्रयुक्त करे तो अधिक समीचीन होगा क्योंकि सर्वसाधारण की भाषा तो तनिक ही परिष्कार और सशोधन के बाद गढ़ी जा सकती है किन्तु ग्रामीण किसान की भाषा को काव्य के लिए उपयोगी बनाने के लिए अत्यधिक परिष्करण सशोधन, परिमार्जन और परिवर्तन की आवश्यकता होगी। इतने अधिक परिवर्तन सशोधन और परिष्करण के बाद तो किसी भी वर्ग की भाषा को काव्योपयोगी बनाया जा सकता है।

वर्डसवर्थ बाद मे अपने कथन की व्यापकता की सीमा निर्धारण भी स्वय करते हुए कहते है कि किसानो की उस भाषा को काव्योपयोगी बनाया जा सकता है जो कि प्रदीप्त क्षणो मे जन्म ले किन्तु **कॉलरिज** इस विषय पर भी **वर्डसवर्थ** से गहरा मतभेद रखते है। **कॉलरिज** का कथन है कि हर्ष, शोक या क्रोध के समय किसी व्यक्ति की भाषा कौन सा रूप लेकर जन्मेगी यह नही कहा जा सकता है क्योंकि प्रत्येक मनुष्य की मानसिक सम्पन्नता और उसका शब्द भण्डार भिन्न होता है मानसिक धरातल भिन्न होता है। यदि कुछ समय के लिए ग्रामीण किसान की दैनिक भाषा के अनुकरण सिद्धान्त को मान भी लिया जाय तो हम कुछ ही शब्दो के बारम्बार प्रयोग को भाषा का अनुकरण नही कह सकते। व्याकरण का ज्ञान तथा वाक्य विन्यास मे उद्देश्य और विधेय का सस्थान और वाक्य सस्थान क्रम की ओर भी ध्यान देना आवश्यक होता है। ग्रामीणो की भाषा के वाक्य ऊबड़ खाबड़ व एक दूसरे से सम्बद्ध नही होते इसी कारण उनमे शिथिलता होती है। काव्य मे शिथिलता का अर्थ होता है कि यह काव्य के आनन्द मे उसी प्रकार अवरोध उत्पन्न करती है जिस प्रकार निरन्तर गति की ओर बढ़ती गाड़ी के मार्ग मे मार्ग अवरोधक उसकी गति को कम कर देते है।

भाषा के साथ छन्दो का प्रयोग इस विषय पर भी **कॉलरिज** के अपने स्पष्ट और तर्कपूर्ण विचार है। **वर्डसवर्थ** मानता था कि गद्य और पद्य की भाषा मे कोई अन्तर नही है यत्र तत्र केवल छन्दोबद्धता को छोड़कर किन्तु **कॉलरिज** का सिद्धान्त एक बार पुन: इसका विरोध करता है। छन्दो मे अवस्थित तुक लय, यति गति, विराम आदि तत्वो के कारण भाषा मे इन तत्त्वो का समावेश नही होता अत

भाषा निलकृत और साधारण तथा सादगी लिये होती है और खटकती भी नही है। हमारे आध्यात्मिक जीवन की विशिष्ट माँग के फलस्वरूप विशि भाषा के द्वारा छन्दो की उत्पत्ति होती है अत गद्य और पद्य की भाषा कभी एक सी नही हो सकती। छन्दयुक्त भाव दीप्तिमान और आकर्षित होते है और पाठको का ध्यान बरबस ही अपनी ओर खीचते है। छन्द कभी तो पाठक के कौतुहल को जागृत करते है और कभी शान्त। इस प्रक्रिया मे भावो के आदान प्रदान का क्रम चलता रहता है। सूक्ष्म रूप मे यह अपना आभास चेतन-मस्तिष्क को भी नही करा सकते किन्तु सम्मिलित रूप मे काफी बड़े हो जाते है और इनका सामूहिक प्रभाव ही दृष्टिगोचर होता है। अत भाषा एक ही नही रहती उनमे अनिवार्य अन्तर आ जाता है।

डॉ० देवराज उपाध्याय ने दोनो ही कवियो के दृष्टिकोणो को सटीक बताया है और वह किसी एक कवि के पक्ष मे अपना निर्णय नही दे पाते है। **कॉलरिज** के अनुसार छन्द के कारण काव्य की भाषा मे सुन्दरता बढ़ती है और वह आलकारिक और सुसज्नित हो जाती है वही दूसरी ओर **वर्डसवर्थ** के अनुसार छन्दो की सृष्टि भावो की उग्रता और उफान शान्त करने के लिए होती है जिसके कारण भाषा अस्वाभाविकता से मुक्त होकर सीधी सादी अभिव्यक्त होगी। छन्द का काम हृदय की शान्ति की अभिव्यक्ति मे योगदान करना है।

कॉलरिज ने अपनी पुस्तक "Biographia Literaria" मे **वर्डसवर्थ** की कविता के गुण दोष विवेचन के माध्यम से यह स्पष्ट किया है कि आलोचना कैसे की जाती है? आलोचना के मूलभूत सिद्धान्त भी **कॉलरिज** की इस पुस्तक के 22वे अध्याय मे किये गये विवेचन से ही ज्ञात हो सकते है।

डॉ० देवराज उपाध्याय, कॉलरिज के द्वारा दिये गए आलोचना के इन मूलभूत सिद्धान्तो से अत्यधिक प्रभावित है तथा हिन्दी आलोचना के गिरते स्तर से चिन्तित वह हिन्दी आलोचना के विशेषज्ञो को **कॉलरिज** की पुस्तक "Biographia Literaria" के 22वे अध्याय को पढ़ने का सुझाव भी देते है। इस अध्याय मे यद्यपि **कॉलरिज** ने **वर्डसवर्थ** की कविताओं मे भाषा की शिथिलता व गॅवारूपन का उल्लेख किया है किन्तु वह कहता है कि **वर्डसवर्थ** के काव्य की भाषा तुरन्त ही अपने प्रकृत रूप को प्राप्त हो गौरवभूमि की ओर लौट आती है।

कॉलरिज की पुस्तक Biographia Literaria के 22वे अध्याय को पढ़ने और विचार मनन के बाद **डॉ० देवराज उपाध्याय** ने आलोचना के कुछ सिद्धान्त प्रतिपादित किये है जो निम्न है।

सर्वप्रथम **कॉलरिज** के मतानुसार **डॉ० देवराज उपाध्याय** अपनी पुस्तक **रोमाटिक साहित्य शास्त्र** मे लिखते हैं कि यदि काव्य की शैली मे अवाछनीय और आकस्मिक परिवर्तन दृष्टिगोचर हो जाये तो ऐसे मे हृदय की दशा विचित्र हो जाती है। हृदय का भाव जो एक प्रवाह व गति से बहता जा रहा था उसे आकस्मिक मोड़ लेना पड़ता है जिससे काव्य मे शिथिलता उत्पन्न होती है। शिथिलता के कारण पाठक कष्ट का अनुभव करता है। यह कष्ट काव्य की रसानुभूति मे साधक होता है।

द्वितीय, काव्य ऐसा होना चाहिए कि उसका उद्देश्य साक्षात् आनन्दोद्रेक करना हो सत्य का प्रतिपादन नही। अत° लेखक को किसी भी घटना के विस्तारपूर्ण वर्णन मे अपना समय व्यर्थ व्यतीत नही करना चाहिए। घटनाएँ जीवन की सार्थकता लिए हुए हो वरन् काव्योपयोगी हो। अत स्थूल इतिवृत्तात्मकता से कवि को परहेज करना चाहिए। **कॉलरिज** के शब्द इस सम्बन्ध मे विचारणीय है

Truth narrative and past is the idol historians (who worship deal things) and truth operative and by effects continually alive is mistress of poet, who had not her existence in matter but in reason

अर्थात् ऐतिहासिक मृत वस्तु की पूजा करता है अत वर्णनात्मक अतीत उसका आदर्श हो सकता है। पर कवि क्रियात्मक और प्रभावो मे सजीव सत्य का सेवक होता है और इस सत्य का निवास स्थूल द्रव्य मे नही पर बुद्धिगम्यता मे होता है। [1]

ऐसी रचनाएँ जिनका उद्देश्य आनन्दोद्रेक करने के स्थान पर सत्य का प्रतिपादन करना होता है वह साहित्यिक ध्येय से अलग मार्ग की ओर बढ़ जाती है और साक्षात् रस का परित्याग कर देती है अत इस प्रकार का दोष काव्य मे नही आना चाहिए अन्यथा काव्य आलोचना का पात्र हो त्याज्य हो जाता है।

तीसरे प्रकार का दोष भी काव्य मे पाया जाता है जिसे हम मानसिक स्फीति या Mental Bombast कह सकते है। साधारण सी तुच्छ वस्तु का अत्यन्त अतिश्योक्तिपूर्ण वर्णन छोटी सी तुच्छ वस्तु मे विराट् रहस्य का दर्शन कर उसे उसी रूप मे वर्णित करना मानसिक स्फीति या Mental Bombast कहलाता है। यह दोष प्रतिभावान व्यक्तियो मे ही पाया जाता है। अत किसी भी प्रकृत वस्तु का बढ़ा चढ़ाकर ऐसा वर्णन नही होना चाहिए कि वह असत्य लगने लगे।

कॉलरिज कल्पना को कविता का रहस्य शक्ति जननी मानते है। कल्पना को **कॉलरिज** ने विधायक कल्पना के नाम से पुकारा है। अग्रेजी मे इसे Imagination कहा गया है जो कि लैटिन धातु का शब्द है। रूपो की सृष्टि करना इसका तात्पर्य है।

कल्पना को जो कुछ भी धरोहर रूप मे प्रकृति से मिला उसे उसने मनुष्य को लौटा दिया। प्रकृति और चेतन मस्तिष्क की समानधर्मिता के कारण ही काव्य का सृजन होता है। कलाकार की कल्पना अपनी ओर से प्रकृति मे भावो का समिश्रण करती है केवल उतना ही मिश्रित करती है जितना प्रकृति उसे सहज भार से सँभाल सके और प्रकृति से उतना ही ग्रहण करने की चेष्टा करती है जितना कि मानव मस्तिष्क मे ग्रहण करने की क्षमता है।

कॉलरिज कल्पना की दो श्रेणियाँ निश्चित करते है। प्रथम आद्या कल्पना या Primary Imagination यह प्रकृत वस्तु की ऐन्द्रिय प्रतीति को ज्ञानगम्य बनाती है जबकि दूसरी श्रेणी की कल्पना जिसको प्रतिनिधि कल्पना या Secondary Imagination कहते है यह प्रकृत वस्तु को तोड़ती है छिन्न भिन्न करती है और फिर अपनी इच्छानुसार उनको सृजनात्मक रूप देती है। आद्या की प्रति ध्वनि मनुष्य की इच्छा की सहचरी है। यह आत्मा और प्रकृति मे समान रूप से स्थित रहती है। इसकी अवस्थिति के कारण कवि प्रकृत वस्तु का आदर्शीकरण कर उसका मनन चिन्तन कर सकता है तथा इच्छानुसार रूप प्रदान कर सकता है।

डॉ० देवराज उपाध्याय और जॉन रस्किन

जॉन रस्किन उस समय का विद्वान् था जबकि रोमाटिक साहित्य की बाढ़ मे उतार आ चला था। अत **रस्किन** ने क्लासिकल साहित्य के मूलभूत काव्य सिद्धान्तो को भली प्रकार समझा परखा

1 डॉ० देवराज उपाध्याय *रोमाटिक साहित्य शास्त्र* पृ० 163

और तत्पश्चात् पर्याप्त मनन विश्लेषण के पश्चात् ही उसन अपनी ओर से कुछ सिद्धान्त प्रतिपादित किये थे। **रस्किन** ने ही सर्वप्रथम चाक्षुष और गठनकारी कलाओं के मूल्याकन और उनका महत्त्व निर्धारण करने के लिए इन कलाओं के ऊपर पर्याप्त विश्लेषण और गवेषणात्मक विचार कर कुछ सिद्धान्तो की स्थापना की थी। इन कलाओं मे अपार, अप्रतिहत और सीधे मन पर आघात करने वाली शक्ति से सम्बन्धित करनेवाले जीवन दर्शन की विवेचना की है। **रस्किन** कहता है कि साहित्यालोचन का क्षेत्र कला समालोचना के क्षेत्र से अधिक समृद्ध एव विस्तृत है। इसका कारण वह सुझाता है कि साहित्य पर शब्दो के द्वारा कुछ कहना जितना सरल है उतना मूर्तिकला और चित्रकला पर नही। यही कारण है कि **रस्किन** ने कलाकृतियो पर दृष्टा और स्रष्टा दोनो ही दृष्टिकोणो से विचार किया है। **रस्किन** अपनी प्रसिद्ध पुस्तक Modern Painters मे कहता है कि जो स्रष्टा है वह द्रष्टा होता ही है बल्कि यदि यह कहा जाय कि विशिष्ट द्रष्टा ही स्रष्टा होता है किन्तु साथ ही साथ **रस्किन** यह भी कहता है कि प्रकृत वस्तु के रहस्यो और गम्भीरता को परखने के लिए दृष्टि ही नही होनी चाहिए वरन् उनकी व्यवस्थित रूप से शिक्षा होनी चाहिए तथा उन्हे नियमित रूप से देखने की सामर्थ्य प्राप्त करने की भी दीक्षा लेनी चाहिए। स्वय **रस्किन** ने कहा है हमारी जागृत अवस्था मे नेत्रो का अवलोकन व्यापार तो निरन्तर चलता रहता ही है जहॉ तक हमारे शरीर धर्म का सम्बन्ध है हम सदा कुछ न कुछ देखते तो है ही और यह मात्र देखना सदा एक ही तरह का होता है।[1]

अर्थात् देखने की क्रिया सदैव होती ही रहती है क्योंकि यह शरीर का कर्तव्य है किन्तु यह देखना नही के बराबर है क्योंकि इस तरह की दृष्टि मे गहराई या कोई विशिष्टता नही होती और यह हमारी अन्तर की चेतना पर केवल एक मृदुल आघात होता है। कठिन तपस्या और साधना के बाद ही हमारे नेत्र आध्यात्मिक ज्योति को धारण और अभिव्यक्त करने योग्य बन सकते है और जब हमारे नेत्र इतने शिक्षित हो जायेगे कि वह गहराई तक झाक सके उस समय स्रष्टा की लेखनी अथवा कूची से जिस कलाकृति का निर्माण होगा वह हमारे मन पर केवल मृदुल आघात ही नही करके रह जायेगी वरन् हमारी अन्तश्चेतना को भी अपने दिव्य प्रकाश से आलोकित कर देगी। इस दिव्य दृष्टि का दिव्य प्रकाश ही जीवन के महत्त्वपूर्ण गौरवमय और महिमामय रहस्यो का मूलस्रोत है।

रस्किन अपने राष्ट्र की चिन्तनधारा को परिवर्तित करना चाहता था। वह चाहता था कि उसके राष्ट्र के व्यक्ति विभिन्न कलाओं के अध्ययन-अध्यापन मे रुचि ले। उसने अपनी इस महत्त्वाकाक्षा को इस प्रकार प्रस्तुत किया था कि अन्य मॉगे उसके समक्ष गौण हो गयीं।

रस्किन मानव चेतना और मानव-आत्मा की अखण्डता और एकता मे विश्वास करता है। उसकी सम्पूर्ण विचारधारा इसी सत्य पर आधारित है। **रस्किन** का मत है कि मनुष्य के समस्त क्रिया-कलाप किसी विशिष्ट शक्ति केद्र से जन्म नही लेते वरन् वह मनुष्य के सम्पूर्ण व्यक्तित्व को अपने साथ लेकर आगे बढ़ते है। मनुष्य की प्रत्येक क्रिया उसके विशिष्ट और भिन्न व्यक्तित्व की अभिव्यक्ति मात्र है। **डॉ० उपाध्याय** का कथन है कि यदि भारतीय साहित्य शास्त्रियो की विचारधारा का अवलोकन किया जाय तो उसमे भी रस्किन की विचारधारा का समर्थन मिलता है। भारतीय साहित्यशास्त्रियो के अनुसार जब आन्तरिक प्रयत्न और अनुशीलन दोनो का सयोग होता है तो काव्य की शक्ति उत्पन्न होती है।

1 डॉ० देवराज उपाध्याय *रोमांटिक साहित्य शास्त्र* पृ० 170

कला की परिभाषा देते हुए **रस्किन** कहता है कि सर्वश्रेष्ठ कला वह होती है जो पाठक के मन मे किसी भी माध्यम से अधिक से अधिक उदात्त भावो को उदीप्त कर प्रेषणीय बना सके। सर्वश्रेष्ठ कलाकार की पहचान ही यही है कि वह अपनी कलाकृति मे अधिक से-अधिक विचारो और भावो को उदीप्त कर प्रेषणीय अभिव्यजक भाषा को भावो की वाहिका के रूप मे बना सके। कला भावो की व्यजक भाषा है वह भावो की वाहिका है। भावो की वाहिका उसे होना ही है। यथार्थ कल्पना और प्रकाशन के ढग इन तीनो की सम्मिश्रण से कला या काव्य के रूप का निर्माण हुआ है। काव्य के बाह्य रूप रग सौष्ठव के मोहपाश मे बॅधकर मुग्ध हो हम थोड़ी देर के लिए उसकी प्रशसा तो अवश्य कर सकते है किन्तु कला के वास्तविक रूप की परख तो उसमे व्याप्त भावो पर ही है। यदि उच्च और दिव्य भावो की अभिव्यक्ति के लिए विशिष्ट आलकारिक भाषा का प्रयोग किया जाये तो सोने मे सुगन्ध का कार्य करता है। किन्तु स्वर्ण के मूल्याकन मे हम उसका कोई महत्त्व नही रखते। सोने मे यदि सुगन्ध न भी हो तो कोई बात नही। **रस्किन** स्पष्ट शब्दो मे कहता है कि चित्रकार अथवा साहित्य स्रष्टा की उच्चता की कसौटी कला अथवा उक्ति का ढग नही परन्तु अभिलेख्य अथवा अभिधेय भाव होता है। [1]

रस्किन के अनुसार कला की श्रेष्ठता उसके भाव की मात्रा और उनकी भव्यता पर निर्भर करती है। **रस्किन** ने कला मे प्रतिबिम्बित भावो पर सूक्ष्मता से विचार कर शक्ति अनुकृति सत्य सौन्दर्य और सम्बन्ध इन भावो के नाम सुझाये है। यही भाव हमारे हृदय को उद्भासित कर वहॉ आनन्द का सृजन करते रहते है।

किसी भी उच्चकोटि की कला कृति को देखकर हम उसमे कलाकार की शक्ति और प्रतिभा का दर्शन करते है। प्रत्येक कलाकार अपनी सम्पूर्ण जीवनी शक्ति के साथ अपनी कलाकृति का निर्माण करता है। फिर भी प्रत्येक कलाकृति मे एक शक्ति सर्वोपरि होती है। चाहे वह शक्ति हृदय की शक्ति हो अथवा मस्तिष्क की अथवा ॲगुलियो की पर होती शक्ति ही है एक ऐसी शक्ति जो अपने तेज से सारी कठिनाइयो को समाप्त कर कलाकार की कृति को उद्देश्य की अनुकूलता की ओर मोड़ देती है। जब कलाकार अपने कौशल के साथ कल्पना शक्ति और अपने व्यक्तित्व की पूर्ण शक्ति का प्रदर्शन कर सके तो उसकी कृति का महत्व ही चार गुना हो जाता है।

कलाकार की कुशलता उसकी शक्ति का बोध कराती है। कलाकार के कौशल को देखकर हम आनन्दित होते है। कलाकार के कौशल मे जिन गुणो की आशा की जाती है वह है सत्य सारल्य रहस्यमयता अपर्याप्तता निर्णयात्मकता तथा गतिमयता।

सत्य का समावेश कला के लिए आवश्यक माना गया है। इसकी उपलब्धि परिश्रम द्वारा नही होती यह कलाकार की अपनी मौलिक वस्तु होती है। इसके समावेश से कला मे सजीवता आती है।

दूसरे गुण की श्रेणी मे सारल्य आता है। कला अभिव्यक्ति के साधन मे जितनी सरलता दिखावारहित, आडम्बरहीनता शान्ति और वैराग्य होगा कला मे उतनी ही प्रभावोत्पादकता होगी।

तीसरा गुण है रहस्यमयता। प्रकृति भी स्वय अपने साधनो का प्रयोग गुप्त रूप से तथा रहस्यमय ढग से करती है। अतः काव्य मे रहस्यमयता उसकी प्रभावोत्पादकता को और भी बढ़ा देती है।

1 डॉ० देवराज उपाध्याय *रोमाटिक साहित्य शास्त्र* पृ० 181

रस्किन के अनुसार दुर्बोध और अचिन्तनीय कौशल श्रेष्ठ है।

साधन की अपर्याप्तता कौशल का एक गुण है। साधन की अपर्याप्तता ऐन्द्रिय शक्ति बोध का स्पन्दन पैदा करती है।

पॉचवॉ गुण निर्णयात्मकता है। किसी भी कलाकृति से निर्भीकता व आत्मविश्वास की झलक मिलनी चाहिए। पाठक को यह विश्वास होना चाहिए कि कलाकार को कही सशय अथवा शका नही है।

छठा गुण है गतिमयता। एक गतिशील कलाकृति जितनी खूबी से सत्य की अभिव्यक्ति करती है उतनी मन्द कलाकृति नही। अत गतिमयता कला का भिन्न गुण है।

अनुकृति भाव के सम्बन्ध मे **रस्किन** के विचार बड़े ही स्पष्ट है। यदि हम किसी कलाकृति को देखकर उसमे वस्तु का आभास पाने लगते है जो वह है ही नही तब हम कह सकते है कि हमने अनुकृति का भाव प्राप्त किया। अनुकृति व सत्यता मे पर्याप्त अन्तर है। सत्यता का क्षेत्र व्यापक है। सत्यता भावो और विचारो की होती है जबकि अनुकृति मूर्त और स्थूल पदार्थों की होती है। सत्यता मे माध्यम को प्रतीक रूप मे प्रयोग किया जाता है जबकि अनुकृति मे यह सादृश्य होता है। सत्य तो सत्य है उसका खण्डन आशातीत नही अपितु अनुकृति का आभास तत्पश्चात् खण्डन होता है। अनुकृति और सत्यता के भाव ग्रहण करने के अवसर भिन्न होते है। सत्य का भाव ग्रहण करने का आधार सत्यता है जबकि अनुकृति का असत्यता।

कला मे प्रतिबिम्बित एक अन्य भाव है सौन्दर्य। वही वस्तु सुन्दर कही जा सकती है जिसके बाह्य धर्मों मे मानव हृदय मे साक्षात् आनन्द सृजित करने की शक्ति हो। इस आनन्द सृजन मे बुद्धि का कोई योग नही होता। यह मनुष्य की सहज स्वाभाविक प्रवृत्ति है। विधाता ने एक ओर तो कुछ वस्तुएँ सुन्दर बनायी ही है तो दूसरी ओर मनुष्य मे सुन्दरता को परखने के गुण भी दिये है। सौन्दर्य वस्तुओं का सकारात्मक सत्य है एक ऐसा सत्य जो आनन्द उत्पन्न करता हो। सौन्दर्य के दर्शन से मानस मे स्फूर्ति का सचार होता है जीवन की आद्यता भरती सी मालूम देने लगती है तथा मानस स्वय को दिव्यता से मण्डित सा पाने लगता है। कोई भी मानस जब सौन्दर्य के भावो को ग्रहण करता है तो वह सम्बन्ध के भावो को तो स्वयमेव ही ग्रहण कर जाता है।

सम्बन्ध शब्द का व्यवहार **रस्किन** ने उन विशाल श्रेणी के भावो के लिए किया है जो कलाकृति के द्वारा प्रकट होते है। जब किसी कलाकृति को देखकर हम आनन्दित होते है किन्तु यह नही बता सकते कि उनमे क्या अच्छा लगा तब सौन्दर्य के भाव द्विगुणित हो जाते है तो यह कहा जाता है कि इन द्विगुणित सौन्दर्य के भावो से सम्बन्ध के भाव गृहीत हुए। अत यदि किसी कला वस्तु को देखकर बौद्धिकता के भाव प्रकट होते है तो इन भावो को हम सम्बन्ध के भाव कह सकते है। यह किसी कलाकृति मे अभिव्यजना की वृद्धि कर उसे विशिष्टता प्रदान करती है किसी गम्भीर सत्य से उसे मण्डित कर बुद्धि को उसका दर्शन कराती है तभी वहॉ सम्बन्ध के भावो की अभिव्यक्ति हो सकती है। रस्किन इसे कला द्वारा अभिद्योत्य भावो मे सबसे महत्त्वपूर्ण मानता है। यहॉ तक कि सुन्दरता भी इसके सामने तुच्छ हो जाती है। स्वय **रस्किन** के शब्दो मे

Idea of relation involves and requires at the instant of their perception active exertion of intellectual power [1]

कविता क्या है? कविता के स्वरूप का विवेचन करते हुए **रस्किन** कहता है कि कविता मे उदात्त भाव जब उदात्त परिस्थिति से मिलते है तो कल्पना जागृत होती है और इन तीनो के परस्पर मिलने के कारण ही कोई रचना काव्य पद की अधिकारिणी होती है। केवल उदात्त भाव और उदात्त क्षेत्र या परिस्थिति के मिल जाने से ही कविता नही उत्पन्न होगी वरन् इन दोनो तत्वो के साथ आवश्यक तत्त्व कल्पना का होना परमावश्यक है। विधायक कल्पना भावक की भावयित्री कल्पना को जगाकर उसे काव्य का रसास्वादन कराती है। कवि और भावक की कल्पना के सहयोग ही काव्य का आवश्यक तत्त्व है। उदात्त भाव अनुकूल परिस्थिति पाते ही काव्यात्मक भावो का रूप धारण करते है कल्पना के सम्मिश्रण से रचना काव्य का रूप धारण करती है। **रस्किन** ने प्रेम श्रद्धा प्रशसा आनन्द घृणा भय तथा विषाद की गणना उदात्त भावो के अन्तर्गत की है। एक उच्च कला की महत्ता इस बात पर निर्भर नही करती कि उसकी शैली चित्राकन अथवा लेखन विधि और विषय क्या है अपितु उसकी महत्ता इस बात मे है कि उदात्त भावो की योजना मे स्रष्टा कहॉ तक सफल हुआ है? इसी क्रम मे **रस्किन** कलाकार का महत्त्व भी निर्धारित करता है। इसके लिए वह कुछ नियम निर्धारित करता है।

सर्वप्रथम उदात्त विषय के निर्वाचन मे कलाकार को विशेष ध्यान देना होता है। एक उच्च कलाकार की कसौटी यह है कि वह उन विषयो को अपनी कला का उपजीव्य बनायेगा जिनमे उदार विश्व मैत्री के भावो को धारण करने की शक्ति हो जो उच्च मनोवेगो को हमारी तुच्छ भावनाओं और स्वार्थों के विपरीत धारण करे किन्तु इस निर्वाचन मे हार्दिक सच्चाई और विवेक से काम लिया जाना चाहिए।

द्वितीय कलाकार मे सत्य पर आधारित अधिकाधिक सौन्दर्य सयोजन की निपुणता हो शक्ति हो। यहॉ **रस्किन** कहता है कि ऐसा नही है कि कुरूपता का यहॉ कोई स्थान नही वरन् कुरूपता को वह सौन्दर्य के साथ ही ग्रहण करने की बात भी कहता है। सौन्दर्य के लिए सत्य का बलिदान करने का वह विरोधी है। महान् कलाकृति की सत्य पर पकड़ ज्यो कि त्यो बनी रहती है भले ही उसे सत्य के लिए सौन्दर्य का बलिदान करना पड़े। उच्च कृति दर्शक का ध्यान सुन्दर भावमय स्थलो की ओर आकृष्ट करती है।

तीसरा नियम है कि कला मे कही भी अस्पष्टता अनस्थिरता और मलिनता की लेशमात्र भी झलक नही होनी चाहिए क्योकि यह कला के दरिद्र रूप को झलकाते है इसके विपरीत शक्ति स्पष्टता ज्योतिर्मयता और दृढ़ता श्रेष्ठ व उच्च कला के द्योतक है। अनेक सत्यो को समन्वित करते हुए एक वृहद् सत्य की घोषणा एक उच्च व महान् कृति का लक्षण है।

कलाकार के महत्व निर्धारण की चौथी कसौटी है कल्पना । साधारण सी घटनाओं को अपार प्रभावोत्पादक बनाना कल्पना के ही वश की बात है। कल्पना मे मानव हृदय को प्रभावित करने की शक्ति होती है। कल्पना ही इतिहास जैसे शुष्क विषय के विवरण मे चमक भरकर उसे ज्योतिर्मय बना देती है।

1 डॉ० देवराज उपाध्याय *रोमांटिक साहित्य शास्त्र* पृ० 195

इन सब नियमो के बाद भी **रस्किन** का विचार है कि श्रेष्ठ कला का निर्माण कलाकार अपनी सम्पूर्ण जीवनी शक्ति और व्यक्तित्व के यो। से करता है केवल कुछ शक्तियो के योग से नही। जिस कला का निर्माण मनुष्य की सम्पूर्ण शक्ति के साथ होता है वह ही श्रेष्ठ कला की श्रेणी मे रखी जा सकती है। केवल कुछ शक्तियो के सहारे कला निर्माण व्यर्थ का समय गँवाना है।

उपसंहार

स्वच्छन्दतावाद अंग्रेजी के रोमांटिसिज्म का हिन्दी अनुवाद है। स्वच्छन्दतावाद को समीक्षको ने विभिन्न आयाम दिये और उसके विकास को सुनिश्चित किया। **डॉ० देवराज उपाध्याय** ने स्वच्छन्दतावादी अवधारणा को मनोवैज्ञानिक परिप्रेक्ष्य मे मनोविश्लेषणात्मक सिद्धान्तो को केंद्र मे रखकर अपने गहन चितन से सीचा था। **डॉ० उपाध्याय** हिन्दी के एकमात्र समीक्षक है जिन्होने हिन्दी स्वच्छन्दतावादी समीक्षा के अन्तर्गत पाश्चात्य स्वच्छन्दतावादी कवियो के काव्यो के अनुशीलन विश्लेषण के द्वारा अपनी समीक्षा को विकसित किया। स्वच्छन्दतावादी अवधारणा को व्याख्यायित करते हुए उन्होने मनोवैज्ञानिकता को ही अपनी समीक्षा मे सर्वोपरि स्थान दिया और स्वच्छन्दतावादी मनोवैज्ञानिक वैचारिकता को ही अपने चिन्तन का विषय बनाया।

डॉ० देवराज उपाध्याय ने पाश्चात्य स्वच्छन्दतावादी कवियो को तो अपने स्वच्छन्दतावादी विश्लेषण मे स्थान दिया ही है इसके साथ साथ आप **श्रीमती महादेवी वर्मा** की आलोचना पद्धति **रामकुमार वर्मा** और **महादेवी** की गीतियो यहॉ तक कि **पन्त** के **उच्छवास** और **प्रसाद** के **ऑसू** की भी इस सदर्भ मे चर्चा करते है।

डॉ० उपाध्याय की स्वच्छन्दतावादी समीक्षा दृष्टि स्वच्छन्दतावादी चिन्तन पर आधारित एकमात्र ग्रन्थ और हिन्दी स्वच्छन्दतावाद पर प्रथम व्यवस्थित ग्रन्थ **रोमांटिक साहित्य शास्त्र'** मे ही स्पष्टत दृष्टिगोचर होती है।

डॉ० उपाध्याय अपनी स्वच्छन्दतावादी समीक्षा दृष्टि को विस्थापित करने के क्रम मे सर्वप्रथम क्लासिक और रोमांटिक अवधारणाओं का परस्पर मनोवैज्ञानिक विश्लेषण अनुशीलन करते है।

क्लासिकल अवधारणा को परम्परावादी चिन्तन का नाम देते हुए **डॉ० उपाध्याय** ने क्लासिकल चिन्तन को भी मनोवैज्ञानिक चिन्तन की कसौटी पर कसा है परखा है। क्लासिकल अवधारणा का प्रादुर्भाव तत्कालीन साहित्य मे अतिशय कृत्रिमता के फलस्वरूप हुआ था किन्तु नव क्लासिकवाद उन लोगो के हाथ मे पड़ गया जिनमे मौलिकता और प्रतिभा के प्रति तनिक भी आकर्षण नही था जीवन की ताजगी व सौन्दर्य के प्रति कोई आकर्षण नही था। अत स्वाभाविक अभिव्यक्ति को तो जैसे जग लग गया था। कृत्रिमता ने अपनी जड़े फैलानी प्रारम्भ कर दी थी।

डॉ० देवराज उपाध्याय ने परम्परावादी अवधारणा के दोषो को ही केवल विश्लेषित नही किया वरन् वह क्लासिकल काव्य की उच्चता गरिमा और उसका अनुशासन के प्रति कड़ा रूख भी विश्लेषित करते है किन्तु परम्परावादी अवधारणा को विश्लेषित करते हुए उसके बाह्य रूप सौन्दर्य प्रावधान और कृत्रिमता का विरोध करते है। परम्परावादी अवधारणा की कृत्रिमता ही उसके पतन का कारण बनी जिसके कारण परिवर्तन की आवश्यकता को बल मिला और तब आया रोमांटिक चिन्तन ।

रोमांटिक चिन्तन क्लासिक चिन्तन के प्रति विद्रोह के फलस्वरूप आया था। रोमांटिक साहित्य प्रवृत्ति से चचल साहित्य है उसमे ऑधी और तूफानो का बोलबाला है। इस चिन्तन मे प्रवाह है वेग है अत स्वच्छन्दता है। इसी कारण यह चिन्तन किसी नियम या कानून मे नही बॅध सकता और स्वच्छन्द विचरण करता हुआ अनुशासन की अवहेलना करता है। क्राति विद्रोह इस चिन्तन का मूल

स्वर है। व्यक्ति की स्वतत्र अनुभूति की ‐‐ना और आवेग के माध्यम से ही अभिव्यक्ति होती है और जब वह भाषा के माध्यम से प्रकट होती है तो अनुशासन नियम नीति सदाचार किसी से भी उसका सामजस्य नही हो पाता। मन का यह आवेग कवि को कही रुकने का अवसर ही नही देता वह तो बस हर बधन को तोड़ता प्रवाहित ही होता रहता है।

डॉ० देवराज उपाध्याय ने रोमाटिक चिन्तन को विश्लेषित करते हुए रोमाटिक कवि पर अपना ध्यान केद्रित किया है। उनका अभिमत है कि रोमाटिक कवि का मस्तिष्क अत्यधिक सवेदनशील और प्रतिक्रियाशील होता है। जब वह वास्तविकता के सम्पर्क मे आता है तो सत्य उसके मानस पटल पर इस प्रकार अकित हो उठता है कि मानो उसकी दिव्य दृष्टि के नेत्र खुल गये हो और वह सत्य से हूबहू साक्षात्कार करता है। प्रकृत वस्तु के प्रति क्रियाशीलता का भाव इतना तत्वपरक होता है कि प्रकृत वस्तु की वेदना उसके हृदय को भेदती है। यह अनुभूति स्वत॰प्रसूत वेदना के रूप मे उसके हृदय के अन्तर्मन पर प्रवाहित होती है तथा एक अदम्य प्रवाह व वेग की भाषा के रूप मे अभिव्यक्त हो जाती है। यह कविता रहस्यवाद से पूर्ण प्राणो की आकुलता लिये और पर्वतो को गिरा देने की शक्ति लिये होगी। रोमाटिक कविता मे कवि के आत्मदर्शन की अथवा आत्माभिव्यक्ति की ही झलक नही मिलती वरन् उस युग के समवेत कण्ठस्वर की ध्वनि भी सम्मिलित रहती है।

डॉ० उपाध्याय का मत है कि रोमाटिक कविता स्वत प्रसूत है। वह कवि की इच्छा अनिच्छा और परिश्रम पर निर्भर नही है न ही उसे तराशने और छॉटने की आवश्यकता है। वह तो कवि के अन्तस् से स्वत ही उमड़ती है और कवि को अपने को अभिव्यक्त करने के लिए विवश कर देती है। कवि के हृदय मे भाव उमड़ घुमड़कर हलचल पैदा कर देते है। प्रवाह अथवा आवेग का सचार होते ही कविता फूट पड़ती है शब्दो की ढाल लेकर यह कविता अपनी अभिव्यक्ति की भाषा स्वय ही ले आती है। अनुशासन को ताक मे रख, परम्परा को तोड़, एक विशिष्ट ढग से यह कविता अभिव्यक्त होती है। इस साहित्य की अभिव्यक्ति मे प्रवाह है गति है गहराई है, स्वच्छन्दता है विद्रोह है और सबसे ऊपर है अनुशासन की अवहेलना। इस साहित्य मे विद्रोहात्मक प्रवृत्ति आवेग आवेश और स्वच्छन्दता इत्यादि पाई जाती है।

डॉ० उपाध्याय ने रोमाटिक कविता की उत्पत्ति के लिए एक प्रेरक शक्ति का व्रिधमान होना स्वीकार किया है। यह शक्ति कवि के अन्तस् मे विद्यमान रहती है। जब कवि एकान्त क्षणो मे बैठा हो अथवा शान्ति के क्षणो मे बैठा हो और किसी शक्तिशाली अथवा प्रबल स्मृतियो का पुन स्मरण करता है तो वह घटना जो उसके अचेतन मन पर कही सुसुप्तावस्था मे विद्यमान थी स्मरण की क्रिया से कवि के स्मृति पटल पर पुन अकित हो जाती है। यह स्मरण कवि के हृदय की वेदना अश्रुधारा के माध्यम से कविता रूप मे परिणत हो जाती है। यही वेदना कवि की स्वत प्रसूत वेदना है और रोमाटिक कविता की प्रेरक शक्ति अर्थात् जननी है।

ऐसी स्वत प्रसूत कविता को **डॉ० देवराज उपाध्याय** ने कल्पना स्वप्रकाश सहज प्रतिभा आदि नाम दिया है। वह इसे शक्ति नाम से भी सम्बोधित करते है। एक ऐसी शक्ति जो कवि हृदय मे भावो का सचार करती है वेदना उत्पन्न करती है और प्रेरित करती है भावो को उमड़ने घुमड़ने को। यही वेदना कवि हृदय पर इस प्रकार चोट करती है कि कवि के अन्तर्मन से आह निकलती है और यही आह गान के रूप मे अभिव्यक्ति को प्राप्त होती है। यह स्वत प्रसूत वेदना जिसे वैयक्तिक अनुभूति

भी कहते है कवि हृदय पर अपना प्रभाव फैलाती हुई कवि को एक ऐसे दिव्य लोक का दर्शन कराती है जहॉ केवल सौन्दर्य ही सौन्दर्य है और तब कवि की यह अनुभूति कोयल की कूक के समान सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड मे वेदना की सृष्टि करती है।

डॉ० हजारीप्रसाद द्विवेदी ने स्वच्छन्दतावाद को निविड़ आवेग का नाम दिया है। स्वतःप्रसूत प्रेरणा अथवा कल्पना तथा आवेग दोनो एक दूसरे के पूरक है इन्हे एक दूसरे से अलग नही किया जाता सकता। हॉ यह अवश्य है कि कभी कल्पना का पलड़ा भारी होता है तो कभी आवेग का किन्तु एक की अनुपस्थिति मे दूसरा अपग है अपूर्ण है। यही दोनो रोमाटिक काव्य के जन्मदाता भी है।

डॉ० देवराज उपाध्याय ने रोमाटिक कविता को वैयक्तिक अनुभूति से प्रसूत माना है। इस सम्बन्ध मे उनका विचार है कि जब तक किसी भी भाव घटना अथवा दृश्य के प्रति कवि की व्यक्तिगत अनुभूति नही होगी तो वह कविता का सृजन नही कर सकेगा क्योंकि यही वैयक्तिक अनुभूति कवि के हृदय मे वेदना का सचार करती है और जब तक स्वय कवि के हृदय मे वेदना की अनुभूति नही होगी तो फिर प्रवाह निविड़ आवेग और भावो की गड़गड़ाहट भी किस प्रकार जन्म लेगी? कहॉ फिर हमे उस काव्य का दर्शन हो सकेग्ग कि जिसकी अभिव्यक्ति के लिए कवि को बाध्य होना पडता है। अत वैयक्तिक स्वातत्र्य अनुभूति भी रोमाटिक काव्य का एक आवश्यक तत्त्व है और आवेग क माध्यम से प्रकट होती है।

रोमाटिक कवि भी सामाजिक प्राणी है। अत उस पर भी सामाजिक परिवर्तन एव सामाजिक परिस्थितियो का पूर्ण प्रभाव पड़ता है। कवि मन कोमल एव भावुक होता है। अत अपने कोमल हृदय के कारण वह सामाजिक आवश्यकताओं व अपने नैतिक एव मौलिक कर्तव्यो को समझते हुए वह भावुक मन से हृदय की अनुभूतियो को बड़ी ही सुन्दरता से अपनी लेखनी मे डुबो देता है। उसके सृजन कार्य मे वैयक्तिक अनुभूति के साथ साथ उस युग की आत्मा भी बोलती है। कवि ही युग की आत्मा की धड़कन एव स्पन्दन की ध्वनि स्पष्ट रूप से सुन सकता है। अत वह अपनी कविता के माध्यम से तत्कालीन विचारधारा का सामूहिक रूप से प्रतिनिधित्व करता है। मेर विचार से इसे यदि सृजनात्मक प्रेरक शक्ति का नाम दिया जाए तो कुछ गलत नही है। अतीत की घटना पर आधारित काव्य मे उस तेज और ज्योति का कोई स्थान नही होता जो युगात्मक ध्वनि से दीप्त कवि की वाणी का श्रृगार होती है।

वस्तुतः आन्तरिक सौन्दर्य और आन्तरिक चेतना रोमाटिक काव्य का प्राण है। इसके अभाव मे कोई भी कविता रोमाटिक कविता के पद की अधिकारिणी नही हो सकती। इन्द्रियातीत काल्पनिक सौन्दर्य ही रोमाटिक काव्य की प्रमुख विशेषता है। यही विशेषता रोमाटिक काव्य और क्लासिकल काव्य मे विभेदीकरण भी करती है। रोमाटिक काव्य ऑखे मूँद कर आन्तरिक सासारिक सौन्दर्य का साक्षात्कार कराता है। काव्य का प्रमुख उद्देश्य ही पाठक के हृदय को आनन्दोद्रेक करना है किन्तु जब हृदय के भावो को सौन्दर्य के माध्यम से आनन्दोद्रेक किया जाय तो वहॉ परमानन्द के साथ-साथ आत्मसतुष्टि भी प्राप्त होती है। रोमाटिक काव्य मे सौन्दर्य अपने बहुत्व स्वरूप का प्रत्यक्षीकरण करते हुए भी एकत्व मे लीन रहता है।

आन्तरिक सौन्दर्य के साथ साथ आन्तरिक चेतना भी जिसे वैयक्तिकता कहते है रोमाटिक काव्य का प्राण तत्त्व है। जिस कविता मे आन्तरिक चेतना एव आत्मजागृति के भाव न हो वह कविता ही निर्जीव होती है। आत्मगौरव की प्रवृत्ति ही इसे आन्तरिक चेतना की ओर उन्मुख करती है। जिस काव्य के रसास्वादन से श्वास को गति न मिले जिस काव्य के रसास्वादन से प्राण स्पन्दित न हो तथा जिस काव्य के रसास्वादन से आत्मा आनन्दित न हो वह कविता रोमाटिक नही हो सकती। रोमाटिक काव्य ही वह काव्य है जिससे श्वास को गति मिलती है मन की धड़कने धक धक की आवाज करती है और कभी कभी तो यहाँ तक होता है कि साँस रोककर पाठक जिज्ञासा के साथ काव्य का रसास्वादन करता है तो शान्त वातावरण मे दिल की धड़कनो की आवाज़ इस प्रकार शान्ति भग करती है मानो शान्त एव स्थिर सागर मे किसी ने एक नन्हा सा ककड़ फेक उसमे हलचल पैदा कर दी हो। अतएव जिस काव्य मे भावो की गहराई और उच्चता होती है वह काव्य ही आत्मा को स्पन्दित कर सकता है।

रोमाटिक कविता का अर्थ है कृत्रिमता से परे सरलता सहजता एव स्वाभाविकता। स्वाभाविक और स्वत प्रसूत विचार उसी भाषा मे अभिव्यक्त होते है जो कि मनुष्य के लिए स्वाभाविक होती है। सरल एव सीधे शब्द ही पाठको के हृदय मे गहराई तक उतर सकते है। यही भाषा भावो की गहराई और भव्यता को पाठको के हृदय खण्ड से सयुक्त कर देने के लिए समर्थ हो सकती है वही दूसरी ओर भाषा की तड़क भड़क व कृत्रिमता पाठको के ध्यान को इधर उधर भटका देती है जिससे वर्ण्य विषय का सौन्दर्य नष्ट हो जाता है और फिर कविता का स्वरूप अधिक पानीवाले शर्बत के समान हो जाता है। अत रोमाटिक काव्य के लिए साधारण सुलभ तथा दैनिक प्रयोग की भाषा ही अपेक्षित है।

यथार्थवाद और स्वच्छन्दतावाद का जन्म-जन्मान्तर का साथ है। स्वच्छन्दतावाद असत्य कृत्रिमता एव झूठ का परस्पर विरोधी साहित्य है। स्वाभाविकता और यथार्थता तो रोमाटिक काव्य का सार है। विशुद्ध अनुकरण रोमाटिक काव्य मे त्याज्य है किन्तु काव्योचित अनुकरण तथा सत्यता रोमाटिक काव्य का प्राण है। प्रकृत वस्तु से साक्षात्कार के समय सत्य कवि के मानस पटल पर अकित हो जाता है तो उस समय ही कवि का सत्य से साक्षात् साक्षात्कार होता है। जब कवि का सत्य से साक्षात्कार होता है तभी उसके दिव्य ज्योति के नेत्र खुलते है।

प्रत्येक रोमाटिक कवि दार्शनिक होता है। जीवन दर्शन के गम्भीर दर्शनो को वह सदैव सुबोधतर रूप देने के प्रयत्न मे रहता है। एक दार्शनिक होने के नाते रोमाटिक कवि सृजन व्यापार और तद्गत मानसिक अवस्था तथा हृदय ९ी गहराई के उस बिन्दु तक पहुँचने की कोशिश करता है जहाँ से सृजन कार्य आरम्भ होता है।

रोमाटिक कवियो के काव्यो मे आध्यात्मिकता की झलक स्पष्ट दृष्टिगोचर होती है। रोमाटिक कवि प्रत्येक वस्तु को आध्यात्मिकता से मण्डित देखता है। उसके लिए ब्रह्माण्ड एव पिण्ड मे कोई अन्तर नही। वह स्थूल मे सूक्ष्म का दर्शन करता है तथा साथ ही विविध लीलाओं की डोर हिलाने वाले इस जगत् के सूत्रधार की खोज करता है।

आधुनिक कवि मनोवैज्ञानिक हो गया है। मनोवैज्ञानिक होने के कारण ही उसमे स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियाँ अधिक दृष्टिगोचर होती है। कहने का तात्पर्य यह है कि आधुनिक कवि मनोवैज्ञानिक होने

के साथ साथ स्वच्छन्दतावादी अधिक हो गया है इसी कारण आज कवि आलोचक भी हो गया है। आधुनिक मनोविज्ञान ने मनोविश्लेषण के द्वारा आलोचना को नूतन मार्ग दिखलाया है। आधुनिक मनोविज्ञान क अनुसार किसी भी कला या साहित्यिक कृति की उत्पत्ति कलाकार अथवा कवि की दमित प्रवृत्ति के कारण होती है। दमित वृत्तियो का ज्ञान स्रष्टा को होता नही है क्योकि इनमे से कुछ वर्णनीय तो कुछ गोपनीय होती है। Climate Country Environment के साथ दमित प्रवृत्तियॉ काव्य सृजन का स्रोत है। यही कारण है कि महान् से महान् कवि की कविता का प्रेरणास्रोत कल्पना है जिसमे अधिकतर नारियो की प्रेयसी अथवा अर्धांगिनी के रूप मे कल्पना की गई है। यही कल्पना तत्व रोमाटिक कविता का प्रेरणास्रोत है। अत स्वच्छन्दतावादी कवि अत्यधिक मनोवैज्ञानिक होता है। वैसे भी मनुष्य के जीवन के प्रत्येक पहलू से मनोविज्ञान का सम्बन्ध होता है। इसी प्रकार रोमाटिक कविता से भी मनोविज्ञान का प्रगाढ़ सम्बन्ध है। कवि की कोई भी रचना अकस्मात् घटना नही होती उसके पीछे नियामक कारण होते है। कवि प्रवृत्ति व्यक्ति का यदि किसी घटना अथवा प्रकृत वस्तु से साक्षात्कार होता है वह घटना अचल प्रकृत वस्तु कवि को बरबस ही अपनी ओर आकर्षित करती है किन्तु प्रतिकूल भावो और प्रवृत्तियो के कारण उस समय कवि मन मे भाव जो सुसुप्त अवस्था मे सदैव विद्यमान रहते है नही जागते। फलत मानसिक व्यापार कार्य नही हो पाता जिसके कारण कवि की सृजनात्मक प्रवृत्ति प्रेरित नही होती वही दूसरी ओर जब कवि शान्त क्षणो मे अथवा फुरसत के क्षणो मे बैठा होता है तो कल्पना क्रियाशील हो उठती है। वह घटना अथवा प्रकृत वस्तु कवि के अचेतन मस्तिष्क से निकलकर चेतन मस्तिष्क मे प्रवेश कर अपने को कवि मस्तिष्क की स्मृति पटल पर अकित कर देती है। कवि की स्मृति पटल पर घटनाक्रम अकित होते है मानसिक व्यापार प्रारम्भ हो जाता है और अब बारी आती है सोये हुए भावो के जागने की। अनुकूल भावो के सम्पर्क म आते ही कल्पना को बल मिलने लगता है और वह प्रवाह व आवग का सहारा पाकर कवि मन पर घात प्रतिघात करती है और वेदना का रूप धारण करती है। वेदना आह बनकर अश्रु मार्ग से कवि की रचना के रूप मे अभिव्यक्ति को प्राप्त होती है। यह सब कार्य इतने सहज और स्वाभाविक ढग से होते है कि कवि को इसका तनिक भी आभास नही होता और वह वैयक्तिक अनुभूति को अपनी लेखनी के माध्यम से स्वत ही बिना किसी परिश्रम के अभिव्यक्त करता चला जाता है।

इस प्रकार प्रत्येक रोमाटिक कवि पहले मनोवैज्ञानिक होता है फिर कवि अथवा कलाकार।

डॉ० देवराज उपाध्याय ने मनोविश्लेषण के द्वारा स्वच्छन्दतावादी समीक्षा को एक नवीन पृष्ठभूमि दी है। आगे की स्वच्छन्दतावादी समीक्षा के लिए नवीन मार्ग दिखाकर स्वच्छन्दतावादी समीक्षा के विकास को अद्यतन रूप दिया है। उनकी स्वच्छन्दतावादी समीक्षा दृष्टि सर्वथा मनोवैज्ञानिक है। आपने स्वच्छन्दतावादी समीक्षा को मनोवैज्ञानिक परिप्रेक्ष्य मे मनोविश्लेषणात्मक सिद्धान्तो के मध्य व्यापक फलक पर विश्लेषित किया है। हिन्दी-समीक्षा ससार की स्वच्छन्दतावादी समीक्षा को विकासात्मक नवीन आयाम देने के कारण हिन्दी समीक्षा ससार **डॉ० उपाध्याय** का सदैव ऋणी रहेगा तथा स्वच्छन्दतावादी समीक्षा के क्षेत्र मे महत्वपूर्ण योगदान के लिए हिन्दी साहित्य क्षेत्र मे ही नही आपका नाम विश्व-साहित्य

मे भी स्वर्णाक्षरो मे लिखा जायगा। इसका कारण यह है कि स्वच्छन्दतावादी अवधारणा अन्तर्राष्ट्रीय काव्य अवधारणा है और इस चितन के साथ समस्त विश्व का साहित्य कही-न-कही जुड़ा होता है क्योंकि स्वच्छन्दतावादी चेतना मानवीय अनुभूतियो की सहज अभिव्यक्ति होती है। इसमे परम्परा एव रूढ़ियो से मुक्ति की आकाक्षा भी होती है। वस्तुत जीवन एव जगत् की सहजता मानवीयता इहलौकिकता ही स्वच्छन्दतावादी काव्य की आत्मा है। यही कारण है कि स्वच्छन्दतावादी चेतना वैश्विक-ब्रह्माण्ड चेतना की सहजावस्था का ही दूसरा नाम है।

परिशिष्ट

मेरे मित्र श्री देवराज उपाध्याय जी ने अग्रेजी साहित्य के रोमाटिसिज्म नामक विशिष्ट साहित्यिक भावधारा के सम्बन्ध मे यह पुस्तक लिखकर हिन्दी को एक ऐसी वस्तु दी है जिसकी आवश्यकता बहुत दिनो से अनुभव की जा रही थी। अग्रेजी के इस विशेष साहित्याग की जानकारी नाना दृष्टियो से आवश्यक है। एक तो वैसे ही हिन्दी जो इस अत्यन्त समृद्ध सास्कृतिक परम्परा वाले महान देश की केद्रीय भाषा है मे ससार की उन समस्त शक्तिशाली भावधाराओं की गभीर आलोचना होनी चाहिए जो ससार के जनसमूह को निविड़ भाव से प्रभावित कर रही है या कर चुकी है फिर रोमाटिसिज्म तो ऐसी भावधारा है जिसका प्रत्यक्ष प्रभाव हमारे साहित्य पर पड़ा है। इसलिए इस विषय पर कोई अच्छी परिचयात्मक पुस्तक का न होना खटकने वाली बात थी। श्री देवराज जी के प्रयत्न से अब इस विषय पर यह सुन्दर पुस्तक प्रस्तुत हो गई है। ज्यो-ज्यो हमारा चित्त उन्मुक्त होता जायेगा, त्यो-त्यो ससार की अन्य समृद्ध भावधाराओं का अध्ययन भी हमारी भाषा मे उपस्थित किया जायेगा।

रोमाटिसिज्म क्या है?

उन्नीसवीं शताब्दी के आरम्भ मे अग्रेजी कवियो मे एक अद्‌भुत उन्मुक्त भावधारा प्रबल होकर प्रकट हुई। इसमे परिपाटी विहित और परम्परामुक्त रस दृष्टि के स्थान पर कवि की आत्मानुभूति आवेग धारा और कल्पना का प्राधान्य था। इस विशिष्ट दृष्टिभगी की प्रधानता को ध्यान मे रखकर कुछ विद्वानो ने हिन्दी मे इसे स्वच्छन्दतावाद कहा है। परन्तु यह शब्द उस सम्पूर्ण साहित्य की आत्मा को प्रकट करने मे समर्थ नही है। रोमाटिक साहित्य वस्तुत जीवन के उस आवेगमय पहलू पर जोर देने के कारण अपना वह रूप धारण कर सका है जो कल्पना प्रवण अन्तर्दृष्टि द्वारा चालित किवा प्रेरित होता है और स्वय भी इस प्रकार की अन्तर्दृष्टि को चालित और प्रेरित करता रहता है। क्लासिकल या परम्परा समर्थित साहित्य मे परिपाटी विहित रसज्ञता या रस निष्पत्ति पर जोर दिया गया होता है इसलिए उनमे उस अनासक्त सौन्दर्य ग्रहिणी दृष्टि का प्राधान्य रहता है जो अधिकाधिक मात्रा मे सामान्य होती है विशेष नही। जब कोई सहृदय सौन्दर्य और रस बोध के सामान्य माग को स्वीकार कर लेता है तो उसका ध्यान सामान्य भाव से निर्धारित सौन्दर्य के टाइप और नीति तथा सदाचार के परिपाटी विहित नियमो को ही अगीकार करता है। व्यक्ति की स्वतत्र अनुभूति तो कल्पना और आवेग के माध्यम से ही प्रकट होती है और जब वह प्रकट होती है तो नीति और सदाचार के परिपाटी विहित मानो से सब समय उसका सामन्जस्य ही नही होता। कई बार उसे ऊपर सतह के सदाचार के विरुद्ध विद्रोह करना पड़ता है। परन्तु यह विद्रोह उसका मूल स्वर नही है। हिन्दी साहित्य के छायावादी उत्थान के समय भी कई प्रकार की उन्मुक्त आवेग प्रधान और कल्पना प्रवण अन्तर्दृष्टि दिखी थी। कई कवियो मे उसका विद्रोहमूलक रूप ही प्रधान हो उठा। परन्तु यह भलीभाँति समझ लेना चाहिए कि विद्रोह केवल विशेष प्रकार की वैयक्तिक दृष्टिभगी के साथ परिपाटी विहित रसास्वादन का सामजस्य न हो सकने का बाह्यरूप मात्र है। यदि यही अन्त तक कवि का मुख्य वक्तव्य बनी रह जाय तो कवि सफल नही होता। परन्तु जो कवि उसका वास्तविक मूल्य समझता है वह स्थायी और अमर साहित्य का निर्माण करता है। उन्नीसवी शताब्दी के आरम्भ के अग्रेजी के जिन साहित्यकारो मे उन्मुक्त स्वार्थी दृष्टिभगी विकसित हुई थी वे विद्रोही अवश्य थे परन्तु वह विद्रोह उनकी नवीन भावधारा का एक बाहरीन और आवश्यक रूप भरा था। केवल परम्परा प्राप्त साहित्य का विरोध करने के लिए या

परिपाटी विहित रसज्ञता का प्रत्याख्यान करने के लिए यह साहित्य नही रचा गया था। इसीलिए उसे स्वच्छन्दतावाद कहना उसके एक पहलू को ही अधिक बढ़ाकर कहना है।

रोमाटिक साहित्य की वास्तविक उत्सभूमि वह मानसिक गठन है जिनमे कल्पना के अविरल प्रवाह से धन सश्लिष्ट निविड़ आवेग की ही प्रधानता होती है। इस प्रकार कल्पना का अविरल प्रवाह और निविड़ आवेग वे दो निरन्तर घनीभूत मानसिक वृत्तियाँ ही इस व्यक्तित्व प्रधान साहित्यिक रूप की प्रधान जननी है परन्तु यह नही समझना चाहिए कि ये दोनो एक दूसरे से अलग रहकर काम करती है। वस्तुत इनका पृथक् पृथक् नाम देना और स्वरूप बताना केवल आलोचना की सुविधा के लिए परिकल्पित है काव्य की अभिव्यक्ति मे ये दोनो वृत्तियाँ वस्तुत एक दूसरे से इस तरह गुथी रहती है कि उनको अलग करना कठिन होता है केवल सहृदय इतना अनुभव कर सकता है कि कहा एक की मात्रा अधिक है और दूसरी की कम कहा से करीब करीब समान है और कहा एक ने दूसरी को दबोच लिया है। पग्न्तु चित की उन्मुक्तता केवल दो मनोवृत्तियो की प्रधानता का समानान्तर नही है। यह केवल काव्य के क्षेत्र मे ही अपने आपको प्रकाशित नही करती जीवन के विविध क्षेत्रो मे उसकी लीला विराजने लगती है। तत्वज्ञ पडितो ने उस युग के इग्लैण्ड के इतिहास से दिखाया है कि यह चित्रगत उन्मुक्तता सर्वत्र अपना प्रभाव विस्तार कर रही थी। विचार के क्षेत्र मे उसने परिपाटी विहित नियमो को अस्वीकार किया। फ्रेंच क्राति ने उन दिनो यहाँ के जन चित्त को तेजी से आन्दोलित किया था वैज्ञानिक आविष्कारो यातायात के नये साधनो और इन सबके परिणाम रूप मे आत्मप्रकाश करने वाली व्यावसायिक क्राति ने मनुष्य मे नई चेतना को जागृत किया। इस युग के यूरोप मे एक अद्भूत विरोधाभास है। मनुष्य ने धर्म पर सदेह किया ईश्वर पर सन्देह किया परम्परा समर्थिक नैतिक दृष्टिभगी पर सदेह किया परिपाटी विहित रसज्ञता पर भी सन्देह किया और फिर भी यह युग विश्वास का युग है क्योंकि मनुष्य ने अपने ऊपर सन्देह नही किया। उसने मनुष्य की महिमा पर दृढ़ता के साथ आस्था जमाए रखी। मनुष्य सब कुछ कर सकता है वह प्रकृति के अजेय दुर्ग पर अपनी विजय पताका फहरा सकता है इस विचार ने मनुष्य के चित्त मे अपूर्व आत्म विश्वास का सचार किया।

व्यावसायिक क्राति के कारण राजनीतिक और आर्थिक शक्ति धीरे धीरे सामन्तवर्ग के हाथ से निकल व्यवसायी वर्ग के हाथ मे आ गई। जिन दिनो इग्लैण्ड मे सामन्तशाही के विरुद्ध तीव्र आन्दोलन हुआ था उन दिनो पूँजीवाद नया शिशु था साधारण प्रज्ञा के स्वार्थों के साथ उसका विरोध नही था। साधारण जनता ने उन दिनो पूँजीवाद के नये पुरस्कर्ताओं का साथ दिया था। नये वैज्ञानिक साधनो के उपयोग से जो नई नागरिक सभ्यता उत्पन्न हुई उसने कुछ ऐसी परिस्थिति उत्पन्न कर दी थी कि अनायास ही परम्परा की कड़ियाँ टूटती गई। शहर की भीड़ भाड़ ने पुराने सदाचार के नियमो को शिथिल कर दिया, शिक्षा प्रचार राज्य का कर्तव्य मान लिया गया और वैज्ञानिक शोधो के साथ मिली हुई नई शिक्षा व्यवस्था ने एक ही साथ वशगत प्रतिष्ठा और धार्मिक शासन के साथ विद्रोह किया। इस प्रकार परिस्थितियाँ वैयक्तिक स्वाधीनता के अनुकूल थी आडमस्मिथ ने सुझाया कि किसी राष्ट्र की सम्पत्ति उसके व्यक्तियो की योग्यता और स्वाधीनता पर ही निर्भर है। व्यावसायिक क्राति की उथल पुथल ने कुलीन पुरुष के इस दावे को निर्मूल सिद्ध किया कि कुल विशेष भगवान की धारा मे स्नान करके पुरातन ने भी नया रूप ले लिया है। इस सद्य स्नाता काव्य-लक्ष्मी का प्रत्यग-मजन विशेष विविक्त-क्राति सचमुच दर्शनीय है। वर्डस्वर्थ शेली कीट्स आदि कवियो ने जिस मोहक सौन्दर्य जगत् का निर्माण किया है वह अपूर्व है। उसने हमारे देश के साहित्य को भी प्रभावित किया है। उसकी

चर्चा बहुत वाछनीय है।

मुझे अत्यन्त प्रसन्नता है कि प्रो० देवराज ने यह उत्तम कार्य कर दिया है। इसके लिए उन्हे कितना ही परिश्रम करना पड़ा होगा, यह सहृदय मात्र अनुभव कर सकते है। पुस्तक मे कही उपाध्याय जी ने अग्रेजी शब्द और वाक्यो का अनुवाद किये बिना ही छोड़ दिया है। मुझे लगता है कि इससे केवल हिन्दी जानने वाले लोगो को थोड़ी असुविधा होगी। परन्तु अधिकाश स्थलो मे उन्होने अग्रेजी पारिभाषिक शब्दो के प्रति शब्द बनाये है। इसका गढ़ना कितना दुष्कर कार्य है यह बात भुक्तभोगी ही जान सकते है। उन्होने इस साहित्य के सब पहलुओं पर विस्तृत विचार किया है मेरा विश्वास है कि हिन्दी के साहित्यालोचन के क्षेत्र मे इस पुस्तक का हार्दिक स्वागत होगा। इससे उन अग्रेजी साहित्य के विद्यार्थियो को भी लाभ होगा जो अपनी मातृभाषा मे उस साहित्य की विशेषताओं के समझने का साधन और सुयोग नही पाया करते। पडित देवराज जी जो कुछ लिखते है वह सोच-समझकर और विचार कर लिखा करते है। हिन्दी के नये आलोचको मे वे विशिष्ट स्थान के अधिकारी है। मुझे पूर्ण आशा है कि वे भविष्य मे हिन्दी साहित्य को और भी नई विचारधाराओं की पुस्तके देते रहेगे और मातृभाषा के भण्डार को समृद्ध बनाते रहेगे। तथास्तु।

काशी विश्वविद्यालय

—हजारी प्रसाद

अक्षय तृतीया स० २००८

ग्रन्थानुक्रमणिका

सहायक ग्रन्थो की सूची

अमृत राय नयी समीक्षा हस प्रकाशन इलाहाबाद, 1950

डॉ० अजब सिंह आधुनिक काव्य की स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियाँ, विश्वविद्यालय प्रकाशन चौक, वाराणसी, प्र०स०, 1975 ई०

स्वच्छन्दतावाद छायावाद विश्वविद्यालय प्रकाशन चौक वाराणसी, प्र० स०, 1975 ई०

नवस्वच्छन्दतावाद विश्वविद्यालय प्रकाशन, चौक, वाराणसी, प्र० स० 1987 ई०

डॉ० अम्बादत्त पाण्डेय आधुनिकता और आलोचना, प्र० स० 1985 ई०, प्रेम प्रकाशन, दिल्ली

डॉ० इन्द्रनाथ मदान आधुनिक कविता का मूल्याकन हिन्दी भवन जालन्धर और इलाहाबाद, प्र० स० मार्च 1962

आधुनिकता और हिन्दी आलोचना राधाकृष्ण प्रकाशन, दरियागज, दिल्ली-6, प्र० स० 197

डॉ० कुमार विमल नयी कविता नयी आलोचना और कला भारती भवन, पटना प्र० स० 1963

कला विवेचन, भारती भवन, पटना, प्र० स०, 1968

-काव्यानुशीलन आधुनिक-अत्याधुनिक, ज्ञानपीठ प्रा० लि० पटना-4

आधुनिक हिन्दी काव्य अर्चना प्रकाशन, आरा, बिहार, प्र० स०, 1964

डॉ० केसरीनारायण शुक्ल आधुनिक काव्यधारा का सास्कृतिक स्रोत सरस्वती मदिर काशी, प्र० स० बसन्त पचमी, 2004

डॉ० कृष्णवल्लभ जोशी नव्य हिन्दी समीक्षा, ग्रन्थम् रामबाग, कानपुर प्र० स० 1966

डॉ० जगदीश गुप्त स्वच्छन्दतावादी काव्यधारा का दार्शनिक विवेचन 1966 आगरा प्रकाशन प्रथम सस्करण 1977

देवराहा दिव्य दर्शन सीवान सत्सग समिति, प्र० स० 1984

डॉ० देवराज उपाध्याय रोमाटिक साहित्याशास्त्र आत्माराम एण्ड सन्स दिल्ली-6, प्रथम सस्करण 1951

विचार के प्रवाह, मगल प्रकाशन, जयपुर, प्रथम सस्करण, 1958

ग्रन्थावली भाग 2 अनुराग प्रकाशन, इलाहाबाद प्रथम सस्करण 1982

-मनोवृत्तानुवर्ती आख्यान रचना वासुदेव प्रकाशन भोजपुर (बिहार) प्र० स० 1977।

कथा साहित्य के मनोवैज्ञानिक समीक्षा सिद्धान्त, सौभाग्य प्रकाशन इलाहाबाद प्र० स० 197

डॉ० दीनानाथ सिह काव्य प्रवृत्तियॉ भारतीय और पाश्चात्य, विजय प्रकाशन सुडिया वाराणसी, प्र० स० 1989

– छायावादोत्तर प्रबन्ध शिल्प, विजय प्रकाशन सुडिया वाराणसी, प्र० स० 1989

डॉ० देवराज आधुनिक समीक्षा, राजपाल एण्ड सन्स दिल्ली-6 प्र० स० 1954।

– छायावाद का पतन वाणी मन्दिर प्रेस छपरा प्र० स० 1947

डॉ० धीरेन्द्र वर्मा हिन्दी साहित्य कोश भाग 2 नामवाची शब्दावली ज्ञानमण्डल लिमिटेड वाराणसी प्र० स० सम्वत् 2020

डॉ० नगेन्द्र आधुनिक हिन्दी कविता की मुख्य प्रवृत्तियाँ नेशनल पब्लिशिग हाउस दिल्ली 7 तृ० स० अगस्त 1966

– आस्था के चरण, नेशनल पब्लिशिग हाउस दिल्ली प्र० स०, 1968

– विचार और विश्लेषण नेशनल पब्लिशिग हाउस दिल्ली द्वितीय सस्करण 1961

– विचार और अनुभूति नेशनल पब्लिशिग हाउस दिल्ली शरद पूर्णिमा 1951

आ० नन्ददुलारे वाजपेयी आधुनिक साहित्य भारती भण्डार लीडर प्रेस इलाहाबाद सस्करण स० 2013

– आधुनिक काव्य रचना और विचार साथी प्रकाशन सागर चतुर्थ सस्करण 1969

– नया साहित्य नये प्रश्न विद्यामदिर ब्रह्मनाला बनारस 1949

– हिन्दी साहित्य बीसवी शताब्दी लोकभारती प्रकाशन इलाहाबाद सस्करण, 1970

– नयी कविता मैकमिलन कम्पनी ऑफ इण्डिया लि० नई दिल्ली, प्रथम सस्करण।

डॉ० नामवर सिह आधुनिक साहित्य की प्रवृत्तियाँ लोकभारती प्रकाशन 15 ए महात्मा गाधी मार्ग इलाहाबाद 1 चतुर्थ सस्करण 1968

इतिहास और आलोचना साहित्य प्रकाशन 2डी, मिण्टोरोड इलाहाबाद फरवरी 1962

– कविता के नये प्रतिमान राजकमल प्रकाशन, दिल्ली 6 प्रथम सस्करण 1968।

–छायावाद राजकमल प्रकाशन, दिल्ली 6, द्वि० स०

डॉ० नन्दकिशोर नवल हिन्दी आलोचना का विकास राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली, प्र०स० 1981

डॉ० परशुराम शुक्ल विरही' आधुनिक हिन्दी काव्य मे यथार्थवाद ग्रन्थम राम बाग, कानपुर 1967

डॉ० प्रेमशकर हिन्दी स्वच्छन्दतावादी काव्य मध्य प्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी मालवीय नगर भोपाल प्र० स० 1974

– सृजन और समीक्षा प्रकाशन सस्थान 4715/21 दयानन्द मार्ग दरियागज नई दिल्ली प्र० स० 1987

प्रकाशचन्द्र गुप्त नया हिन्दी साहित्य एक भूमिका सरस्वती प्रेस, बनारस, 1953

डॉ० पी० आदेश्वर राव स्वच्छन्दतावादी काव्य का तुलनात्मक अध्ययन, प्रगति प्रकाशन, बैतूल बिल्डिग आगरा सस्करण 1972

डॉ० फूलबिहारी शर्मा हिन्दी की स्वच्छन्द समीक्षा, तारामण्डल, अलीगढ़, 1982

डॉ० बच्चन सिंह आलोचक और आलोचना प्रकाशन नेशनल पब्लिशिग हाउस 23 दरियागज, नयी दिल्ली 18 मार्च, 1988

डॉ० भागवतस्वरूप मिश्र हिन्दी आलोचना उद्भव और विकास, साहित्य सदन, देहरादून, स० तृतीय, 1972

डॉ० मिथलेश सिंह स्वच्छन्दतावादी समीक्षा नये आयाम, अतुल प्रकाशन, ब्रह्मनगर कानपुर प्र० स० 1985

डॉ० मक्खन लाल शर्मा आधुनिक हिन्दी आलोचना एक अध्ययन साहित्य प्रकाशन मालीवाड़ा दिल्ली स० 1968

डॉ० रामेश्वर लाल खण्डेलवाल आधुनिक हिन्दी कविता मे प्रेम और सौन्दर्य नेशनल पब्लिशिग हाउस दरियागज, दिल्ली, प्र० स० 1958

– जयशकर वस्तु और कला नेशनल पब्लिशिग हाउस दिल्ली प्र० स० 1968।

– स० हिन्दी आलोचना के आधार स्तम्भ, राधाकृष्ण प्रकाशन दिल्ली 1966।

– समीक्षा के वातायन नटराज पब्लिशिग हाउस होली मोहल्ला करनाल सस्करण 1983।

श्री रामधारी सिह दिनकर काव्य की भूमिका उदयाचल आर्यकुमार रोड, पटना 4, प्र० स० 1958

– चक्रवाल उदयाचल आर्यकुमार रोड पटना–4 प्रथम सस्करण।

– च्शुद्ध कविता की खोज उदयाचल, राजेन्द्रनगर पटना-4, प्रथम सस्करण सितम्बर 1966।

आ० रामचद्र शुक्ल हिन्दी साहित्य का इतिहास, काशी नागरी प्रचारिणी सभा आठवॉ सस्करण।

डॉ० रामविलास शर्मा निराला की साहित्य साधना, द्वितीय खण्ड राजकमल प्रकाशन दिल्ली 6 प्र० सस्करण।

डॉ० रामचद्र प्रसाद आधुनिक हिन्दी आलोचना पर पाश्चात्य प्रभाव लोकभारती प्रकाशन 15 ए महात्मा गॉधी मार्ग इलाहाबाद 1 द्वारा प्रकाशित प्र० स० 1973

डॉ० राजकिशोर कक्कड़ आधुनिक हिन्दी साहित्य मे आलोचना का विकास एस० चद्र एण्ड कम्पनी रामनगर नयी दिल्ली-4 14 नवम्बर 69

डॉ० रामचद्र तिवारी हिन्दी का गद्य साहित्य विश्वविद्यालय प्रकाशन वाराणसी द्वितीय सस्करण, 1968

डॉ० रामदरश मिश्र हिन्दी समीक्षा स्वरूप और सदर्भ एमको प्रिन्टर्स दिल्ली 32 प्रथम सस्करण 1974

डॉ० रागेय राघव आधुनिक हिन्दी कविता मे प्रेम और शृगार राजपाल एण्ड सस दिल्ली प्र० स० 1961

डा० रघुवश साहित्य का नया परिप्रेक्ष्य भारतीय ज्ञानपीठ काशी प्रथम सस्करण 1963

डॉ० राजेन्द्र मिश्र आधुनिक हिन्दी काव्य ग्रन्थम कानपुर फरवरी 1966

डॉ० राम अवध द्विवेदी अग्रेजी भाषा और साहित्य प्रकाशन शाखा सूचना विभाग उत्तर प्रदेश

प्र० स० 1960

डॉ० रवीन्द्र सहाय वर्मा पाश्चात्य साहित्यालोचन और हिन्दी पर उसका प्रभाव विश्वविद्यालय प्रकाशन गोरखपुर 1960

डॉ० लक्ष्मीनारायण सुधाशु हिन्दी साहित्य का वृहत् इतिहास त्रयोदश भाग नागरी प्रचारिणी सभा काशी 3 नवम्बर 1989

डॉ० वेकट शर्मा आधुनिक हिन्दी साहित्य मे समालोचना का विकास कश्मीरी गेट दिल्ली प्र० स० 1962

डॉ० विनय मोहन शर्मा साहित्यान्वेषण साहित्य सदन देहरादून प्रथम सस्करण 1969

विश्वम्भर मानव आधुनिक कवि लोकभारती प्रकाशन 15 ए महात्मा गान्धी मार्ग इलाहाबाद। द्वि० परिवर्तित स० 1965

नयी कविता नये कवि लोक भारती प्रकाशन 15 ए महात्मा गान्धी मार्ग इलाहाबाद 1 1 जनवरी 1968

डॉ० शिवकरण सिह स्वच्छन्दतावाद एव छायावाद का तुलनात्मक अध्ययन किताब महल इलाहाबाद प्रथम सस्करण

डॉ० शिवकुमार शाण्डिल्य सर्जनात्मक गद्यभाषा और काव्य भाषा मगला प्रकाशन नई दिल्ली 22 1998

डॉ०श्यामसुन्दर दास साहित्यालोचन इण्डियन प्रेस प्राइवेट लिमिटेड इलाहाबाद तेरहवी आवृत्ति स० 2016

डॉ० शिवदान सिंह चौहान आलो चना के सिद्धान्त राजकमल प्रकाशन दिल्ली 1960
साहित्यानुशीलन आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली-6 1955

डॉ० शिवप्रसाद सिह आधुनिक परिवेश और नवलेखन लोकभारती प्रकाशन इलाहाबाद 1970

डॉ० सतोषकुमार तिवारी छायावादी काव्य की प्रगतिशील चेतना भारतीय ग्रन्थ निकेतन 133 लाजपतराय मार्केट दिल्ली 110006

समीक्षा ठाकुर सकलन सपादन कहना न होगा एक दशक की बातचीत नामवर सिह के साथ वाणी प्रकाशन, दरियागज दिल्ली प्र० स० 1994

श्री सुमित्रानन्दन पत पल्लव, राजकमल प्रकाशन दिल्ली आठवॉ स० 1967

– आधुनिक कवि, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग सातवाँ सस्करण।

सुलेख शर्मा काव्य शिल्प के आयाम आदर्श साहित्य प्रकाशन दिल्ली 7, प्र० स० 1971

डॉ० सुरेशचद्र गुप्त आधुनिक हिन्दी कवियो के काव्य सिद्धान्त हिन्दी साहित्य ससार दिल्ली 6 प्र० स० 1960

सिद्धेश्वर प्रसाद छायावादोत्तर काव्य नेशनल पब्लिशिग हाउस दिल्ली 1966

डॉ० हजारीप्रसाद द्विवेदी हिन्दी साहित्य, उसका उद्भव और विकास उत्तरचद एण्ड सन्स देहली 1955

डॉ० हौसिलाप्रसाद सिह प्रगतिशील हिन्दी आलोचना की रचना-प्रक्रिया, विश्वविद्यालय प्रकाशन वाराणसी 1 प्र० स०

डॉ० हरिश्चद्र वर्मा कवि तरुण का काव्य-स मार नेशनल पब्लिशिग हाउस नयी दिल्ली प्र० स० 1994

डॉ० त्रिभुवन सिंह आधुनिक हिन्दी कविता की स्वच्छन्द धारा हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय वाराणसी 1 द्वि० स०

पत्र-पत्रिकाएँ

अवन्तिका काव्यालोचनाक, जनवरी 1954, नवम्बर, 1956 अप्रैल, 1956

आलोचना जनवरी 1953 दिसम्बर 1970 मार्च 1971 दिसम्बर 1966 अप्रैल-जून 1973।

ज्योत्स्ना पटना, नवम्बर 1985, अगस्त 1987 जुलाई 1988 अप्रैल 1991

नई धारा पटना जून 1970, फरवरी मार्च, 1989

नागरी पत्रिका, अगस्त दिसम्बर, 1975 मार्च-अप्रैल 1975 जून-जुलाई, 1975 निरन्तर वर्ष 1, अक 15 16

सभावना शोध तत्र विशेषाक, वर्ष 3, अक 5 6

सन्मार्ग, दैनिक पत्र कलकत्ता, 22 अगस्त 1976

प्रकर, दिल्ली, 8 जून 1988

पूर्वग्रह 34 सितम्बर-अक्टूबर 1979

युगसाक्षी लखनऊ वर्ष 8 अक 3, जुलाई सितम्बर, 1994

सरस्वती, जून 1921

साप्ताहिक हिन्दुस्तान, 10 मार्च, 1968, 10 फरवरी, 1974

धर्मयुग, 6 अगस्त, 1967 13 अगस्त, 1967

ज्ञानपीठ पत्रिका जून, 1969

श्री देवराहा बाबा दिव्य आलोक देवराहा दिव्य प्रकाशन, श्री देवरहा बाबा समाधि स्थल दिव्य मचान (वृन्दावन), गुरुपूर्णिमा, 1995

ENGLISH BOOKS

1 Aesthetics and Poetics **Yuri Bara Bash** Moscow 1977

2 A History of Modern Criticism (The Romantic Age) **Rene Wellec** London 1961

3 Biographi a Literaria **S T Coleridge** London 1948

4 Concept of Criticism **Rene Wellec** Yale University Press London 1965

5 Lyrical Ballads **Ed R L Brettons, A R Jones** 1963 The Edition of 1798 & 1800

6 Romantic Image **Frank Kermode, Kegan Paul,** London 1957

7 Romanticism Reconsidered **Edited by Northrop frye,** Columbia University Press U S A 1963

8 Romanticism in Perspective **Lilan, R Furst, Macmillan,** London New York 1969

9 Romance and Realism A Study in English Bourgeois Literature **By Chirostopher Caudwell,**

10 The Romantic Imagination **C M Bowra** Oxford University Press London 1961

11 The Mirror and the Lamp **M H Abrams** Oxford University press London 1953

12 Imagination **E J Furlong George,** Allen & Unwin N Y 1961

ENGLISH JOURNALS AND MAGAZINES

Studies in Romanticism Editor W H Stevenson

Volume 12 No 1 Winter 1973

Volume 12 No 2 Spring 1973

Volume 12 No 3 Summer 1973

Volume 12 No 4 Fall 1973

Volume 17 No 4 Fall 1978

Volume 17 No 3 Summer 1978

Volume 19 No 1 Spring 1980

Volume 21 No 4 Winter 1982

The Twentieth Century Literature Volume 24 Summer No 2 1978